हिमाचल प्रदेश
की
लोक कथाएँ

हिमाचल प्रदेश
की
लोक कथाएं

सम्पादक
सुदर्शन वशिष्ठ

सम्पादन-प्रकाशन
डॉ॰ कर्म सिंह
गिरिजा शर्मा, देवराज शर्मा

प्रकाशक
हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी
शिमला-171001

संस्कृति का संरक्षण

सुदर्शन वशिष्ठ
सचिव हिमाचल कला, संस्कृति भाषा अकादमी

लोक कथा का जन्म मानव सभ्यता के साथ हुआ। मां के दूध के साथ जो बालक को मिला, जन्मघुट्टी के साथ जो पिलाया गया, बचपन के साथ जो पला, वह लोककथा है। लोककथा वह है जो बूढ़े ने बालक को सुनाई, युवक को सुनाई और जो बूढ़े ने बूढ़े को सुनाई। लोककथा बालक की है, युवक की है, वृद्ध की है। लोककथा का उद्‌भव उतना ही पुराना है जितना मानव सभ्यता का।

सृष्टि का पहला साहित्यकार लोककथाकार ही रहा होगा। सर्दियों की लम्बी रातों और जलते अलाव ने इसे बहुत समय से जिन्दा रखा है। हमारी अधिकांश लोककथायें "और अंत में सब सुखपूर्वक रहने लगे" के सुखद आदर्श पर आधारित हैं। कथानायक द्वारा संघर्ष और अन्त में विजय यही मूलमंत्र रहा है। हमारी ही नहीं विश्व की लोककथाओं में भी यही तत्व मिलते हैं। असत्य की सत्य पर विजय, सरलता, सहृदयता की छल-प्रपंच पर विजय सहज देखने-सुनने को मिलती है।

आज के यान्त्रिक युग में यदि किसी चीज का पतन हुआ है तो यह संस्कृति है। आज अलाव की जगह हीटर जगा। नानी-दादी की कथाओं की जगह ट्रांजिस्टर, टेलीविजन और अब केबल का जादू सिर चढ़कर बोलने लगा है। यह प्रसार पहाड़ी दर पहाड़ी फैल रहा है। पर्वत दर पर्वत फैल रही नई संस्कृति हमारी वर्षों से रक्षित संस्कृति को राख बना रही है। कुछ समय बाद यदि किन्हीं दुर्गम कंदराओं में बची भी रही तो कोई संस्कृतिप्रेमी वहां पहुंच न पायेगा। ऐसी स्थिति में इसका

संरक्षण आवश्यक हो जाता है।

सभ्यता तो परिवर्तनशील है। परिवर्तन ही इसका धर्म है। आज की संस्कृति, जो दैत्याकार होती जा रही है, इसे दबाया नहीं जा सकता।

वर्तमान परिस्थितियों में संस्कृति का संग्रहण ही इसका संरक्षण है। संस्कृति का संग्रहण एक पुनीत कार्य है।

वस्तुतः संस्कृति के अनुसंधान में प्रथम सोपान संग्रह का ही है। संस्कृति को ज्यों का त्यों उतार लेना, छायाकार की तरह, बिना किसी पूर्वाग्रह से उतना आसान नहीं है। इसके लिए संस्कृतिप्रेमी के पास कैमरे की आंख चाहिए। कैमरा, जो बेजान है किन्तु गुणधर्मा और कर्मधर्मा भी है।

अकादमी द्वारा अब तक कथा सरवरी भाग-1 व 2 तथा जनजातीय लोककथा का संग्रह 'चन्द्रभागा' नाम से निकाला गया है। प्रस्तुत संग्रह में प्रदेश के विभिन्न भागों की कुछ चुनी हुई लोककथायें ली गई हैं।

ये लोककथायें अनुसंधानकर्ताओं के लिए कुछ बिन्दु देने के साथ-साथ संस्कृति के संग्रहण का कार्य भी करेंगी, ऐसा विश्वास है।

क्रम

कथा कुल्लू दशहरा की

✍ स्वाति

प्रसिद्ध कुल्लू दशहरा जिसे अन्तर्राष्ट्रीय उत्सव का दर्जा सरकार द्वारा दिया गया है, आश्विन शुक्ल दशमी को आरम्भ होकर एक सप्ताह बाद पूर्णिमा को समाप्त होता है। दशहरा उत्सव तथा श्री रघुनाथ जी के कुल्लू आगमन के विषय में एक लोककथा प्रचलित है।

दशहरा उत्सव राजमहल कुल्लू से कुल्लू जनपद के देवताओं सहित श्री रघुनाथ जी की यात्रा के साथ ढालपुर मैदान में रथयात्रा से आरम्भ होता है। मैदान के एक सिरे से रथ यात्रा जिलाधीश कार्यालय के सामने तक आती है, जहां दस दिनों तक श्री रघुनाथ जी को अस्थाई मंदिर में रखा जाता है और प्रतिदिन पूजा-अर्चना की जाती है। सभी देवता अपने-अपने निश्चित स्थान में इन सात दिनों तक रहते हैं। अंतिम दिन व्यास के किनारे लंका-दहन के बाद रघुनाथ जी की मूर्ति को पुनः सुलतानपुर राजमहल में ले जाया जाता है और सभी देवता विदा लेकर अपने-अपने स्थानों पर चले जाते हैं।

—सम्पादक

सत्रहवीं शताब्दी की बात है कुल्लू में राजा जगतसिंह राज्य करता था। कुल्लू राज्य में मणिकर्ण की ओर एक गांव है—टिप्परी। इस गांव में एक गरीब ब्राह्मण रहता था जिसका नाम दुर्गादत्त था। ब्राह्मण थोड़ा बहुत कमाता और अपना गुजारा करता। ब्राह्मण से किसी कारणवश उसके पड़ोसी बहुत चिढ़ते थे।

एक बार डाहवश एक पड़ोसी ने राजा से शिकायत कर दी कि दुर्गादत्त के पास तो एक पाथा (लगभग एक किलो) सुच्चे मोती हैं। किसी ने पुष्टि में

यहां तक कह दिया कि उसने अपनी आंखों से देखे हैं, ब्राह्मण इन्हें सुखाने डालता है।

मोतियों की खबर सुनकर राजा चौंक उठा। मोती...! मोती तो राज्यलक्ष्मी है। राजा की सम्पत्ति है। कंगाल ब्राह्मण के घर मोतियों का क्या काम?

एक बार राजा मणिकर्ण की ओर जा रहा था तो उसने मोती लाने के लिए ब्राह्मण के पास आदमी भेजे। राजा के आदमियों ने ब्राह्मण को तंग किया। मोती निकलवाने चाहे। मोती तो थे ही नहीं। ब्राह्मण कैसे विश्वास दिलाता कि राजा को झूठी खबर मिली है। आखिर उसने अपनी जान बचाने के लिए कह दिया कि जब राजा वापस लौटेगा, वह मोती दे देगा। दुर्गादत्त के दिन बड़ी चिन्ता में बीतने लगे। राजा के वापस लौटने का समय नजदीक आ रहा था। अंत में उसने मन ही मन इसका हल ढूंढ़ निकाला।

जब राजा की वापसी की खबर मिली तो ब्राह्मण ने अपने परिवार को घर में बंद कर दिया। बाहर से घर को आग लगा दी। लपटें उठीं और घर-परिवार जल उठा। ब्राह्मण हाथ में छुरी लिए बाहर बैठा था। जब राजा के आदमी आये तो अपने शरीर का मांस काट-काटकर आग में डालने लगा। साथ-साथ कहता जा रहा था—"ले राजा तेरे पाथा मोती। ले राजा तेरे पाथा मोती।"

ब्राह्मण का घर स्वाहा हुआ। परिवार स्वाहा हुआ। स्वयं को उसने आग में होम कर दिया। राजा खाली हाथ दुःखी मन लिए राजधानी लौट गया।

महल में पहुंच जिस समय राजा भात खाने लगा तो चावलों की जगह कीड़े नजर आने लगे। पानी पीने लगा तो लहू नज़र आने लगा। राजा को ब्रह्महत्या लग गई। राजा हरदम परेशान रहने लगा। ब्रह्महत्या के इस पाप से छुटकारा पाने के अनेकों उपाय किए गए किन्तु राजा का मन शान्त न हुआ। राजा के गुरु, पुरोहित सब हार गए।

उस समय नग्गर नामक स्थान में बाबा किशनदास पौहरी रहते थे। पौहरी बाबा की प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैली हुई थी। अंत में राजा उनकी शरण में गया और चित्त शान्ति का उपाय पूछा। बाबा जी ने बताया—

"यदि राजा वैष्णव हो जाए। अवध से श्री रघुनाथ की मूर्ति लाकर यहां स्थापित कराये। सारा राज्य रघुनाथ जी को सौंपे और स्वयं उनका छड़ीवरदार (मुख्य सेवक) बनकर रहे तभी इस पाप का प्रायश्चित हो सकता है।"

रघुनाथ जी की अवध से मूर्ति कैसे लाई जाये, यह समस्या थी। बाबा पौहरी ने सुझाया कि उनका चेला दामोदर सुकेत राज्य में रहता है। वह मूर्ति

ला सकता है। बाबा पौहरी ने पड़ोसी राज्य सुकेत में संदेश भेजकर अपने शिष्य को बुलवा भेजा। दामोदर गुरु के सामने उपस्थित हुआ। गुरु ने उसे राजा की ओर से अवध से मूर्ति लाने का कार्य सौंपा। राजा की ओर से उसे खर्च मिला। सहायक मिले। राजा ने कुल्लू से अवध तक बीस-बीस कोस पर हरकारे तैनात किए।

दामोदर गोसाई अवध जा पहुंचा। वहां वह मंदिर में पुजारी का चेला बन गया और हर रोज मंदिर जाने लगा। जब पुजारियों को उसके प्रति पूरा विश्वास हो गया तो एक दिन वह मौका पाकर मूर्ति ले भागा। जब पुजारियों ने देखा, मूर्ति चोरी हो गई है तो वह भी दौड़-भाग करने लगे। मूर्ति के बिना मंदिर सूना हो गया। उनकी आजीविका भी जाती रही। उनमें से एक पुजारी जोधवीर हरिद्वार तक आ पहुंचा और उसने दामोदर को धर दबोचा। दामोदर ने मिन्नत की कि मूर्ति कुल्लू के राजा जगतसिंह ने मंगवाई है।

जोधवीर ने तर्क दिया कि इसी मूर्ति से उनकी आजीविका चलती थी, अब वे क्या करेंगे? दामोदर ने उन्हें आश्वासन दिलाया कि जो आय उन्हें मंदिर से होती है, वह अब कुल्लू के राजा से मिला करेगी...दामोदर ने राजा को कहलवा भेजा कि मूर्ति हरिद्वार में इस कारण रोक ली गई है। राजा ने पुजारियों को निश्चित रकम देने का विश्वास दिलाया। तब जोधवीर ने मूर्ति को कुल्लू ले जाने दिया।

अंततः रघुनाथ जी की मूर्ति कुल्लू राजधानी पहुंची। कुल्लू का राजा रघुनाथ जी के दर्शनों से कृतकृत्य हुआ। उसने अपना समस्त राज्य रघुनाथ जी को सौंप दिया और स्वयं उनका छड़ीबरदार बना। यज्ञ किया गया। दामोदर को भुन्तर ठाकुरद्वारा बख्शा गया। अवध के पुजारियों को ताम्र पत्र देकर प्रतिवर्ष निश्चित राशि दी जाने लगी।

राजा वैष्णव हुआ और रघुनाथ जी से सम्बन्धित त्यौहार राजसी ठाट-बाट से मनाया जाने लगा। इसी परंपरा से अब भी कुल्लू में प्रतिवर्ष कुल्लू दशहरा मनाया जाता है। विजयदशमी से आरम्भ होकर यह सात दिन तक चलता है। इसमें रघुनाथ जी की मूर्ति राजमहल से लाकर रथ में बिठाई जाती है और भव्य रथ-यात्रा होती है। इस समारोह में घाटी के बहुत से देवता भाग लेते हैं। सात दिनों तक देवता भी मेले में रहते हैं।

अंतिम दिन लंका दहन के बाद पुनः रथ यात्रा वापस मुड़ती है और समारोह समाप्त होता है।

●

राजा विक्रमाजीत और परियां

✍ मोती लाल घई

प्रजापालक विक्रमाजीत को सदैव अपनी प्रजा के सुख-दुःख का ध्यान रहता था। कौन क्या कर रहा है और किसे क्या दुःख है, इन बातों का पता लगाने के लिये वे यदा-कदा भेष बदलकर निकल जाते।

ऐसे ही वे एक रात बाजार की गलियों में घूम रहे थे। आधी रात का समय था। चारों ओर अंधकार और गहरा सन्नाटा था। गलियों का चक्कर लगाते-लगाते वे एक मकान के सामने आए। लैम्प का टिमटिमाता प्रकाश बरामदे से बाहर आ रहा था। बरामदे में एक बुढ़िया बैंठी थी। वह कभी चरखा कातती तो कभी हुक्का पीती। कभी हंसती, कभी रोती तो कभी नाचने लगती। विक्रमाजीत को उसकी ये अजीब हरकतें देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। आखिर वह उसके पास जाकर इस स्थिति का कारण पूछ ही बैठे। बुढ़िया बोली–'मुसाफिर तुम अपने रास्ते से चले जाओ। मुझे पूछकर क्या लोगे?'

विक्रमाजीत कहने लगे–'नहीं मां! तुम निधड़क होकर मुझे बताओ। मैं तुम्हारे दुःख को अवश्य दूर करूंगा।' बुढ़िया बोली–मुसाफिर, अगर मेरे दुःख को कोई दूर कर सकता है तो वह सिर्फ राजा विक्रमाजीत ही है। इसके अतिरिक्त और किसी के अन्दर इतनी सामर्थ्य नहीं।'' विक्रमाजीत बोले–'मैं ही राजा विक्रमाजीत हूं तुम बताओ तो सही।'

बुढ़िया बोली–'तुम्हें एक शर्त माननी होगी। अगर छः मास के अन्दर तुमने मेरे कार्य को पूर्ण नहीं किया तो छः मास समाप्त होते ही तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी। इसमें कोई सन्देह नहीं।' विक्रमाजीत ने सहर्ष शर्त स्वीकार कर ली। बुढ़िया बोली–'मेरा नौजवान बेटा और बहू अन्दर के कमरे में सोए थे। एक दिन जब मैं प्रातः उनको उठाने गई तो देखा कि दोनों ही गायब हैं। उनके बिस्तरों पर सिर्फ बड़े-बड़े पत्थर लेटे थे। यह रहस्य आज तक मेरी समझ में नहीं आया और तब से मेरा दिमाग सही काम नहीं कर रहा है। मेरी हालत पागलों जैसी है। अतः तुम छः

मास के अन्दर मेरी बहू और पुत्र को अपनी प्रतिज्ञा अनुसार वापस ले आओ। अन्यथा छः महीने होते ही तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी।'

राजा ने बुढ़िया से विदाई ली और उसी रात राजधानी का परित्याग कर बुढ़िया के बहू-बेटे की खोज में निकल पड़ा। घूमते-घूमते कई दिन व्यतीत हो गए। भूखे-प्यासे भ्रमण करते-करते उन्होंने दुनिया का कोना-कोना छान डाला लेकिन कहीं भी उनका पता न चला।

एक रात वे एक नदी के किनारे पहुंचे। थकावट के कारण सारा शरीर चूर-चूर हो रहा था। अतः नदी के तट पर लेट गए। नदी के किनारे की शीतल वायु के लगते ही उनको नींद ने आ घेरा। लेकिन चिंता के कारण नींद भी कितनी देर रहती। रात के बारह-एक बजे के करीब उनकी नींद टूट गई। सोचने लगे 'पांच महीने तो समाप्त हो गए लेकिन मैं अभी तक अपना वचन पूरा नहीं कर सका। छठा महीना समाप्त होते ही मेरी मृत्यु निश्चित है। अतः इससे तो अच्छा है मैं स्वयं ही नदी में छलांग लगाकर अपनी जान दे दूं।'' ऐसा विचार आते ही विक्रमाजीत नदी की ओर चल पड़े। ज्यों ही वे छलांग लगाने लगे त्यों ही उन्हें अंधेरे में कपड़े धोने की आवाज़ सुनाई दी। उन्हें बड़ा विस्मय हुआ कि इतनी रात बीते कौन कपड़े धो रहा है। चलकर वहीं पहुंच गए। धोबी से पूछा–'अरे भाई! तुम्हें आधी रात के वक्त कपड़े धोने की क्या आवश्यकता पड़ गई?' धोबी बोला–'महाराज क्या करूं? हमारे यहां अनारकली नाम की लड़की है जिसने आज तक सूर्य का मुख नहीं देखा, दूसरों को तो देखना ही कहां। उसके जितने भी काम होते हैं वे रात को ही किये जाते हैं। यहां तक कि उसके कपड़े भी रात को ही धोकर सुखाने पड़ते हैं।''

राजा को यह सुनकर और भी हैरानी हुई। वापस आकर अपने स्थान पर लेट गए और बड़ी देर तक सोचते रहे लेकिन यह गुत्थी सुलझी नहीं। वे सोचने लगे–''एक तो मैं ऐसे ही दुःखी हूं फिर इस झंझट में पड़ने से क्या लाभ? अतः अब तो मुझे डूब कर ही छुटकारा ले लेना चाहिये।'' वह फिर चल पड़े। जैसे ही डूबने के लिये तैयार हुए, उनके नाक में धूप की बड़ी मीठी-मीठी सुगन्ध आई और साथ ही निकट से शंख ध्वनि भी सुनाई दी। विक्रमाजीत सोचने लगे–''दो दफा रुकावट पड़ गई। इसका मतलब यह हुआ कि अभी मेरी मृत्यु ही नहीं। प्रातः हो रही है शायद कोई साधु महात्मा भगवान की पूजा कर रहा है। चलो उन्हीं के दर्शन करूं।''

चलकर महात्मा जी की कुटिया में पहुंच गए। महात्मा जी के चरणों में प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। महात्मा जी उन्हें देखकर बोले–''पथिक! लगता है तुम इस समय बहुत दुःखी हो लेकिन तुम्हारे मुखमण्डल के तेज से ऐसा आभास हो रहा है कि तुम किसी उच्च वंश से सम्बन्ध रखते हो।'' विक्रमाजीत बोले–'महात्मन्!

मैं राजा विक्रमाजीत हूं। संकट में होने के कारण नदी में डूबकर मरना चाहता था। इतने में शंख ध्वनि सुनाई दी। अतः मरने से पहले आपके दर्शनों के लिये आ गया। महात्मा बोले –'धन्य हो राजा विक्रमाजीत। आज तक तो आपका नाम ही सुना था लेकिन आज तो आप यहां स्वयं पधारे हैं। कहिये, मैं आपकी क्या सेवा करूं।'

विक्रमाजीत ने बुढ़िया के बहू-बेटे और साथ ही धोबी की लड़की के कपड़े रात को धोने की बात कह दी। महात्मा जी थोड़ी देर सोचने के बाद बोले–'तुम पहला काम यह करो कि किसी तरह से धोबी की लड़की के साथ शादी कर लो। फिर दो-चार दिन वहां ठहरकर और हाल-चाल देख मेरे पास आ जाना। तब मैं तुम्हें सारी बातें बताऊंगा।'

दूसरे दिन विक्रमाजीत सज-धजकर धोबी के घर गए और उसकी लड़की से शादी करने की इच्छा प्रकट की। धोबी उस सुन्दर व्यक्ति को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और उसी दिन विक्रमाजीत से अपनी लड़की की शादी कर दी। विक्रमाजीत अब वहीं रहने लगे। लेकिन धोबी की लड़की ने न तो उन्हें अपना मुंह ही दिखाया और न ही कोई बात की। जो भी बात होती वह नौकरानी के माध्यम से ही होती। उसके कार्य रात को ही होते और दिन को सोई रहती।

कुछ दिन वहां रहने के पश्चात् विक्रमाजीत फिर महात्मा जी के पास गए। महात्मा जी से सारा वृत्तान्त कहा। महात्मा जी बोले, 'अब अपना काम बना ही समझिये।'

वास्तव में धोबी की लड़की अनारकली इन्द्र राजा की परी है। वह रात को जाकर इन्द्र की सभा में नृत्य करती है। बुढ़िया की बहू और बेटा भी वहीं रसोइए का काम करते हैं। मैं तुम्हें तीन दिन के लिये तीन गोलियां दूंगा। एक-एक गोली प्रतिदिन रात को मुंह में डाल लेना। उनके प्रभाव से रात को तुम्हें कोई भी नहीं देख सकेगा। बस फिर रात को उसी के पीछे-पीछे चले जाया करना। वहां अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त करना तुम्हारे ऊपर निर्भर करता है। इतना कहकर महात्मा जी ने तीन गोलियां विक्रमाजीत को दे दी।

विक्रमाजीत गोलियां लेकर धोबी के घर वापस आ गया। रात को विक्रमाजीत बहाना बनाकर शीघ्र ही सो गया। थोड़ी देर बाद गोली को मुंह में रखा और दरवाज़ा बन्द करके बाहर निकल गए। उधर अनारकली भी इन्द्र राजा की सभा में जाने के लिये तैयारी हो रही थी। राजा विक्रमाजीत ने चुपके से उसके नहाने के पानी में ठण्डा पानी मिला दिया और वैसे ही उसके श्रृंगार के कमरे में भी सामान इधर-उधर कर दिया। अनारकली को बड़ी हैरानी हुई, वह नौकरानी पर बिगड़ रही थी। लेकिन यह तो राजा की करतूत थी जिसे गोली के प्रभाव से कोई नहीं देख सकता था। किसी

तरह वह जलती-भुनती तैयार हुई और इन्द्र सभा के लिये चल पड़ी।

विक्रमाजीत भी पीछे-पीछे चल पड़े। आगे चलकर एक वृक्ष के साथ मालती के सफेद फूल खिले हुए थे। अनारकली ने खड़े होकर आवाज़ लगाई। बहिन मालती जल्दी चलो। आज देर हो रही है। बहिन की आवाज़ सुनकर मालती भी सज-धजकर बाहर आ गई। आगे चलकर एक पीपल का वृक्ष आया जिसकी दो बड़ी शाखाएं आकाश को छू रही थीं। दोनों वृक्ष पर चढ़कर एक-एक टहनी पर बैठ गईं। विक्रमाजीत भी उनके साथ टहनियों के बीच में बैठ गए। इतने में परियां बोली—'चल रे पीपल के पेड़, हमें शीघ्र ही इन्द्र राजा की सभा में पहुंचा। इतना कहना ही था कि पीपल का पेड़ उड़ने लगा और शीघ्र ही इन्द्र की सभा में पहुंच गया। दोनों परियों का इन्तज़ार हो रहा था। उतर कर नृत्य मण्डप में जा खड़ी हुईं।'

विक्रमाजीत भी ढोलक बजाने वाले के पास जाकर बैठ गए। उस समय उन्होंने गोली मुंह से निकालकर जेब में डाल ली। सभा भवन में लगे हीरे-मोतियों की चमक आंखों में चकाचौंध उत्पन्न कर रही थी। चारों ओर सुवासित पुष्पों की सुगन्ध से वातावरण महक रहा था। चन्द्रमा की शीतल चन्द्रिका अपनी ज्योति से सभा भवन की सुन्दरता को निखार रही थी। इन्द्र पत्नी सहित सिंहासन पर आरूढ़ हुए। देवताओं ने जय-जयकार की।

वाद्य-यंत्रों की मधुर ध्वनि और ढोलक पर पड़ी थाप के साथ नृत्य आरम्भ हुआ। लेकिन ढोलक वाला कुछ सुस्त था, नृत्य में गति नहीं आ रही थी। विक्रमाजीत अपने को रोक न सके। उन्होंने उससे ढोलक मांगी। ढोलक वाला भी रोज़ ढोलक बजा-बजाकर तंग आ चुका था। अतः उसने खुशी-खुशी ढोलक थमा दी। बस फिर क्या था।

विक्रमाजीत के ढोलक पर हाथ पड़ते ही नृत्य सभा में मादकता आ गई। सभी मस्ती से झूमने लगे। परियों ने उस दिन ऐसा नृत्य किया जैसा कभी नहीं हुआ था। चारों ओर वाह-वाह हो रही थी। नृत्य समाप्त हुआ। इन्द्र ने प्रसन्नता से गले का नौलखा हार उतारकर परियों को दिया। परियों ने वही हार ढोलक वाले को दे दिया। क्योंकि वह भी कई बार ऐसे पुरस्कार ले चुका था, अतः उसने भी वह हार विक्रमाजीत को दे दिया। विक्रमाजीत ने हार लेकर चुपके से जेब में डाल लिया। इन्द्र की सभा विसर्जित हुई। परियां वापस चलीं। विक्रमाजीत ने भी गोली मुंह में रखी और अदृश्य होकर पीछे हो लिया।

उसी पीपल के वृक्ष पर बैठकर उसी स्थान पर आ गए जहां से चले थे। अब विक्रमाजीत परियों से आगे आकर अपने कमरे में सो गए। प्रातः हो गई लेकिन आज वह नित्य की भांति नहीं उठे। अब तक विक्रमाजीत जाग तो चुके थे लेकिन

सोच-विचार कर रहे थे। नौकरानी ने आवाज़ लगाई लेकिन वे उठे नहीं। उसने फिर झकझोरते हुए कहा—"महाराज! उठिये, सुबह हो गई है।" विक्रमाजीत आंखें मलते हुए कहने लगे—'ओह! तुमने तो बहुत अनर्थ कर दिया। मैं आज एक बहुत ही सुन्दर सपना देख रहा था। पास खड़ी अनारकली ने नौकरानी को इशारे से स्वप्न के बारे में पूछने के लिये कहा।

नौकरानी बोली—'महाराज कैसा स्वप्न था?' विक्रमाजीत बोले—'ऐसा लगता है जैसे मैं आज इन्द्र राजा की नृत्य सभा में गया था। वहां मैंने बहुत सुन्दर ढोलक बजाई। इन्द्र बहुत प्रसन्न हुआ और इनाम में मुझे नौलखा हार मिला। मैंने उसे लाकर अभी-अभी सामने वाली अलमारी में रखा है। जरा तुम जाकर देखो तो सही। नौकरानी को आज्ञा माननी पड़ी। उसने अलमारी खोली। सचमुच ही वहां हार चमक रहा था। अनारकली के आश्चर्य का ठिकाना न रहा।'

दिन व्यतीत हुआ, शाम आई। आज रात को फिर विक्रमाजीत ने इन्द्र की सभा में प्रवेश कर पिछले दिन से भी अधिक सुन्दर ढोलक बजाई। इन्द्र ने परियों को सोने की थाली में बत्तीस व्यंजन, जो छत्तीस प्रकार से बने थे, पुरस्कार के रूप में दिये। परियों ने यह सोचते हुए कि सारा कमाल तो ढोलक वाले का है उसी को थाली दे दी। उसने भी वह थाली विक्रमाजीत को सम्भाल दी।

विक्रमाजीत पिछले दिन की तरह शीघ्र ही आकर अपने बिस्तर में सो गए। प्रातः भी काफी देर तक सोए रहे। आज फिर जब नौकरानी ने उन्हें उठाया तो वह बोले—अरी मूर्ख! आज तो तूने मेरा सारा कार्य ही बिगाड़ कर रख दिया। आज तो मुझे कल से भी अधिक सुन्दर स्वप्न दिखाई दे रहा था। आज मैंने इन्द्र की सभा में कल से भी अधिक सुन्दर ढोलक बजाई। इस पर उन्होंने प्रसन्न होकर सोने की थाली में बत्तीस व्यंजन जो छत्तीस प्रकार से बने थे, भेंट में दिये। मैं उस थाली को लाकर अलमारी में रख ही रहा था कि तूने मुझे जगा दिया। जाओ देखो, वहां है या नहीं।

सचमुच वहां थाली व्यंजनों से भरी पड़ी थी। पास ही अनारकली खड़ी थी। उसे काटो तो खून नहीं। उसकी समझ में यह रहस्य नहीं आ रहा था। सारा दिन उधेड़बुन में बीत गया। अन्त में हारकर शाम के समय उसे राजा से बोलना ही पड़ गया—"महाराज! मेरी समझ में यह रहस्य ही नहीं आ रहा है। सच सच बताइए! आपने यह सब कैसे किया।"

विक्रमाजीत ने अपना सारा भेद बताकर बुढ़िया के बहू बेटे की कहानी भी सुनाई। अनारकली यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुई कि यही राजा विक्रमाजीत है। उसने कहा—"आज आप फिर चलिये और ढोलक बजाने की सारी कला को सभा में उड़ेल

दीजिये। जब इन्द्र बहुत ही प्रसन्न हो जाएं और कुछ मांगने को कहें तो दो वचन मांग लेना। एक में मुझे और दूसरे में बुढ़िया के बहू-बेटे को जो वहां रसोइए का काम कर रहे हैं।''

रात होने पर विक्रमाजीत फिर उसी सभा में पहुंच गए। आज उन्होंने जो ढोलक बजाई तो कहना ही क्या? परियों ने ऐसा सुन्दर नाच किया कि चारों तरफ वाह-वाह हो उठी। इन्द्र मस्ती में सुध खो बैठे। नृत्य समाप्त हुआ। इन्द्र ने परियों से कुछ मांगने के लिये कहा, परियों ने कहा—'महाराज। आपने कुछ देना है तो ढोलक वाले को ही दें। यह उसी का कमाल है।'

ढोलक वाला बोला—'महाराज आजकल तो कोई और ही ढोलक बजाता है। आपने कुछ देना है तो उसे ही दें।' विक्रमाजीत से पूछा गया। उन्होंने दो वचन मांगे। एक वचन में अनारकली और दूसरे वचन में बुढ़िया के बहू-बेटे को, जो वहां रसोइए का काम रहे थे। इन्द्र को यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि यही राजा विक्रमाजीत है। उन्होंने अपने वचनों को पूरा किया।

इस तरह राजा विक्रमाजीत छः मास के भीतर ही परी अनारकली और बुढ़िया के बहू-बेटे के साथ अपनी राजधानी वापस गए। बुढ़िया के बहू-बेटे को उसके पास सम्भाला। सारी राजधानी में खुशियां मनाई गई और विक्रमाजीत फिर सुखपूर्वक राज करने लगे।

●

राजकुमार और राक्षसी

✍ मोती लाल घई

एक गांव में सात भाई सुनार रहते थे। वे सोने के आभूषण बनाने का काम करते थे। लेकिन अपने गांव में रहकर उनका काम भली-भांति नहीं चल सका। सारा दिन खूब परिश्रम करते फिर भी बड़ी कठिनाई से पेट का गुजारा कर पाते। आखिरकार उन्होंने गांव छोड़कर किसी दूसरे स्थान पर रोजी कमाने का विचार किया। एक दिन सातों भाई, अपना सारा सामान उठाकर चल पड़े। वे दो-चार दिन तक यात्रा करते रहे लेकिन उन्हें कहीं भी काम नहीं मिला। चलते-चलते वे काफी दूर निकल गए।

एक दिन उन्हें एक जंगल के किनारे एकान्त में एक मकान दिखाई दिया। शाम होने वाली थी। अतः उन्होंने वहीं ठहरने का निश्चय किया। घर के लोगों को जब यह पता चला कि यह लोग आभूषण बनाने का काम करते हैं तो उन्होंने भी उनसे कुछ आभूषण बनवाने की बात की। अतः सुनारों ने वहीं कुछ दिन ठहर कर काम करने की सोची।

रात को घर के लोगों ने उनका खूब आदर-सत्कार किया। बढ़िया-बढ़िया चीजें तैयार करके उन्हें खाने को दीं। रात को उनके लिए एक कमरे में एक बहुत बड़ी चारपाई पर एक ही बिस्तर लगा दिया। जब सभी भाई उस पर सोने लगे तो उस पर केवल छः ही आये। अतः सातवां भाई जमीन पर बिस्तर लगाकर सो गया। चारपाई के पास ही एक बकरी भी बंधी थी। वास्तव में यह घर राक्षसों का था और बकरी एक भयंकर राक्षसी थी जो बकरी का वेश धारण करके वहां बैठी थी।

रात को जब सभी सुनार गहरी निद्रा में सो गए तो बकरी ने जमीन पर सोए हुए सुनार के पैर के तलवों को धीरे-धीरे चाटना आरम्भ किया। उसने चाट-चाटकर सुनार के शरीर का सारा खून चूस लिया। थोड़ी ही देर में सुनार के सोये-सोये ही प्राण-पखेरू उड़ गए। बकरी ने एकदम स्त्री का रूप धारण कर लिया और अपने भाइयों को सूचित किया। वे सभी चुपचाप आकर कमरे से सुनार की लाश को

उठाकर ले गए। रात में सभी ने मिलकर उसका मांस खा लिया और हड्डियां जमीन के अन्दर दबा दीं। सुबह होने पर वह राक्षसी फिर बकरी बनकर चारपाई के पास बैठ गई।

प्रातः चारपाई पर सोये हुए सभी भाई जाग पड़े। अपने सातवें भाई को वहां न देखकर सभी ने यह समझा कि शायद वह सुबह-सुबह ही बाहर घूमने-फिरने चला गया होगा। सभी उठकर अपने काम में लग गए और सारा दिन अपने भाई का इन्तजार करते रहे। लेकिन वह वापस नहीं लौटा। सभी भाइयों ने ऐसा ख्याल किया कि शायद उनका सातवां भाई काम की तलाश में किसी दूसरे स्थान की खोज में निकल गया होगा। रात को खा-पीकर सभी भाई उसी चारपाई पर सोने लगे।

आज उस चारपाई पर छः के बजाये पांच भाई ही आये। छठा फिर जमीन पर सो गया। रात को उसे भी बकरी ने सातवें भाई की तरह तलवे चाटकर मार दिया और सभी राक्षस मिलकर उसे खा गए। प्रातः उठने पर सुनारों ने देखा कि आज उनका छठा भाई भी गायब था। आज भी उन्होंने ऐसा ही सोचा कि शायद उनका छठा भाई भी सातवें भाई की तरह कहीं दूसरे स्थान पर चला गया होगा।

प्रतिदिन ऐसा ही होने लगा। उनका एक-एक भाई प्रतिदिन गायब हो जाता। सभी हैरान थे। अन्त में एक दिन प्रातः उठने पर सोने वाला एक ही भाई रह गया। शेष सभी भाई गायब हो चुके थे। बकरी वहीं चारपाई के पास बैठी रहती। इस दिन अकेले सुनार का माथा कुछ ठनका और उसे अपने भाईयों के गायब होने में कुछ रहस्य दिखाई दिया।

घर के लोग भी उस पर कड़ी निरागनी रख रहे थे। किसी को भी व्यर्थ बाहर निकलने नहीं देते थे। वह पेशाब करने के बहाने बाहर निकला और भाग खड़ा हुआ। उसे भागते देखकर बकरी भी उसके पीछे दौड़ पड़ी। आगे सुनार और पीछे बकरी दौड़ रही थी। भागते-भागते वे काफी दूर निकल गए। डर के मारे सुनार का बुरा हाल था। दौड़ते-दौड़ते वे दोनों एक घने जंगल में पहुंच गए। बकरी से अपनी जान बचाने के लिए वह एक वृक्ष पर चढ़ गया। बकरी ने एक सुन्दर स्त्री का रूप धारण कर लिया और वृक्ष के नीचे बैठकर सुनार के उतरने का इन्तजार करने लगी।

शाम का समय होने को आ गया लेकिन सुनार उसी वृक्ष पर बैठा रहा। कुदरती उस दिन एक राजा जंगल में शिकार खेलने आया था। वह घोड़े पर बैठकर जंगल में अपना रास्ता भटक गया और उधर आ निकला। राजा को देखते ही वह स्त्री जोर-जोर से रोने लग पड़ी। राजा उस स्त्री की सुन्दरता को देखकर हैरान रह गया। राजा उसके पास जाकर बोला—"सुन्दरी तुम क्यों रो रही हो।" स्त्री बोली—"महाराज! मेरा पति मुझे अपने साथ नहीं ले जाना चाहता। मैं उसके साथ अपने घर जाना

चाहती हूं। लेकिन वह वृक्ष से नीचे नहीं उतर रहा है। इधर शाम भी होने वाली है।'' राजा ने वृक्ष पर बैठे हुए सुनार से पूछा—''क्यों भाई तुम इसे अपने साथ क्यों नहीं ले जाना चाहते।'' सुनार बोला—''महाराज! मुझे इसकी कोई आवश्यकता नहीं। यदि आप चाहते हैं तो आप ही इसे ले जाएं।'' राजा तो पहले ही उसकी सुन्दरता पर मुग्ध था। उसे घोड़े पर बिठाकर अपने साथ ले चला। सुनार अपनी जान बची पाकर वहां से भाग निकला।

राजा उस स्त्री को लेकर अपने महल में पहुंच गया। उसके पहले ही छः रानियां थीं। लेकिन नई रानी की सुन्दरता पर राजा ऐसा मोहित हुआ कि उसने बाकी रानियों का ध्यान ही छोड़ दिया। कुछ ही दिनों में नई रानी सबके ऊपर हकूमत चलाने लग पड़ी। उसे शेष रानियां फूटी आंख न सुहाती। वह उनसे हर समय जलती रहतीं और हर समय उनके विरुद्ध राजा के कान भरती रहती। उनसे छुटकारा पाने के लिए उसने अपना राक्षसी जाल फैलाना आरम्भ कर दिया। वह रात को उठकर राक्षसी का रूप धारण करती और महल के पशु-पक्षियों को मारकर खा जाती। फिर उनकी हड्डियां इकट्ठां करके शेष रानियों के कमरे में डाल आती। रानियां प्रातः उठकर अपने कमरों की हालत देखती तो हैरान रह जाती।

उधर राजा की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। एक दिन नई रानी राजा से बोली—''महाराज! आपकी यह रानियां जादू जानती हैं और महल के सभी पशु-पक्षियों को रात में उठकर खा जाती हैं। यदि ऐसा ही हाल रहा तो यह सब कुछ तबाह कर देंगी। बेहतर यही है कि इन्हें महल से निकाल दिया जाये, राजा नई रानी के जाल में ऐसा फंस चुका था कि उसने बिना सोचे-समझे सभी रानियों को महल से निकालकर एक सूखे कुएं में उतार दिया। उन्हें खाने-पीने के लिए भी कुछ नहीं दिया जाता। कभी-कभार कुत्तों की तरह उन्हें रूखा-सूखा टुकड़ा डाल दिया जाता। सुख में पली रानियां अपने ऊपर आई हुई इस विपत्ति से घबरा उठीं लेकिन क्या करती? जैसे-तैसे भूखे रहकर गरीबी में अपने दिन निकालने लगीं। उधर नई रानी अपनी कामयाबी पर खूब प्रसन्न थीं।

कई दिन बीत गए। रानियां दुख के कारण सारा दिन रोती रहतीं। भगवान की कृपा से छः की छः रानियां गर्भवती निकलीं। आखिर एक दिन ऐसा भी आ गया कि उनके पुत्र होने को आ गए। समस्या थी कि भूखे पेट आने वाले बच्चों का कैसे पालन किया जाए। एक दिन बड़ी रानी ने एक बच्चे को जन्म दे दिया। लेकिन भूखा पेट क्या-क्या पाप नहीं कराता। भूख के कारण सभी रानियां व्याकुल थीं। उन्हें खाने को कुछ भी नहीं मिल रहा था। अतः बड़ी-बड़ी रानी ने अपने नवजात बच्चे के छः बराबर टुकड़े करके सभी में बांट दिए। पांच रानियां तो अपना-अपना हिस्सा

खा गईं परन्तु छठी रानी ने अपना हिस्सा उनसे छुपाकर रख छोड़ा।

इसी तरह सभी रानियों के बारी-बारी से पुत्र हुए और भूख के कारण सभी उनको खा गईं। छठी रानी सभी हिस्सों को छुपाकर रख लेती।

जब उसके भी लड़का हुआ तो बाकी रानियां उससे अपना हिस्सा मांगने लगी। उसने छिपाए हुए हिस्से उन सभी को वापस कर दिये और अपने पुत्र का जी-जान से पालन-पोषण करने लगी। बच्चे को देखकर शेष रानियों की ममता भी उमड़ पड़ी और वे भी उसका पालन-पोषण करने में जुट गई। कभी-कभार जो कुछ भी उन्हें मिल जाता उसे वे थोड़ा-थोड़ा करके बचा लेती और बच्चे को खिलाती रहती।

बच्चे के सहारे किसी न किसी तरह उनके दिन कटने लगे। सभी उसे अपना बच्चा समझकर प्यार करती। धीरे-धीरे बालक बड़ा होने लगा और चलना सीखने लगा। ज्यों-ज्यों वह बड़ा होता गया त्यों वह कुएं से बाहर निकलने लगा। बाजार में जाकर वह इधर-उधर घूमता। लोग उस सुन्दर बालक को देखकर मोहित हो जाते। सभी उसे प्यार से अपने पास बुलाते। खाने को मिठाइयां देते। बाजार के लड़के भी उसके साथ खूब खेलते। वह हर रोज नई-नई खेलें निकालता। शाम को अपनी माताओं के पास आ जाता। साथ लाई हुई मिठाइयां सभी माताओं में बांट देता। इसी तरह छोटा होते हुए भी वह सभी माताओं का सहारा बन चुका था।

धीरे-धीरे वह सब कुछ समझने लगा था। वह नई रानी की चालाकी भी समझ चुका था जिसके कारण उसकी सभी मातायें गरीबी और दुःख में दिन काट रही थी। मन ही मन वह नई रानी को नसीहत देने की योजना बना रहा था। जब वह दस-बारह साल का हो गया तो उसने लकड़ी का एक सुन्दर घोड़ा तैयार किया। घोड़ा वास्तविक घोड़े की तरह ही दिखाई देता था। वह उसे रस्सी से खींचकर बाहर ले जाता था।

एक दिन उसे लेकर वह महल की ओर चला गया। वहां पास ही एक सुन्दर बावड़ी थी। लड़का लकड़ी के घोड़े को लेकर बावड़ी के पास चला गया और उसे सम्बोधित करके कहने लगा--"घोड़े-घोड़े पानी पी।" नई रानी महल के चौबारे में बैठी देख रही थी। वह लड़के से बोली--"अरे कभी लकड़ी के घोड़े ने भी पानी पीया।" लड़का बोला--"कहीं राक्षसी ने भी राज किया।" उसका इतना कहना था कि रानी के तन-बदन में आग लग गई। वह उठकर चारपाई पर लेट गई और बड़े जोर की पेट दर्द का बहाना करके चीखने लगी।

राजा को खबर की गई। वैद हकीम इकट्ठे हो गए। जितना इलाज किया जाता उतनी ही दर्द बढ़ती जाती। ऐसा लगने लगा कि रानी अब मरी कि अब मरी। सारे दरबारी और अन्य लोग वहां इकट्ठे हो गए। किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा

था। राजा भी घबरा गया था। वह रानी से बोला—"क्या तुम्हें पहले भी कभी ऐसी दर्द हुई थी।" रानी बोली—"हां महाराज! जब मैं अपने मायके में थी तब एक-दो बार ऐसी ही दर्द हुई थी।" राजा बोला—"तो दवाई का भी तुम्हें पता ही होगा।" रानी बोली—"हां दवाई का तो पता है और वह मेरे मायके से ही मिल सकती है। लेकिन उसे एक ही व्यक्ति वहां से ला सकता है। यदि बाजार में घूमने वाला लकड़ी के घोड़े वाला लड़का उसे लाने के लिए तैयार हो जाए तो मेरी जान बच सकती है।"

राजा बोला—"यह तो मामूली-सी बात है मैं अभी उसे बुलाता हूं।" राजा ने सिपाही भेजकर लड़के को बुला लिया और उसे दवाई लाने के लिए पूछा। लड़का तैयार हो गया। रानी ने उसके पास एक पत्र दिया। लड़का राजा से एक घोड़ा लेकर चल पड़ा। लड़का कई दिनों तक चलता रहा।

अन्त में वह एक दिन एक घने जंगल में पहुंच गया। जंगल में एक साधु कई दिनों से तपस्या कर रहा था। उसके आसपास काफी घास पैदा हो चुकी थी। धूना भी ठण्डा पड़ चुका था। लड़का घोड़े से उतर गया। उसने थोड़ी ही देर में आसपास की सारी घास-फूस उखाड़ कर सारी जगह साफ-सुथरी कर दी। इधर-उधर से लकड़ी इकट्ठी करके धूने को जला दिया और एक ओर बैठकर आराम करने लगा। थोड़ी देर के बाद साधु का ध्यान भंग हुआ।

लड़के की सेवा-भक्ति देखकर साधु बड़ा प्रसन्न हुआ। लड़के से सारा हाल पूछा। दवाई लाने वाली बात सुनकर साधु कुछ हैरान भी हुआ। लड़के के हाथ से पत्र लेकर पढ़ा। उसमें नई रानी ने अपनी मां को राक्षसी भाषा में लिखा था कि इस लड़के को घर पहुंचते ही खा जाना। बालक की व्यथा-कथा सुनकर साधु को बड़ी दया आई। उसने वह पत्र धूने में जला डाला। अपने हाथ से नई रानी की ओर से एक और पत्र लिखा कि आने वाला मेरा पुत्र है। इसका खूब आदर-सत्कार करना। इसकी हरेक इच्छा और आवश्यकता का ख्याल रखना। पत्र लिखकर साधु ने लड़के के पास दे दिया और उसे सभी बातें भली-भांति समझा दीं। चलती बार उसकी जेब में कुछ भूने हुए चने भी डाल कर साधु बोला—बेटा! जब तू राक्षसों के मकान के पास पहुंचने को आ जायेगा तो वे मनुष्य की गन्ध पाकर तुझे खाने के लिए दौड़कर आयेंगे। उस समय तू यह पत्र उनके सामने कर देना। वह तुझे अपना समझकर छोड़ देंगे। जब तू उनके साथ घर चला जायेगा तो तुझे लोहे के चने खाने को दिए जायेंगे। उस समय तू आंख बचाकर उन्हें अपनी दूसरी जेब में डालते रहना और भूने हुए चने निकालकर खाते रहना। साधु की बातें समझ लेने के पश्चात् लड़का घोड़े पर बैठकर चला गया।

जब वह नई रानी के मायके वालों के मकान के पास पहुंचने को आ गया

तो राक्षस मनुष्य के गन्ध पाकर उसे खाने के लिए दौड़ पड़े। लड़के ने पत्र निकालकर उनके सामने कर दिया। पत्र पढ़कर जब उन्हें पता लगा कि यह हमारी बहिन का लड़का है तो वे खूब प्रसन्न हुए और उसे अपने घर ले गए। उनकी मां भी उसे देखकर बड़ी प्रसन्न हुई। उसने उसे लोहे के चने चबाने को दिए। लड़का उसकी आंख बचाकर उन्हें जेब में डालता रहा और दूसरी जेब से भूने चने निकालकर खाता रहा। इस तरह उसे खाते देखकर राक्षसी को विश्वास हो गया कि यह उसर्व. लड़की का ही लड़का है। कुछ दिन लड़का वहीं ठहरा रहा और राक्षसों की सारी चीजों का ज्ञान करता रहा। सभी राक्षस दिन निकलते ही दूर-दूर निकल जाते। बूढ़ी राक्षसी घर में अकेली रहती। लड़का सारा दिन उसके साथ घर में घूमता रहता। एक दिन उसने एक कमरे में कुछ अजीब-अजीब गोल-गोल बर्तन लटके देखे। वह उनको लेकर तोड़ने लगा। इतने में बूढ़ी राक्षसी दौड़कर बोली—बेटा! कहीं इन्हें तोड़ न डालना। इन सभी में तेरे मामा और अन्य लोगों के प्राण बन्द हैं। यदि यह टूट गए तो वे सब मर जायेंगे।''

लड़का बोला—''नानी अम्मां क्या तेरे प्राण भी ऐसे ही बन्द हैं।'' राक्षसी बोली—बिलकुल! यह देख सामने वाला पहला बर्तन मेरे ही प्राणों का है।'' लड़का फिर बोला—और मेरी मां के प्राण कहां हैं?'' राक्षसी बोली—''सामने जो पिंजरा पड़ा लटक रहा है उसमें बैठा तोता ही तेरी मां के प्राण हैं। यदि कोई इसे मार दे तो तेरी मां भी मर जायेगी।''

इतना कहकर राक्षसी बाहर आ गई। लड़का भी उसी के साथ बाहर आ गया। वह मौके की तलाश करता रहा।

एक दिन सभी राक्षस सुबह-सुबह ही बाहर निकल गए। बूढ़ी राक्षसी रोटी पकाने लगी। लड़का चुपचाप कमरे में घुस पड़ा और सबसे पहले उसने बुढ़िया के प्राणों का बर्तन फोड़ डाला। उसके टूटते ही बुढ़िया चूल्हे के पास ही मर गई। उसके मरते ही बाकी राक्षसों को पता लग गया। वे सभी घर की ओर तेजी से दौड़ने लगे।

लड़के ने एक बड़े डण्डे से सभी बर्तनों को तोड़ डाला। वे सभी रास्ते में ही मर गए। इसके बाद उसने तोते वाला पिंजरा उठाया और अपने घोड़े पर बैठकर चल पड़ा। कुछ ही देर में वह भागता हुआ साधु के पास पहुंच गया और जाकर साधु के पैरों में गिर पड़ा। साधु बालक की वीरता देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ और उसे अपना शुभ आशीर्वाद देकर विदा किया।

कुछ ही दिनों में वह अपने घर पहुंच गया। उसने राजा को सूचना भिजवाई कि वह नई रानी के लिए दवाई ले आया है लेकिन दवाई लेने से पहले एक बड़ा दरबार लगाया जाए। उस दरबार में वह अपने कुछ और भी करिश्में दिखाना चाहता

है। दूसरे दिन राजा ने एक बड़ा दरबार लगाया। बड़े भारी लोग इकट्ठे हुए। लड़का हाथ में तोते का पिंजरा उठाकर चल पड़ा। नई रानी भी दरबार में राजा के पास बैठी थी। जैसे ही नई रानी ने लड़के के हाथ में पिंजरा देखा तो उसे पसीना पड़ गया।

वह पिंजरे को छुड़ाने के लिए लड़के की तरफ दौड़ने लग पड़ी। लड़के ने उसे अपनी ओर आते देखकर तोते की एक टांग तोड़ दी। तोते की टांग टूटते ही नई रानी की भी एक टांग टूट गई। अब वह एक टांग के सहारे ही जोर से दौड़ने लगी। लड़के ने तोते की दूसरी टांग भी तोड़ दी। रानी की दूसरी टांग भी टूट गई।

रानी अब बिना टांगों के ही लड़के की ओर लुढ़कती हुई दौड़ने लगी। सभी लोग इस चमत्कार को देखकर हैरान थे। जब वह लड़के के पास पहुंचने को आ गई तो लड़के ने तोते की गर्दन भी मरोड़ डाली। तोते की गर्दन टूटने के बाद रानी की गर्दन भी टूट गई और उसके प्राण पखेरू उड़ गए।

सभी लोग इस तमाशे को बड़ी उत्सुकता से देख रहे थे। अब राजा सहित सब लोगों की समझ में यह बात बैठी कि रानी वास्तव में एक राक्षसी थी। राजा लड़के की बहादुरी पर बड़ा प्रसन्न हुआ। जब राजा को पता चला कि लड़का वास्तव में उसी का ही राजकुमार है तो राजा ने दौड़कर उसे गले लगा लिया। लड़के ने सारा हाल राजा को सुनाया। राजा बड़ा खुश हुआ और अपनी गलती पर पछताने लगा।

उसने उसी समय अपनी सभी रानियों को सूखे कुएं से निकालकर आदर के साथ महल में बुला लिया। लड़के को भी अपने महल में ले गया और फिर सभी बड़े सुख से रहने लगे।

●

कलियुग का पहरा

✍ केशवचन्द्र

दो साहूकार थे। वे एक दूसरे के पक्के दोस्त थे। एक बड़ी उमर का था और दूसरा अभी जवान था। एक दिन वृद्ध साहूकार ने जवान साहूकार को अपने पास बुलाया और उसे कहा—"दोस्त यह लो एक लाख रुपया। इसे बतौर अमानत अपने पास जमा रखो। मेरे मरने के बाद कभी भी यदि मेरी पत्नी और मेरे इकलौते बेटे को तंगी आ जाये तो तुम यह पैसा उनको फौरन दे देना।"

जवान साहूकार ने एक लाख रुपया रख लिया और अपने मित्र माधोराम से पक्का वादा किया कि जब भी कभी उसकी पत्नी व बेटे को आवश्यकता पड़ेगी वह ज़रूर पैसा उनको लौटा देगा।

वृद्ध साहूकार माधोराम ने अपनी पत्नी को बता दिया—"भागवान! जीवन का क्या भरोसा, जो दुनिया में आता है, एक दिन लौट जाता है। मैं भी जाऊंगा, तुम भी जाओगी। यह ज़रूरी है। पर जब तक जीना है, सभी कुछ चाहिये होता है। मैं अपने दोस्त साहूकार देवीदास के पास एक लाख रुपया जमा कर आया हूं। अपने हाथ पैसा तो यों खतम हो जाता है कि पता तक नहीं चलता। परन्तु यह जमा रुपया सिर्फ उस समय मांगना जब खास ही ज़रूरत पड़े।"

साहूकारनी ने कहा—"आपको उलटी-सीधी बात नहीं करनी चाहिये। हमेशा जाना-जाना की क्या रट लगाये रखते हो। रही दूसरे आदमी के पास पैसा रखने की बात, वह ठीक है। उसका कभी तो लाभ हो सकता है। पर ये सब तो बाद की बातें हैं। बाद में देख लेंगे।"

कुछ समय बाद वृद्ध साहूकार की मृत्यु हो गई। साहूकारनी और उसका लड़का रह गये। लड़का चूंकि छोटा था अतः बणज-व्यापार चलाने योग्य नहीं था। साहूकार के मरने के बाद बहुत से कर्ज़दार या तो मुकर गये या फिर किसी ने पैसा वापस किया भी तो रुपये में चार आने। इस कारण साहूकारनी शीघ्र ही गरीबी से घिर गई।

कुछ वर्षों बाद साहूकार माधोराम का लड़का जवान हो गया। उसकी मां

ने अब उसका विवाह करने की सोची। यह भी सोचा कि वह कोई उपयुक्त कारोबार करे।

इसलिये साहूकारनी ने अपने लड़के का रिश्ता भी एक अच्छे खानदान में कर दिया। तभी अपनी पिछली खानदानी शान से विवाह करने का प्रश्न साहूकारनी के सामने खड़ा हुआ।

साहूकारनी ने इसी अवसर को सबसे अधिक आवश्यकता का अवसर समझा और साहूकार देवीदास से अपने पति द्वारा जमा किया गया एक लाख रुपया वापस लेने की ठानी।

जब साहूकार माधोराम की पत्नी दमयंती साहूकार देवीदास के पास गई तो उसने कहा—'देखो भाई जी, मेरा लड़का जवान हो गया है। उसका रिश्ता एक अच्छे घर में हो गया है। साथ ही अब उसको कुछ काम-काज भी शुरू करना है। अतः विवाह और कारोबार के लिये मुझे पैसे की सख्त ज़रूरत है। कृपा करके आप मेरे पति द्वारा जमा किया गया एक लाख रुपया लौटा दें।''

देवीदास ने दमयंती की बात शांति से सुनी। फिर बिल्कुल ठंडेपन से उत्तर दिया—''भाभी जी! माधोराम जी मेरे बहुत जिगरी दोस्त थे। हम एक दूसरे के बिना नहीं रहते थे। हालांकि आयु के हिसाब से हम बाप-बेटे की तरह थे।

माधोराम जी कई बार मेरी मदद भी कर देते थे। मैं भी बदले में मदद कर देता था। मैं अपने मित्र के वे एहसान नहीं भूला हूं। भाभी जी! आप मज़े से विवाह करवायें, लड़के के लिये कारोबार चालू करें। मैं आपकी पूरी मदद करूंगा।''

''भइया तुम हमारा एक लाख रुपया लौटा दो। इसके बाद किसी अतिरिक्त सहायता की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।'' साहूकारनी ने अपनी बात फिर दोहराई।

''क्या बात करती हो भाभी! भाई माधोराम ने मुझे एक लाख रुपये कब दिये? मैं तो उनके एहसानों के बदले और एक इन्सान के नाते तुम्हारी मदद की बात कर रहा हूं। इसलिये मैं चाहता हूं कि पंद्रह-बीस हज़ार रुपये तुम्हारे लड़के के ब्याह व कारोबार के लिये दूं।'' देवीदास ने ज़रा रुखे होकर यह बात कही।

साहूकारनी ने कहा—''इसी प्रकार के अति संकट काल के लिये तो मेरा साहूकार पति तुम्हारे पास एक लाख रुपया जमा करवा गया था और ऐसे ही संकट के समय तुम रुपया लौटाने की बात छोड़, बिल्कुल ही मुकर गये कि तुम्हारे पास रुपया जमा करवाया ही नहीं गया? देवीदास! तुम्हारा कभी भला नहीं हो सकता।'' इतना कहकर दमयंती ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी।

देवीदास ने बनावटी नाराज़गी जाहिर करते हुये कहा—

''मुझ पर झूठा आरोप न लगा। मेरे पास माधोराम ने कोई पैसा नहीं दिया

था। झूठ बोलना है तो कहीं और जाकर बोल। मुझे कोई फ़र्क नहीं पड़ता।''

साहूकारनी दमयंती रोती-रोती वहां से चली गई। वह न्याय-प्राप्ति के लिये गई राजा के पास। राजा ने दमयंती की पूरी कहानी सुनी फिर साहूकार देवीदास को बुलाया। उससे पूछा कि क्या उसके पास दिवंगत साहूकार माधोराम ने कभी एक लाख रुपया जमा करवाया था?

साहूकार देवीदास ने राजा को उत्तर दिया—''महाराज! मैं एक करोड़पति साहूकार, इज़्ज़तमंद और मोहतबिर आदमी हूं। मुझे क्या जरूरत थी कि मैं इस साहूकारनी के पति माधोराम से एक लाख रुपया उधार लेता। महाराज! यह साहूकारनी मुझ पर झूठा आरोप लगा रही है। यदि इसकी बात सच है तो यह दरबार में सबूत पेश करें।''

राजा ने साहूकारनी से पूछा—''क्या तू इस बात का कोई सबूत पेश कर सकती है कि तेरे पति माधोराम ने देवीदास के पास एक लाख रुपया जमा करवाया था?''

साहूकारनी ने अपने लड़के को अपने सामने खड़ा करते हुये कहा—''महाराज मैं अपने इकलौते बेटे के सिर पर हाथ रखकर कहती हूं कि यह सच है कि मेरे पति ने देवीदास के पास संकट के समय के लिये एक लाख रुपया अमानत रखा था। अगर यह बात झूठ है तो मेरा इकलौता बेटा मेरे झूठे बयान के पाप से मर जाये।''

साहूकारनी के ऐसा कहने के एकदम बाद उसका इकलौता लड़का मर गया। राजा को भी आश्चर्य हुआ और अन्य लोगों को भी।

अपने बेटे के एकाएक मर जाने का जो दुख दमयंती को हुआ उसकी तो सीमा ही न रही परन्तु भरे दरबार में जो वह झूठी साबित हुई उससे तो वह जमीन में ही गड़ गई। राजा ने उसको तत्काल अपने बेटे की लाश वहां से ले जाने के लिये कहा और उसे इस बात के लिये कोसा कि उसके पाप का शिकार बेचारा मासूम लड़का हुआ।

दमयंती ने अपने बेटे की लाश को अपने दुपट्टे में गठरी बनाकर बांधा। सिर पर रखा और चल पड़ी।

देवीदास प्रसन्नचित्त अपने घर लौटा। वह निर्दोष जो सिद्ध हो गया।

साहूकारनी सिर पर अपने बेटे की लाश की गठरी उठाये एक नदी कि किनारे जा पहुंची। गठरी उतारकर धरती पर रख दी और खुद रोती रही।

कुछ देर बाद वहां पर एक वृद्ध आया जो लाठी की टेक लगाता एक ओर से आया और दूसरी ओर जाने लगा।

साहूकारनी ने सोचा कि उस वृद्ध को अपनी व्यथा-कथा सुनाई जाये। शायद वह कोई मदद कर सके। उसने वृद्ध को पुकारा। वह उसके पास आया पर बैठा नहीं।

साहूकारनी ने उसको अपनी सारी कहानी सुना दी। वृद्ध ने सारी बात सुनी और और कहा–"साहूकारनी मेरे बस की कोई बात नहीं है। मेरा पहरा तो सतयुग में था।"

उस समय झूठ नहीं था। मुझे इस प्रकार की बातों का ज्ञान नहीं है। मुझसे पीछे एक और आदमी चला आ रहा है। शायद वह तुम्हारी कुछ मदद करे।" इतना कहकर वह लाठी टेकता हुआ आगे बढ़ गया।

कुछ देर बाद दूसरा व्यक्ति वहां आ पहुंचा। वह भी वृद्ध ही था परन्तु पहले से कुछ कम। लाठी उसके पास भी थी।

उसने भी साहूकारनी की बात खड़े-खड़े सुनी और फिर उसकी मदद करने में असमर्थता व्यक्त की और आगे बढ़ गया। वह त्रेता युग का प्रतिनिधि था।

उसके बाद वहां पर आया एक और आदमी। आयु में अधेड़ लगता था। डंडा हाथ में था। साहूकारनी की बात सुनने रुक गया। बात सुनकर उत्तर दिया–"साहूकारनी मेरा पहरा तो द्वापर में था। मेरे पहरे में कभी ऐसी घटना नहीं घटी। तू मुझसे पीछे आने वाले कलियुग से पूछ वह अवश्य तुझे ठीक सलाह देगा। आजकल उसी का पहरा चल रहा है।"

अंत में चौथा व्यक्ति भी आ पहुंचा। युवक सुन्दर, तेजवान और चुस्त। साहूकारनी ने उसे अपने पास बुलाकर बिठा लिया और आदि से अंत तक अपनी सारी व्यथा-कथा उसे सुनाई।

उस तेजयुक्त युवा व्यक्ति ने कहा–"साहूकारनी मेरा नाम कलियुग है। आजकल मेरा ही पहरा है। मेरे राज्य में सच बोलने के लिये आदमी को दंड भोगना पड़ता है। तू महामूर्ख है। सच कहा, पुत्र खोया और सभा में झूठी साबित हुई। अब फिर बेटे की लाश राजा के पास लेकर जा और कह कि तुझे साहूकार देवीदास से चार लाख रुपया लेना था। तेरा लड़का भी जी उठेगा और देवीदास को चार लाख रुपये भी देने पड़ेंगे और वह भरी सभा में झूठा भी सिद्ध होगा।

इतना कहकर वह तेजवान युवक भी डंडा लिये उसी ओर चला गया जिस ओर तीन वृद्ध व्यक्ति गये थे।

साहूकारनी को कलियुगी नामी उस व्यक्ति की बात पर विश्वास तो नहीं हुआ परन्तु उसने सोचा कि ऐसा करने से यदि उसका मरा हुआ बेटा ही जी उठे तब भी बहुत बड़ी बात है। वह कंवारा रह जायेगा कोई बात नहीं, बिना कारोबार के रह जायेगा, कोई बात नहीं जिंदा तो रहेगा। उसने हिम्मत बांधी। बेटे की लाश की गठरी सिर पर उठाई और फिर राजा के पास चल पड़ी।

राजा ने दमयंती को फिर लाश सिर पर उठाये वापस आते देखा तो बहुत नाराज हुआ। उसने कहा–

''मूर्ख औरत लाश सड़नें लग पड़ी है। इससे सड़ांध चलने लगी है। इसको जलाया क्यों नहीं?''

दमयंती ने राजा से प्रार्थना की—''महाराज मैंने झूठ कहा था कि देवीदास को मेरा एक लाख रुपया देना है। कृपा करके आप उसे दोबारा बुलायें ताकि मैं सच बता सकूं और मेरा बेटा जीवित हो सके।''

राजा को लड़के का ख्याल आने पर दया आ गई। उसने अपने सिपाही भेजकर देवीदास को बुलाया। उसके आने पर राजा ने साहूकारनी को सच बताने का हुक्म दिया।

साहूकारनी ने कहा—''महाराज! सच तो यह था कि मेरे पति ने देवीदास के पास चार लाख रुपये जमा करवाये थे। मैंने इस डर से कम बताये थे कि देवीदास इतनी बड़ी रकम देने से मुकर न जाये और परिणामस्वरूप मेरा बेटा अविवाहित और बिना कारोबार के न रह जाये।''

चार लाख की बात सुनकर देवीदास आग-बबूला हो उठा। राजा को भी क्रोध आ गया। उसने सिपाहियों को हुक्म दिया, इस झूठी को धक्के देकर बाहर निकाल दो। एक लाख बोलने पर लड़का मर गया। अब चार लाख बता रही है।''

साहूकारनी ने गिड़गिड़ाते हुये कहा—''महाराज मुझे अपने बेटे के सिर पर हाथ रखकर कसम खाने की आज्ञा तो दो।''

राजा अंततः मान गया। साहूकारनी ने गठरी खोली।

अपने बेटे का सिर नंगा किया और कहा—''अगर यह सच है कि मैंने देवीदास से चार लाख रुपया लेना है तो मेरा पुत्र जी उठे।'' साहूकारनी के बोलने की देर थी कि लड़का राम-राम करता, आंखें मलता हुआ उठ खड़ा हुआ। राजा और देवीदास दोनों आश्चर्यचकित थे। राजा ने देवीदास को हुक्म दिया—

''साहूकारनी को चार लाख रुपया दे दो।'' साथ में दंड भी दिया झूठ बोलने का। यह है—कलियुग।

●.

किस्मत का खेल

✍ केशवचन्द्र

एक लड़का था। अभी वह छोटा ही था कि वह नौकरी की तलाश में निकल गया। वह एक शहर में पहुंचा। वहां एक भड़भूंजे के यहां उसे नौकरी मिल गई। नौकरी करते-करते उसकी आयु तीस बरस की हो गई परन्तु उसकी किस्मत नहीं बदली।

एक दिन वह एक साधु के पास गया। उसने साधु से पूछा—"महाराज! मैं तीस बरस का हो गया। भड़भूंजे का नौकर बना था। अभी तक वहीं हूं। क्या कभी मेरी किस्मत भी बदलेगी? क्या आप जानते हैं कि मेरी किस्मत कहां है?"

साधु ने कहा—"बेटा! तेरी किस्मत तो समुद्र के पार है। तू जा और उसे खोज कर ले आ।"

उस युवक ने साधु का कहना मान लिया और उसी समय वह अपनी किस्मत की तलाश के लिये रवाना हो गया। वह चलता गया। रास्ते में बड़े-बड़े पहाड़ आये, जंगल आये और वड़ी-बड़ी नदियां आईं। वह सबको पार करता चला गया। वह एक ऐसे स्थान पर पहुंचा जहां सुन्दर मैदान था। वह पानी के एक शीतल स्रोत के पास बैठ गया। शीतल जल पिया और जरा सुस्ताने के लिये लेट गया। थका तो था ही। उसे एकदम गहरी नींद आ गई।

न जाने वह उस स्थान पर कितनी देर सोया। परंतु जब उठा तो उसने देखा कि उसके पास एक बहुत ही सुन्दर लड़की बैठी हुई है। उसके जाग जाने पर लड़की ने पूछा—"तू कहां जा रहा है?"

लड़के ने उत्तर दिया—"मैं किस्मत की तलाश में जा रहा हूं। परन्तु तू मुझे क्यों पूछ रही है?"

लड़की ने कहा—"मैं भी अपनी किस्मत की इंतज़ार में हूं। इतनी बड़ी हो गई परन्तु मेरा ब्याह नहीं हो रहा। तू जा तो रहा ही है। मेरी किस्मत से भी पूछ आना कि मेरा ब्याह न होने का क्या कारण है? ब्याह कब होगा और कैसे होगा? जो भी

उपाय मेरी किस्मत बताये वह याद रख कर लाना।''

लड़के ने कहा—''अच्छा, मैं ज़रूर पता कर आऊंगा, पर तू मुझे कहां मिलेगी?''

''मैं तुझे इसी स्थान पर मिल जाऊंगी।'' लड़की ने उत्तर दिया।

लड़के ने लड़की से विदा ली और अपने सफ़र पर आगे रवाना हो गया।

आगे चलते-चलते उस लड़के को बड़ का एक ऐसा पेड़ मिला जो आधा हरा था, आधा सूखा। लड़का पेड़ की वैसी हालत देखकर बहुत हैरान हुआ। उसने बड़ के पेड़ से पूछा—''तेरा यह हाल कैसे हो गया?''

बड़ के पेड़ ने उत्तर दिया—''मुझे नहीं पता भाई।'' फिर बड़ के पेड़ ने उससे पूछा—''तू कहां जा रहा है?''

''मैं तो जा रहा हूं अपनी किस्मत की तलाश में, पर तू मुझे क्यों पूछ रहा है?'' लड़के ने कहा।

बड़ के पेड़ ने उत्तर दिया—''मैं भी तो अपनी किस्मत की इंतज़ार में हूं। पर अब तू इसी काम के लिये जा रहा है तो मेरी किस्मत से भी ज़रा पूछ कर आना कि मैं पूरा हरा कैसे होऊंगा।''

लड़के ने कहा—''अच्छा मैं ज़रूर पता कर आऊंगा पर तुझे बताऊंगा कैसे?''

बड़ के पेड़ ने कहा—''तू मेरी खातिर इसी रास्ते वापस लौटकर आना।''

लड़के ने उसे बताया—''कोई बात नहीं, मैं ऐसा ही करूंगा।'' यह कहकर वह अपने सफ़र पर आगे रवाना हो गया।

रास्ते में चलते-चलते आगे उसे एक बहुत ही सुन्दर घोड़ा मिला। उसने सोचा कि यदि वह घोड़ा उसके पास होता तो कितना अच्छा होता। उसने घोड़े को कहा—''ओ भाई! घोड़े तू मेरे साथ चल पड़।''

घोड़े ने उत्तर दिया, ''आज तक कोई सवार मुझ पर नहीं बैठा। तू भी नहीं बैठेगा फिर साथ चलने का लाभ ही क्या? पर तू जा कहां रहा है?''

''मैं तो जा रहा हूं अपनी किस्मत की तलाश में। पर तू मुझे किसलिये पूछ रहा है?'' लड़के ने घोड़े से पूछा।

घोड़े ने कहा—''मैं भी तो किस्मत का ही मारा हूं जो कोई भी आदमी मेरी सवारी के लिये तैयार नहीं होता। तू मेरी किस्मत से भी यह पूछकर आना कि मुझे कब और कैसे सवार मिलेगा?''

लड़के ने उत्तर दिया, ''ठीक है, मैं पता कर आऊंगा, पर तुझे कैसे बताऊंगा?''

घोड़े ने निवेदन किया, ''तू मेरी खातिर इसी रास्ते लौट कर आना।'' लड़के ने कहा—''ठीक है, मैं ऐसा ही करूंगा।''

वह अपने अगले सफ़र पर फिर रवाना हो गया। आगे चलकर उसे एक

मगरमच्छ मिला जो रेत पर इधर-उधर बल खा रहा था। लड़के ने उससे पूछा, "भाई तुझे क्या हुआ है, तू इतनी उठ-बैठ क्यों कर रहा है?"

मगरमच्छ ने उत्तर दिया, "भाई मेरे पेट में बहुत ज़ोर का दर्द हो रहा है। पता नहीं इसका क्या कारण है। पर तू कहां जा रहा है?"

लड़के ने उत्तर दिया, "मैं जा रहा हूं अपनी किस्मत की तलाश में। पर मुझे क्यों पूछ रहा है?"

मगरमच्छ ने उत्तर दिया, "मेरे साथ भी तो किस्मत का ही चक्कर है। अच्छा-भला था, पता नहीं क्या खा लिया जो दर्द से पेट फटा जा रहा है। तू मेरी किस्मत से भी पूछकर आना कि मेरा पेट दर्द कैसे ठीक होगा?"

लड़के ने कहा, "ठीक है मैं ज़रूर पूछ आऊंगा, परन्तु तुझे बताऊंगा कैसे?"

मगरमच्छ ने मिन्नत के स्वर में कहा, "तू मेरी खातिर ज़रूर इसी रास्ते वापस लौटना। लड़के ने कहा, "चलो कोई बात नहीं, मैं ऐसा ही करूंगा।"

वहां से भी वह आगे रवाना हो गया। अंत में वह समुद्र के तट पर जा पहुंचा। वहां उसे एक आदमी बैठा हुआ मिला। लड़के ने उससे पूछा, "तू कौन है भाई, यहां अकेला क्यों बैठा है?"

उसने उत्तर दिया, "मैं तेरा कर्म हूं। जब तूने यह निश्चय कर लिया कि किस्मत की तलाश करके ही छोड़ूंगा तो मेरा जन्म भी उसी समय हो गया और तब से लगातार मैं तेरे साथ चल रहा हूं। मैंने सोचा कि तुझे अब और प्रयास न करने पड़ें अर्थात् समुद्र के उस पार न जाना पड़े जिसमें पता नहीं कितना समय लग जाये, अतः मैं ही वे सब बातें बता दूं जो तू अपनी किस्मत से जानना चाहता है। मगरमच्छ कैसे ठीक होगा, घोड़े को सवार कैसे मिलेगा, आधा हरा, आधा सूखा बड़ कैसे हरा होगा और उस सुन्दर लड़की का ब्याह कैसे होगा, उनकी किस्मत उनकी मदद कैसे करेगी, यह भी मैं तुझे बता दूंगा। तू सुन, मैं बताता हूं—

मगरमच्छ को कहना कि वह तब ठीक होगा यदि वह मेरी गोद में आकर उल्टी करेगा। उसने गलती से एक रानी का नौलखा हार निगल लिया है।

घोड़े को कहना, "तुझ पर रखे जाने के लिये जो काठी बनवाई गई है उस पर 'सीताराम' शब्द खुदा हुआ है। उस शब्द को पढ़कर कोई भी सवार तेरे ऊपर नहीं चढ़ता। वह शब्द काठी पर से मिटाने के लिये कहना और फिर देखना लोग उस पर सवार होने के लिये तरसेंगे।"

बड़ के पेड़ के नीचे किसी ने धन के चार चरुए दबा रखे हैं। तू ही जाकर उस धन को निकाल लेना। बड़ का सारा पेड़ हरा-भरा हो जायेगा।

सुन्दर लड़की को जाकर बताना, "तूने पिछले जन्म में अपने पति के हिस्से

का सत्यनारायण व्रतकथा का प्रसाद भी खुद ही खा लिया था। इसी कारण आज तक तेरा ब्याह नहीं हुआ। तू सत्यनारायण की कथा करवा, लोगों को भोज दे, फिर देख क्यों नहीं होता तेरा ब्याह!"

ये सब बातें बताने के बाद उसने कहा, "अब तुझे तेरी किस्मत मिल गई। जा वापस लौट जा और मजे कर।"

लड़का अपने कर्म से सारी बातें सुनकर वापसी यात्रा पर चल पड़ा। पहले पहुंचा वह मगरच्छ के पास। वह बेचारा वैसे ही बेचैनी से तड़प रहा था। लड़के को लौटते देख वह बड़ा प्रसन्न हुआ। लड़के ने कहा, "आओ भाई मगरमच्छ! मेरी गोद में आकर उलटी कर। फौरन ठीक हो जायेगा। तेरी किस्मत ने मुझसे इतना ही कहा है।"

मगरमच्छ चला आया। उसने उसकी गोद में उलटी की। उसके पेट से नौलखा हार बाहर निकल आया। उसके निकलने पर वह बिल्कुल ठीक हो गया। उसने लड़के का बहुत धन्यवाद किया और पानी में जा घुसा। लड़का नौलखा हार लेकर अपनी अगली यात्रा पर चल पड़ा।

चलते-चलते वह जा पहुंचा बड़ के पेड़ के पास। उसने पेड़ से कहा, "भाई बड़ के पेड़ तेरी जड़ों में किसी ने चार चरुए दबा रखे हैं। तेरी किस्मत ने कहा है कि तू वह धन मुझे निकालने देना, तू पूरा हरा हो जायेगा।"

यह सुनकर बड़ बहुत प्रसन्न हुआ। उसने लड़के को कहा, "तू जल्दी से धन के चरुए खोद डाल।" लड़के ने वह चरुए खोद निकाले। बड़ का पेड़ पूरा हरा हो गया। उसने लड़के को बहुत आशीषें दीं। उसे धन भी प्राप्त हुआ और आशीषें भी।

आगे जाकर पहुंचा वह सुन्दर घोड़े के पास। वह मैदान में चर रहा था। लड़के ने उसे अपने पास बुलाया और उसे बताया, "देख भाई घोड़े! तेरी किस्मत ने यह कहा है कि तेरे ऊपर रखी जाने वाली काठी पर 'सीताराम' शब्द खुदा हुआ है। तू काठी मेरे पास ला। मुझे कहा है कि मैं काठी पर से वह शब्द मिटा दूं। फिर तो तेरी सवारी के लिये लोग तरसेंगे।"

घोड़ा उसके पास काठी उठा लाया। लड़के ने काठी पर खुदा 'सीताराम' शब्द मिटा दिया और पहले खुद ही घोड़े पर सवार हो गया। घोड़ा खुशी-खुशी उसके साथ चल पड़ा।

आगे चलकर पहुंचे वे उस मैदान में जहां पर पानी के पास उस लड़के को वह सुन्दर लड़की मिली थी। वे अभी थोड़ा विश्राम भी न कर पाये थे कि वह लड़की उसके पास आ पहुंची। लड़के ने उसे बताया, "देख भागवान तेरी किस्मत ने यह कहा है कि पिछले जन्म में तूने अपने पति के हिस्से का भी सत्य-नारायण व्रतकथा

का प्रसाद खा लिया था। उसी कारण तू आज तक कुंवारी रही। चल, चलकर सत्यनारायण की कथा करवाते हैं। उसके बाद तेरा विवाह हो जायेगा।''

लड़की बहुत प्रसन्न हुई। वह लड़के को भी अपने घर ले गई। घर जाकर लड़की ने सत्यनारायण की कथा करवाई। लोगों को प्रसाद बांटा और भोजन करवाया।

बाद में उस लड़की ने उस लड़के से ही विवाह कर लिया। लड़के ने उसको नौलखा हार भेंट किया।

जब लड़का किस्मत की तलाश में चला तो उसे नौलखा हार, दबा हुआ धन, बहुत ही सुन्दर घोड़ा और बहुत सुन्दर पत्नी प्राप्त हुई।

जो भी कुछ तलाश करने चले, उसे जरूर कुछ न कुछ प्राप्त होता ही है।

●

लाल घोड़ा

✍ राजेन्द्र कुमार

किसी जमाने में एक गांव में एक किसान रहता था। उसके केवल एक ही लड़का था। अभी वह छोटा-सा ही था कि उस लड़के की मां का देहान्त हो गया। उस किसान ने दूसरे लोगों के कहने पर दूसरा विवाह कर लिया, यह सोचकर कि कम से कम बच्चे की देखभाल तो ठीक ढंग से होगी; पर उसकी सौतेली मां उसे बिल्कुल भी नहीं चाहती थी। उस लड़के का नाम उसके पिता ने धर्मसिंह रखा था, पर सभी उसे धर्मू कहकर पुकारते थे। बेचारे धर्मू को बचपन में ही घर का सारा काम करना पड़ता था, फिर भी सौतेली मां का व्यवहार उसके प्रति क्रूर ही होता था। वह उसे गालियां देते नहीं थकती थी।

कुछ समय बाद उसके अपने दो बेटे पैदा हो गये। फिर तो धर्मू के प्रति उसका व्यवहार और भी बर्बरतापूर्ण हो गया। अपनी सन्तान हो जाने के बाद वह सोचने लगी कि यह धर्मू कहीं चला जाये या किसी न किसी तरह मर जाये तो यह सारी जमीन-जायदाद मेरे बेटों को मिल जायेगी। वह रोज धर्मू को मारती-पीटती; गेहूं के चूरे की रोटियां बनाकर दे देती और भेड़-बकरियां चराने भेज देती, शाम को फिर वैसी ही चूरे की रोटियां खिलाकर बाण की रस्सी की चारपाई पर सुला देती और अपने बेटों को अच्छा-अच्छा खिलाती और खूबसूरत कपड़े पहनाकर उन्हें बड़े आराम से रखती।

धर्मू चूरे की रोटियां खाकर प्रातः ही भेड़ें लेकर जंगल की ओर चला जाता और शाम को लकड़ियों का गट्ठर लेकर आता और वही चूरे की रोटियां खाकर, अपनी चारपाई पर सो जाता। इस तरह समय के साथ-साथ वे तीनों लड़के जवान हो गये।

धर्मू के दोनों सौतेले भाई तो सारा दिन सुन्दर-सुन्दर कपड़े पहन कर इधर-उधर घूमते रहते थे और धर्मू को भेड़-बकरियां लानी पड़ती थी। इतना कुछ होने के पश्चात् भी उसकी सौतेली मां के व्यवहार में कभी थोड़ा-सा भी अन्तर नहीं आया। उसकी गालियों की बौछार प्रतिदिन धर्मू को सहनी पड़ती। "तू मूआ तू खाने के लिये

अच्छा है, पर काम के लिये बखार आने लगता है। यदि ऐसा भाग्यवान होता तो अपनी मां को नहीं खा जाता। भैंसे के समान शरीर हो गया पर अभी तक अक्ल नहीं आई कहीं जाकर मरता भी नहीं।"

धर्मू का पिता भी अपनी पत्नी के व्यवहार से बहुत दुःखी रहता था, पर पत्नी पर उसका भी कोई वश नहीं चलता था। धर्मू भी इन गालियों से बहुत दुखी रहता था।

एक दिन सौतेली मां ने धर्मू को मरवाने के लिये एक षड्यंत्र रचा। भेड़ें चराने के बाद शाम को जब धर्मू घर आया तो उसने रोना-चिल्लाया शुरू कर दिया। अरे! मैं मर गई लोगों! मेरी टांग में 'बागर' (प्रकुपित वायु का दर्द) हो गया. ..परिवार के सभी आदमी उसके पास जमा हो गये, कोई उसके हाथों की मालिश करने लगे तो कोई टांगें दबाने लगे।

धर्मू की समझ में नहीं आ रहा था कि अचानक आज मौसी को क्या हो गया ...वह चुपचाप एक कोने में जाकर खड़ा हो गया। थोड़ी देर के पश्चात् उसने धर्मू को आवाज देकर कहा—ओ धर्मू! कहां मर गया। धर्मू ने डरते-डरते उत्तर दिया "मौसी मैं यहीं हूं" वह दो-चार गालियां देती हुई बोली—यहां के बच्चे; मेरे दर्द से प्राण निकल रहे हैं और इसे देखो, अपनी मां के शोक में कोने खड़ा है। जा कहीं से मेरे लिये रीछ की ताजी चर्बी ले आ।

इस जोखिम भरे काम को सुनकर धर्मू घबरा-सा गया उसने डरते हुए कहा कि मौसी! ताजी चर्बी तो रीछ को मारकर ही मिलेगी और मैं अकेला रीछ कैसे मारूंगा। धर्मू के इतना कहते ही उसकी सौतेली मां ने सारा घर ही सिर पर उठा लिया—

"तेरी उस मां ने तुझे पैदा ही क्यों किया, यदि तुझसे इतना सा काम भी न हो सके। चाहे कहीं से भी ला। पर मुझे हर हालत में ताजा चर्बी चाहिये, याद रखना यदि खाली हाथ आया तो मैं तेरी हड्डी-पसली तुड़वा दूंगी।"

धर्मू चुपचाप चूरे की रोटियां लेकर जंगल की ओर चल पड़ा। चलते-चलते वह सोचता रहा कि रीछ की चर्बी प्राप्त करना इतना आसान नहीं है। रीछ के सामने जाना तो स्वयं को मौत के मुंह में धकेलने जैसा है और यदि खाली हाथ लौटता हूं तो मौसी की गालियां और मार। दोनों ही तरह से उसकी जान पर आ बनी थी।

सोचते-सोचते जब वह जंगल के पास पहुंचा तो उसे दूर आग जलती हुई दिखाई दी। उसके कदम स्वतः ही आग की ओर बढ़ चले।

आग के पास पहुंचते ही उसने देखा कि एक अजगर ने एक साधु को अपने लपेटे में लेकर जकड़ रखा है। अजगर साधु को निगलने को तैयार ही था कि धर्मू ने झट से जलती हुई एक लकड़ी उठाकर अजगर की गर्दन को दबा दिया।

आग का स्पर्श होते ही उसके लपेटे ढीले पड़ते गये और साधु ने स्वयं को आजाद करा लिया।

थोड़ी देर तड़पने के बाद वह अजगर मर गया और धर्मू ने लकड़ी की सहायता से उसे दूर फेंक दिया। फिर साधु के पांव छूकर उसके पास बैठ गया।

महात्मा ने उसकी पीठ थपथपा कर कहा—बच्चा! तू तो मेरे लिये भगवान बनकर इस जंगल में प्रकट हो गया। तूने मेरे प्राण बचाये इसके बदले यह साधु तुम्हें क्या दे सकता है; पर तुम इस समय, रात के अन्धेरे में, इस भयानक जंगल में क्या करने आये थे? धर्मू, जो थोड़ी देर के लिये अपनी समस्या को भूल गया था; महात्मा के पूछने पर फिर से उसी कशमकश के द्वन्द्व में फंस गया और बोला—

"बाबा! मैं यहां रीछ की ताजा चर्बी लेने आया हूं। दूर से मुझे यहां आग जलती दिखाई दी तो इस तरफ चला आया।" साधु ने बड़ी हैरानी से पूछा—रीछ की चर्बी? वह किसलिये चाहिये? महात्मा के पूछने पर धर्मू ने उसे सारी बात सुना दी और बोला कि बाबा! मेरे लिये दोनों ही तरफ मुश्किल है।

पूरी बात सुनने के पश्चात् साधु भी थोड़ी देर के लिये सोच में पड़ गया और थोड़ी देर चुप रहने के बाद बोला—"बच्चा! वह तेरी मौसी है या राक्षसी! पर कोई बात नहीं, तूने इस साधु की प्राण रक्षा की है तो तेरे लिये भी कुछ न कुछ करना ही पड़ेगा।"

"इस समय तो मुझे भूख लगी है, यदि तेरे पास कुछ खाने को है तो निकाल" साधु की बातों से धर्मू को थोड़ी आशा बंधी। उसने चूरी निकाल कर महात्मा के सामने रख दीं। रोटी खाते-खाते साधु उससे घर के बारे में बातें पूछता रहा और धर्मू भी सभी कुछ बताता रहा। रोटी खाने के बाद साधु बोला—

"बच्चा! भगवान की माया का कोई भी अन्त नहीं। अब देखो मेरी जान बचाने के लिये उसने तुम्हें यहां भेज दिया और तुम्हारी मुश्किल आसान करने के लिये मुझे यहां, इस भयानक जंगल में बिठा दिया।"

इतना कहकर साधु ने अपनी झोली से एक लगाम निकाली और तीन बार धरती पर पटका। लगाम के पटकते ही दूर कहीं घोड़े के हिनहिनाने और टापों की आवाज सुनाई दी।

धीरे-धीरे वह आवाज निकट और निकट आने लगी। कुछ ही समय में वह घोड़ा वहां आ पहुंचा; लाल रंग के उस घोड़े के मुंह से आग की लपटें निकल रही थीं और कानों से धुयें के बादल निकल रहे थे। खूब हट्टा-कट्टा, हाथी के समान वह घोड़ा जब दौड़ता था तो उसके खुरों से जमीन में गड्ढे पड़ते जाते थे।

धर्मू ने आज तक ऐसा घोड़ा नहीं देखा था। वह इस अजीब घोड़े को

देखकर डर गया था। पर वह घोड़ा चुपचाप शान्त होकर महात्मा के पास आकर खड़ा हो गया।

घोड़े के सामने खड़े होकर साधु बोला—"लाल घोड़े! मेरी कामना पूरी कर। घोड़ा मनुष्यों की आवाज में बड़ी विनम्रता से बोला—आज्ञा दो मेरे मालिक! धर्मू ने जब घोड़े को मनुष्यों की आवाज में बोलते सुना तो उसकी आंखें हैरानी से फटी की फटी रह गई। साधु ने लगाम कसने के बाद घोड़े पर सवार होते हुये कहा—

'मुझे रीछ की ताजा चर्बी चाहिये।' उसने धर्मू को भी अपने पीछे बिठा लिया और घोड़ा हवा से बातें करने लगा। उसके हिनहिनाने और टापों की आवाजों से सारा जंगल गूंज रहा था। उसके मुंह से लगातार आग की लपटें निकल रही थी। पता नहीं कितनी देर वह घोड़ा जंगल में इधर-उधर भटकता रहा, दौड़ता रहा।

एक जगह मुंह से निकलने वाली आग की रोशनी में उसे एक रीछ दिखाई दिया। फिर क्या था रीछ के नजर आते ही घोड़े ने एक लम्बी छलांग मारकर अपने दोनों अगले खुर रीछ की छाती पर रख दिये और उसके मुंह पर आग की लपटें छोड़ दी। रीछ बेचारा थोड़ी देर तड़पा और फिर ठंडा पड़ गया। उसका सारा मुंह जल गया था।

धर्मू ने घोड़े से उतरकर रीछ की चर्बी निकाली और फिर सवार हो गया। साधु ने घोड़े को पुचकारते हुये कहा—"चल बेटा! जहां से लाया वहीं पहुंचा भी दे।" घोड़ा पीछे मुड़कर फिर हवा से बातें करने लगा और थोड़ी देर में उन दोनों को वहीं आग के पास पहुंचा दिया।...घोड़े से उतर कर साधु ने लगाम खोलकर अपने पास रख ली और घोड़ा जिधर से आया था, उधर चला गया।

धर्मू ने भी महात्मा के पांव छूकर धन्यवाद करते हुये कहा—बाबा आपकी कृपा से मेरा यह काम आसानी से हो गया, अब यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं चलूं। साधु ने उसे आशीर्वाद देते हुये कहा—बेटा! कृपा तो उस परमपिता की समझो।

हमने इस विश्व के मायाजाल से सम्बन्ध तोड़कर संन्यास ले लिया है। इस अपने पराये के जंजाल से बचकर इन जंगलों के एकान्त में परमेश्वर का भजन करते हैं। पर तू अभी भी इस मायाजाल के घेरे में फंसा है।

तू ऐसा कर कि इस लगाम को अपने साथ ले जा, कभी मुसीवत में काम आयेगी। कहीं भी जरूरत पड़ जाये तो इस लगाम को तीन बार धरती पर पटको तो यह लाल घोड़ा तेरे पास आ जायेगा और जरूरत पूरी होने पर इस लगाम को फिर अपने पास रख लेना। यह सारी बातें समझ लेने के बाद फिर से साधु का धन्यवाद करके घर की ओर चल पड़ा। रास्ते में उसे भूख महसूस होने लगी, पर वह रुका नहीं, चलता ही रहा।

घर पहुंचते-पहुंचते तो उसकी भूख और भी बढ़ गई थी, घर पहुंचते ही उसे भीतर से बड़ी लुभावनी खुशबू आई। उसने सोचा कि आज बड़ा स्वादिष्ट खाना बना होगा।

जब वह अपनी मौसी के पास गया तो वह अपने दोनों बेटों के साथ बैठकर मूंग के मीठे लड्डू खा रही थी।...उन लड्डुओं को देखते ही धर्मू के मुंह में पानी भर आया। उसने झट से रीछ की ताजा चर्बी मौसी के सामने रखी और कहा—

"मौसी मैं वह रीछ की ताजा चर्बी ले आया हूं।" इसके साथ उसे इस बात की हैरानी भी हो रही थी कि थोड़ी देर पहले जो रो-पीटकर पूरे घर को सर पर उठाये हुये थी, अब बड़े मजे में अपने बेटों के साथ लड्डू खा रही हैं। उधर उसकी सौतेली मां उसे जीवित देखकर हैरान थी। वह कभी उस चर्बी को देख रही थी, जो अभी-अभी धर्मू ने उसके सामने रखी थी और कभी धर्मू को जिसके शरीर पर कहीं एक खरोंच तक नहीं थी।

रीछ की चर्बी के लिये भेजकर वह अपनी ओर से उसे मौत के अन्धेरे कुएं में धकेल चुकी थी। उसने शीघ्र ही अपने भावों पर नियंत्रण कर लिया और उसे कोसती हुई बोली—"यदि चर्बी ले के आ गया तो कौन सा बड़ा रण जीतकर आया है...इतना सा काम क्या किया कि स्वयं को बड़ा तीस मारखां समझ बैठा है, जा जाके सो जा सुबह भेड़ें लेकर जंगल जाना है।"

धर्मू बेचारा चुपचाप वहां से अपने बिस्तर पर आकर लेट गया। रह-रहकर उसकी आंखों के सामने जंगल का दृश्य घूम रहा था। वह सोच रहा था कि यदि आज वह साधु न मिला होता तो मैं क्या करता। मौसी को तो मेरी बिल्कुल भी परवाह नहीं है। ऐसे सोचते-सोचते उसे नींद आ गई। प्रातः होते ही उसने भेड़ों-बकरियों को खोला और जंगल की ओर चल पड़ा। यह तो उसका रोज का काम था। कभी खेतों पर जी-तोड़ मेहनत करना। तो कभी भेड़-बकरियां लेकर दिन भर उन्हें चराने के लिये जंगल में भटकना। इसी तरह कई दिन बीत गये।

धर्मू की सौतेली मां उसे रोज ही कोई न कोई ऐसा काम बता देती जिसमें ज्ञान का जोखिम हो पर धर्मू उस लाल घोड़े की सहायता से हर काम को कर लेता था। मन ही मन वह उस साधु महात्मा का बड़ा धन्यवाद करता था कि उसने यह चमत्कारी लगाम देकर उस पर बड़ा उपकार किया है।

शाम को जाते ही उसे सौतेली मां की गालियां सुननी पड़ती थी। धर्मू को ठिकाने लगाने का हर प्रयास जब असफल हो गया तो एक दिन उसकी सौतेली मां ने उसकी रोटियों में जहर मिलाकर उसे भेड़-बकरियों के साथ जंगल भेज दिया।

जंगल में पहुंच कर धर्मू ने भेड़ों और बकरियों को चरने के लिये इधर-उधर, तितर-बितर कर दिया और स्वयं एक पेड़ की छाया में रोटियों की पोटली पास में

रखकर लेट गया। उसी समय एक बन्दर वहां आया और रोटियों की पोटली उठाकर पेड़ पर चढ़ गया। धर्मू काफी देर तक उसके पीछे भागता रहा और बन्दर एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर कुलांचे भरता रहा।

जब धर्मू थक कर एक जगह बैठ गया तो उस बन्दर ने रोटियां खानी शुरू की और धर्मू के देखते ही देखते वह सारी रोटियां खा गया, पर शीघ्र जहर का कुप्रभाव उसके शरीर में फैल गया और वह पेड़ पर से नीचे गिरकर कुछ क्षण तड़पा और फिर ठण्डा पड़ गया। धर्मू हैरान होकर दौड़कर उसके पास गया तो देखा कि बन्दर का सारा शरीर नीला पड़ गया था...उसे समझते देर न लगी कि उसकी सौतेली मां ने रोटी में जहर मिलाकर उसे दे दी थी।

काफी देर तक वह इस पर सोच-विचार करता रहा, फिर उसने लगाम निकालकर तीन बार जमीन पर पटका और लाल घोड़ा हिनहिनाता, आग और धुआं छोड़ता वहां आकर शान्त खड़ा हो गया। धर्मू ने घोड़े की लगाम कसते हुये कहा–"लाल घोड़े मेरी कामना पूरी कर!" घोड़े ने भी मनुष्य की आवाज में कहा–

"आज्ञा करो मेरे मालिक।" उस पर चढ़ते हुये धर्मू ने कहा कि जहां कहीं बड़ा स्वादिष्ट भोजन मिले वहां ले चल। धर्मू की हैरानी में और वृद्धि करते हुये घोड़ा पुनः बोला–

मालिक! पहले तीन बार मेरे नीचे से होकर गुजरो फिर मेरी पीठ पर बैठो। घोड़े की बात सुनकर धर्मू का हैरान होना स्वाभाविक ही था फिर भी धर्मू ने घोड़े के कहने के अनुसार ही किया तो उसके अचरज का ठिकाना न रहा कि उसके फटे हुये और मैले कपड़े, खूबसूरत और किसी राजकुमार के कपड़ों के समान हो गये थे। उसके कमरबन्द के साथ एक खूबसूरत तलवार लटक रही थी।

थोड़ी देर तो धर्मू स्वयं का निरीक्षण ही करता रह गया। फिर जब वह लाल घोड़े पर सवार हुआ तो घोड़ा जोर से हिनहिनाता हवा की भांति दौड़ चला।

जितनी तेजी से घोड़ा दौड़ रहा था उतनी ही तेजी से उसके मुंह से आग की लपटें निकल रही थी। थोड़ी देर में उसने धर्मू को राजा के महल के पास पहुंचा दिया। धर्मू ने घोड़े की लगाम खोलते हुये कहा–"मुझे एक खूबसूरत घोड़ा दे दो और मेरे आने तक यहीं मेरी प्रतीक्षा करो।"

लाल घोड़े ने उसे एक और बर्फ की तरह सफेद और बहुत ही सुन्दर घोड़ा दे दिया। धर्मू उस घोड़े पर चढ़कर महल की ओर चल पड़ा। वहां जाकर धर्मू ने देखा कि वहां बहुत से दूसरे देशों से आये राजकुमार अपने-अपने घोड़ों पर इधर-उधर घूम रहे थे। धर्मू भी उन्हीं में मिलकर इधर-उधर टहलने लगा। थोड़ा आगे जाकर उसने देखा कि कुछ वैसे ही राजकुमारों जैसे नौजवान पंक्तिबद्ध बैठे थे

और उनके सामने चांदी की थालियां और कटोरियां रखी थीं।

धर्मू भी घोड़े से उतरकर उनके साथ बैठ गया और खूब पेट भरकर स्वादिष्ट खाना खाया। भर पेट खा लेने पर वह फिर से घोड़े पर चढ़कर औरों की तरह इधर-उधर टहलने लगा। वहां सभी धर्मू के सुन्दर कपड़ों और उसके सुन्दर घोड़े की ओर आकर्षित थे। धर्मू का व्यक्तित्व वहां सभी को प्रभावित किये हुये था।

वह किसी राजकुमार से कम नहीं लग रहा था। घूमते-घूमते धर्मू की दृष्टि महल की तीसरी मंजिल की एक खिड़की की ओर चली गई। वहां राजकुमारी सुन्दरा देई बैठी धर्मू के प्रभावशाली व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उसी की ओर देख रही थी। धर्मू की नज़रें जब उसकी नज़रों से मिली तो वह भी देखता ही रह गया। ऐसी गौरवर्ण, बेदाग और सुन्दरता की निधि उसने आज तक नहीं देखी थी।

एक बार उसकी नजर क्या मिली कि अब रह-रहकर नजरें वहीं तीसरी मंजिल की खिड़की पर ही अटक जाती थी मानो राजकुमारी को देख लेने के पश्चात् और कुछ भी देखना शेष न बचा हो और राज्य की सारी सुन्दरता सिमटकर उस खिड़की पर आकर ठहर गई हो। घूमते-घूमते जब धर्मू उस किले के नीचे से होकर गुजरा तो एक सफेद कमल का फूल उसकी गोद में आ कर गिरा।

धर्मू फूल को हाथ में लेकर देखता हुआ लाल घोड़े के पास पहुंच गया। वहां पहुंचकर उसने लाल घोड़े की लगाम कसी और बोला—"अब जहां से लाया था वहीं पहुंचा भी दे।" धर्मू के सवार होते ही वह घोड़ा हिनहिनाता हुआ हवा की तरह दौड़ चला। सूर्य ढलते-ढलते धर्मू अपनी भेड़-बकरियों के पास पहुंच गया।

वहां पहुंचते ही वह पहले की तरह तीन बार घोड़े के नीचे से गुजरा तो उसके बदन पर वही पहले वाले फटे पुराने और मैले कपड़े थे; उसने घोड़े की लगाम खोली घोड़ा जिधर से आया था उधर भाग गया। वह स्वयं भी भेड़-बकरियों को हांकता घर की ओर चल पड़ा।

अन्धेरा होने से पहले-पहले वह भेड़-बकरियों को उनके स्थान पर बन्द करके घर पहुंचा तो उसकी सौतेली मां उसे आज भी सलामत देखकर हैरानी के साथ सोचने लगी कि यह तो आज फिर जीवित लौट आया, इसका मतलब है कि इसने आज रोटियां नहीं खाई। उसने जब धर्मू को रोटियों के लिये पूछा कि आज तूने रोटी नहीं खाई; तो धर्मू उत्तर में हाथ धोते हुये बोला—

नहीं मौसी! मेरी रोटियां तो आज एक बन्दर उठाकर ले गया।...बस...फिर क्या था उसकी सौतेली मां ने उसकी खबर लेनी प्रारम्भ कर दी। "फिर तू किसलिये गया था, तुझे इतना भी होश नहीं कि कोई मेरी रोटियां उठाकर ले गया तो मैं छुड़ाने का प्रयत्न करूं। किसी दिन कोई इन भेड़ों को भी उठाकर ले जायेगा।

एक खोटे सिक्के के बराबर भी नहीं है हरामी! खा-खाकर मोटा हो रहा है और काम करती बार हाथ-पैर फूल जाते हैं।"

धर्मू चुपचाप बिना कुछ कहे वहां से खिसक गया और चूरे की रोटियां लेकर बाहर आ गया। आज भूख तो उसे थी नहीं; इसलिये रोटियां भेड़ों को खिलाकर अपनी चारपाई पर आकर लेट गया। लेटे-लेटे ही वह ख्यालों के सागर में गोते खाने लगा।

वह सफेद कमल का फूल उसने अपनी छाती पर लगा रखा था बार-बार सुन्दरा देई का चेहरा उसकी आंखों के सामने आ रहा था। वह सोच रहा था कि यदि वह भी उन दूसरे राजकुमारों की तरह किसी देश का राजकुमार होता तो देई से शादी अवश्य करता; पर फिर वह सोचने लगा कि कहां वह बड़े-बड़े देशों के राजकुमार और कहां मैं भेड़-बकरियां चराने वाला निपट गंवार गडरिया।

इसी तरह सोचते-सोचते उसे नींद ने अपनी आगोश में ले लिया और उसे थकान का अहसास भी न हो सका। रात को सपने में भी उसे राजकुमारी सुन्दरा देई ही नजर आती रही। सुबह होते ही धर्मू फिर चूरे की रोटियां लेकर, भेड़-बकरियां खोलकर उन्हें जंगल की ओर हांकने लगा। तभी उसे अपने दोनों सौतेले भाई घोड़ों पर सवार आते दिखाई दिये। इतनी सुबह उन दोनों को आते देखकर धर्मू बहुत हैरानी में था।

वे दोनों घोड़ों से उतरकर सीधे अपनी मां के पास जाकर कहने लगे और धर्मू उनकी बातें छुपकर सुनने लगा। वे कह रहे थे—"मां! राजा ने हर जगह सुन्दरा देई के विवाह की मुनादी करवा दी है। हम दोनों वहां राजकुमारों के भेष में घूमते फिरते रहे, पर कल कोई खूबसूरत राजकुमार सफेद घोड़े पर बैठकर वहां आया था। वह कौन था, इस बात का कोई पता नहीं चला।

राजा ने ऐलान किया है कि जो कोई भी नौजवान राजकुमारी के विवाह की शर्त पूरी करेगा, उसे राजकुमारी के साथ आधा राज्य भी मिलेगा। आधे राज्य की बात सुनकर उनकी मां के मुंह में पानी आ गया।

वह उन्हें समझाते हुये कहने लगी—"अरे तुम दोनों भी तो अब जवान हो गये हो, यदि तुम दोनों में से कोई भी राजकुमारी के विवाह की शर्त पूरी कर ले तो हम भी आधे राज्य के मालिक बन जायेंगे और शेष जिन्दगी आराम से गुजर जायेगी। ...थोड़ी देर चुप रहने के बाद उसने फिर पूछा—अच्छा ये तो बताओ कि शादी की शर्त क्या है?

इन दोनों में से एक ने कहा कि मां यही तो सबसे मुश्किल काम हैं। शर्त यह है कि यदि कोई नौजवान महल की तीसरी मंजिल की खिड़की पर बैठी राजकुमारी सुन्दरा देई के गले में, घोड़े पर सवार होकर सफेद कमल के फूलों की

माला पहनायेगा वही राजकुमारी का पति होगा। शर्त सुनकर धर्मू की सौतेली मां चुप हो गई। उनकी यह बातचीत सुनने के बाद धर्मू वहां से चला गया और जाते-जाते सोचने लगा कि सफेद कमल के फूल का मतलब अब समझ में आया।

राजकुमारी का मतलब था कि यह फूल जहां से फेंका गया है वहीं पहुंचाना भी है। और विशेषकर मेरे लिये यह 'निमंत्रण या चुनौती' कुछ न कुछ जरूर है क्योंकि यह फूल मुझे फेंका गया है।

इस तरह सोचते-सोचते वह जंगल में पहुंच गया। वहां पहुंचकर उसने भेड़ बकरियों को खुला छोड़ दिया और लगाम निकालकर स्वयं तीन बार धरती पर पटका। लगाम को पटकते ही लाल घोड़ा मुंह से आग की लपटें निकालता, धुएं के बादल छोड़ता और अपने खुरों से जमीन रौंदता हुआ धर्मू के पास आकर खड़ा हो गया। उसने झट से लगाम कसी और उस पर सवार होते हुये महल की ओर जाने का आदेश दिया।

लाल घोड़ा आदेश पाते ही हवा की भांति अबाध गति से दौड़ चला और महल के पास पहुंचते ही घोड़े को रोक कर धर्मू उतरा और तीन बार घोड़े के नीचे से गुजर कर अपना निरीक्षण करने लगा। आज फिर वह कल की तरह राजकुमार लग रहा था। पूरी तरह सन्तुष्ट हो जाने पर उसने लाल घोड़े से वही कल वाला सफेद घोड़ा मांगा और उसकी लगाम खोलकर एवं उसे यहीं प्रतीक्षा करने का निर्देश देकर; सफेद घोड़े पर सवार वहां से चल पड़ा।

आज भी उसने बड़ा स्वादिष्ट खाना खाया और सारा दिन घोड़े पर इधर-उधर घूमता रहा। जब राजकुमारी सुन्दरा देई तीसरी मंजिल की खिड़की पर आकर बैठी तो वहां घूम रहे सभी नौजवान राजकुमारी के रूप शृंगार को देखकर दंग रह गये।

सभी की नजरें राजकुमारी के सौन्दर्य रस का पान कर रही थी और राजकुमारी सुन्दरा देई की नजरें सफेद घोड़े पर सवार, ओजस्वी राजकुमार से दिखने वाले धर्मू पर एकटक बन्धी थी।...धर्मू जब भी उसकी ओर देखता तो उसे लगता मानो राजकुमारी की दोनों आंखें उसे कोई मौन सन्देश देना चाहती हों।

वह घूमता हुआ खिड़की के नीचे से गुजरा और वह कमल का सफेद फूल जोर से ऊपर की ओर फैंका।

फूल सीधा राजकुमारी की गोद में जाकर गिरा। उस फूल को देखकर राजकुमारी अत्यन्त प्रसन्न हुई।

उधर धर्मू लाल घोड़े के पास आकर, उस पर सवार हुआ और उसे लौट चलने का आदेश दिया।

आदेश पाकर लाल घोड़े ने उसे गन्तव्य स्थान पर पहुंचा दिया। वहां पहुंचते

ही उसने घोड़े की लगाम खोली तो लाल घोड़ा जिधर से आया था उधर ही चला गया। इधर धर्मू ने सूर्य ढलते-ढलते भेड़-बकरियां हांकी और घर की ओर चल पड़ा।

घर पहुंचकर उसने प्रतिदिन की भांति चूरे की रोटियां लीं और चुपचाप भेड़ों को खिलाकर अपनी चारपाई पर लेट गया।

भीतर तीनों मां-बेटों में बातें हो रही थीं; वह उनकी बातों को बड़े ध्यान से सुनने लगा। सौतेली मां का बड़ा लड़का कह रहा था—"मां! कल राजा ने सभी लोगों को शादी देखने के लिये महल में बुलाया है। कल जो भी राजा की शर्त पूरी करेगा उससे ही राजकुमारी का विवाह भी होगा।"

छोटा लड़का कहने लगा—"पर ऐसा घोड़ा किसके पास होगा जो तीसरी मंजिल तक छलांग लगाकर दिखायेगा, मुझे तो कहीं भी ऐसा घोड़ा होने की संभावना नहीं लगती। फिर शर्त पूरी होने का सवाल ही पैदा नहीं होता।"

उसकी मां बोली—"इस बात का पता तो कल लग ही जायेगा; पर तुम कहीं निराश होकर मैदान से हट मत जाना।" फिर वह हाथ जोड़कर भगवान से प्रार्थना करती हुई बोली—"हे भगवान यदि इन दोनों में से किसी ने भी विवाह की शर्त पूरी कर दी तो मैं तेरा जागरण करवाऊंगी"...तेरा मन्दिर बनवाऊंगी...तेरी कथा कराऊंगी...पता नहीं उसने ऐसी कितनी ही मनौतियां मान ली।

दूसरे दिन फिर धर्मू ने जंगल की ओर जाने की तैयारी करके सौतेली मां से रोटियां मांगी तो वह उसे घुड़कती हुई बोली—आज तू घर पर रहकर यहां पहरा देना, हम सभी राजकुमारी की शादी का तमाशा देखने जा रहे हैं।

धर्मू ने भी बड़े चाव से अपनी उत्कण्ठा प्रकट करते हुये कहा कि मौसी मैं भी तमाशा देखना चाहता हूं।

मुझे भी अपने साथ ले चलो। धर्मू की इस बात पर वह उसे आंखें दिखाती हुई बोली—"तुझे भी ले चलें...मर गया तू इतना बड़ा खूबसूरत। यहां घर पर क्या तेरी मां रहेगी। यहीं रहना यदि कहीं इधर-उधर गया तो मैं तेरी टांगें तुड़वा दूंगी। समझा।"

धर्मू को लताड़ने के बाद वह अपने दोनों बेटों के साथ चली गई। कुछ देर तो धर्मू वहां बैठा सोचता रहा कि महल की ओर अवश्य जाना है पर यदि कहीं इन लोगों ने मुझे पहचान लिया तो क्या होगा? उसे साधु की बातें भी एक-एक कर याद आने लगी।

वह सोचने लगा कि जो सौतेली मां टांग की दर्द का बहाना बनाकर मुझे रीछ की चर्बी के लिये मौत की गहरी खाई में भेज सकती है; वह कभी भी मेरा भला नहीं सोच सकती और जो रोटियों में जहर मिलाकर मेरी मृत्यु का समाचार सुनने को

बेताब थी, उससे कभी भी अपनेपन की उम्मीद नहीं की जा सकती।

उसने मन ही मन यह सोचकर कि जो भी होगा देखा जायेगा, जाने का निर्णय ले लिया और ऐसा निर्णय लेते ही उसने लगाम निकालकर तीन बार जमीन पर पटकी और इसी समय लाल घोड़ा आंधी-तूफान की तरह आग उगलता और धुआं उड़ाता वहां आया और शान्त होकर धर्मू के पास खड़ा हो गया।

धर्मू ने फटाफट घोड़े को लगाम कसी, उसके नीचे से गुजर कर बोला—"लाल घोड़े! आज मेरी सबसे बड़ी कामना पूरी कर!" घोड़ा सिर हिलाते हुये बोला—"आज्ञा दो मेरे मालिक!" धर्मू ने प्यार से उसे थपथपाते हुये कहा—

"एक तो मुझे सफेद कमल के फूलों का सुन्दर हार चाहिये और वह हार महल की तीसरी मंजिल की खिड़की पर बैठी राजकुमारी सुन्दरा देई के गले में नीचे से छलांग लगाकर पहनाना है।"

इतना कहकर धर्मू घोड़े पर सवार हो गया और घोड़ा तूफान बन दौड़ चला। राजकुमारों के वेश में धर्मू वह हार हाथ में लिये महल से कुछ दूर रुक गया और एक ऊंची सी पहाड़ी पर से तमाशा देखने लगा।

महल के लम्बे-चौड़े आंगन में बहुत से लोग एकत्रित हुये थे। राजा का पूरा दरबार लगा हुआ था और वजीर खड़े होकर राजकुमारी के विवाह की शर्त सुना रहा था, वह बोला—"प्रतियोगिता में भाग लेने आये नौजवानों! मैं एक बार फिर राजकुमारी के विवाह की शर्त आप सबको बता दूं...जो कोई भी तीसरी मंजिल की खिड़की पर बैठी राजकुमारी के गले में हार पहनायेगा उसी के साथ राजकुमारी का विवाह होगा; पर हार घोड़े पर सवार होकर पहनाना है।"

वहां उपस्थित सभी नौजवान और राजकुमार घोड़ों पर सवार होकर तैयार हो गये और एक-एक करके कोशिश करने लगे।

जो कोई भी घोड़ा दौड़ाता तो दौड़ाता ही रह जाता और कोई पहली मंजिल तक पहुंच जाता था पर कोई भी तीसरी मंजिल तक पहुंचने में सफल नहीं हो रहा था। उधर राजकुमारी की नजरें हर ओर सफेद घोड़े वाले धर्मू की तलाश कर रही थी।

एक-एक करके वह सभी उपस्थित लोगों का निरीक्षण कर चुकी थी पर उसे निराशा ही मिली और वह उदास सी हो गई। उधर सभी उम्मीदवार एक-एक करके हार मानकर बैठ गये।

इसी समय धर्मू ने देखा कि और कोई नहीं रहा तो उसने लाल घोड़े को उकसाते हुये कहा—

"मेरे प्यारे लाल घोड़े। अब कोई भी नौजवान मैदान में नहीं है। चलो! अब मौका मिला है कि तुम अपनी शक्ति का परिचय दो!" धर्मू की बात सुनकर जैसे

ही घोड़ा अपने दोनों अगले खुर उठाकर हिनहिनाया तो सभी का ध्यान उस ओर चला गया और जब उन्होंने घोड़े के मुंह से आग की लपटें निकलती देखी तो सभी डरकर पीछे-पीछे हट गये। राजकुमारी ने जब उसे पहचाना तो उसकी प्रसन्नता की कोई सीमा न रही।

धर्मू ने महल के आंगन के दो-तीन चक्कर लगाये और जब उसने जान लिया कि अब घोड़ा छलांग लगाने को तैयार है तो जोर से लगाम को झटका दिया और हार को हाथ में ठीक ढंग से थाम लिया।

...झटका लगते ही लाल घोड़े ने हिनहिनाते हुये जोर से छलांग लगाई...तीसरी मंजिल से राजकुमारी ने भी देखा कि घोड़ा उड़ता हुआ आ रहा है। जैसे ही घोड़ा खिड़की के बाहर से गुजरा वैसे ही धर्मू ने वह सफेद फूलों का हार राजकुमारी की ओर फैंका...हार सीधा जाकर उसके गले में गिरा और जमीन पर पांव पड़ते ही घोड़ा दूसरी ओर दौड़ गया। लोगों ने नीचे से तालियां बजाकर धर्मू की बहादुरी पर अपनी प्रसन्नता प्रकट की...थोड़ी दूर जाकर धर्मू ने लाल घोड़े से वही सफेद रंग का घोड़ा मांगा और उसकी लगाम खोलकर सफेद घोड़े पर सवार होकर वहीं आ गया।

राजा ने उसे अपने पास बिठाकर अपने घर परिवार के बारे में पूछा तो धर्मू ने बिना कोई बात छुपाये अपने बारे में सभी कुछ सच-सच बता दिया।

धर्मू की स्पष्टवादिता और निश्छल प्रवृत्ति से वह बहुत प्रभावित हुआ। उसने धर्मू के पिता को बुलाकर बड़े धूमधाम से राजकुमारी और धर्मू का विवाह सम्पन्न किया तथा आधा राज्य भी उन्हें सौंप दिया।

धर्मू की मां को जब दोनों के विवाह का पता चला तो वह बड़ी पछताई कि मैंने धर्मू को बहुत दुःख दिये हैं, बहुत बुरा भला कहा उसको। यहां तक कि उसे मौत के मुंह में धकेलने से भी जरा न हिचकी। पर अब क्या हो सकता था। वह मन मारकर फिर अपने बेटों के साथ उसी पुरानी झोंपड़ी में लौट गई और धर्मू अपने पिता और राजकुमारी के साथ वहीं महल में बड़े सुख से रहने लगा।

●

गुज्जर और सुनियार

✍ चंचल कुमार

गुज्जर और सुनियार अपने-अपने गांव के माने हुए ठग थे। उनके गांव भी नजदीक नजदीक थे। दोनों एक दूसरे को अच्छी तरह से पहचानते थे। एक दिन गुज्जर ने सुनियार को ठगने की सोची और सुनियार के पास जाकर कहता—"मुझे सोने की तलवार बना दे मैं तुम्हें उसके बदले में एक घड़ा घी का दूंगा। सुनियार मान गया और कल को बनाने का वादा किया कि तुम घी का घड़ा दे जाना और तलवार ले जाना।

दूसरे दिन गुज्जर घी का घड़ा दे गया और तलवार ले गया। देखते-देखते दो-तीन दिन बीत गये।

एक दिन सुनियार के लड़के का जन्म दिन था। जन्म दिन मनाने के उपरांत डोरी को गांठ लगाई और अपने रिश्तेदारों को भोजन के लिये बैठा दिया और सुनियार खुद घी का घड़ा लाकर एक-एक कड़छी बांटने लगा। पांच-सात कड़छी भोजन की थाली में परोसने के बाद जैसे ही घड़े से कड़छी निकालकर बर्तन (थाली) में डालने लगा तो उसकी निगाह कड़छी पर पड़ी उसमें घोड़े की लींद थी फिर उसने घड़े के अन्दर निगाह घुमाई तो उसमें भी लीद ही शेष थी। देखकर सभी रिश्तेदार भोजन छोड़कर अपने-अपने घर को गालियां देते हुए चले गये और सुनियार गुज्जर को लगा गालियां देने और सोचने लगा कि गुज्जर मेरा भी बाप निकला।

सुनियार ने भी लकड़ी की तलवार को सोने की पतरी चढ़ाई हुई थी जिसे गुज्जर को दिया था। गुज्जर बहुत खुश था कि मैंने सुनियार को ठग लिया है।

एक दिन सुनियार गुज्जर के पास आकर कहने लगा—"तुम बहुत ठग हो परन्तु मैं भी कम नहीं जिस तरह तुमने घी में लींद डाली थी उसी तरह मैंने लकड़ी की तलवार पर सोने की पतरी चढ़ाई है। यह सुनकर गुज्जर ने अन्दर से तलवार निकाली और तोड़कर देखा सच ही अन्दर लकड़ी थी।" गुज्जर ने सुनियार को कहा, हम दोनों ठग तो हैं। एक दूसरे को ठग कर क्या मिलेगा? हम आज के बाद दोनों

दोस्त रहे। मेरी बात मान अगर पैसे कमाने है तो हम दोनों कहीं दूसरी रियासत में जाकर ठगी करते हैं जो कमाएंगे आधा-आधा बांट लेंगे।

सुनियार को गुज्जर की बात पसन्द आई और एक दिन दोनों दूसरी रियासत (देश) में पहुंच गए। वहां उन्होंने सुना कि यहां के राजा को मरे हुए चार-पांच दिन हुए। सुनियार ने थोड़ी देर सोचा और गुज्जर को लेकर श्मशानघाट पहुंचा। शाम का समय हो रहा था। दोनों ने राजा की कब्र तलाश की और उसे उखाड़ दिया सुनियार ने गुज्जर को वहां दबा दिया और सांस के लिए छेद रहने दिया तथा खुद बन-ठन कर राजा के लड़के के पास पहुंचा और कहने लगा कि आपके पिता की मरने की खबर मुझे कल ही मिली मैंने उनसे चार लाख रुपये लेने हैं। वह तो अब इस दुनिया में नहीं हैं अब आप को ही देना होंगे। राजा के लड़के ने कुछ क्षण सोचकर कहा कि पिता ने तो ऐसी-वैसी कोई बात नहीं कही थी। मैं कैसे विश्वास करूं।

सुनियार बोला महाराज, अगर आपको विश्वास नहीं है तो खुद चलकर पूछ लो। राजा का लड़का और सुनियार राजा की क़ब्र पर पहुंचे और पूछा—पिता जी, आपने इन्हें पैसे देने को है। तो गुज्जर ने कब्र से कहा, "हां बेटा तुम इसको चार लाख रुपया दे दो नहीं तो मुझे चैन नहीं मिलेगा।" राजा के लड़के ने सच मानकर सुनियार को पैसे दे दिये और साथ में आदर-सत्कार किया। पैसों को देखकर सुनियार के दिल में बेईमानी आ गई और गुज्जर को कबर से बिना निकाले पैसे घोड़े के ऊपर लादकर अपने देश को रवाना हुआ।

गुज्जर उसका इंतजार करता रहा परन्तु सुनियार नहीं आया तो फिर गुज्जर समझ गया कि मुझे सुनियार धोखा दे गया। बहुत मुश्किल से बेचारा गुज्जर कब्र से बाहर निकला और बाजार में आकर एक मोतियों वाले जूते का जोड़ा खरीदा और जल्दी-जल्दी चलकर एक पहाड़ी से होकर सुनियार से भी आगे रास्ते पर पहुंच गया।

वह वहां विश्राम कर रहा था तो उसने दूर सड़क के मोड़ पर आगे-आगे घोड़ा और पीछे-पीछे सुनियार को आते देखा और जल्दी से एक जूता सड़क पर छोड़कर आगे निकल गया। सुनियार ने वह जूता देखा तो सोचने लगा अगर दूसरा भी होता तो मुझे बहुत आनन्द मिलता। पर एक जूता मैं क्या करूंगा? आगे को चल दिया एक मोड़ लांघने के उपरांत उसने दूसरा जूता भी देखा और फिर सोचने लगा कि अगर मैं पहले वाला जूता ले आता तो जोड़ा बन जाना था।

थोड़ी देर सोचने के बाद उसने घोड़े को एक तरफ चरने छोड़ दिया और खुद वापस जूता लेने आ गया। यह देखकर गुज्जर वृक्ष से उतरा और घोड़े को हांक कर घर पहुंचा।

जिस समय सुनियार वह दोनों जूते डालकर उस स्थान पर पहुंचा तो घोड़े को

न पाकर हैरान रह गया और फिर सोचा—बेचारा घोड़ा भूखा होगा। यहीं कहीं घास चर रहा होगा। यह सोचकर उसने चारों ओर ढूंढ़ा परन्तु घोड़ा नहीं मिला। सोचते-सोचते उसे गुज़्ज़र का ख्याल आया ऐसा न हो कि यह उसका ही चक्कर है। कौन फेंक सकता है नये जूते। यह ख्याल आते ही सुनियार अपने घर को जल्दी-जल्दी चल पड़ा और उधर गुज्जर अपने रहने के लिए जहां पशु का कमरा था वहां स्थान बनाकर रहने लगा। रोज शाम-सवेरे गुज्जर की पत्नी उसे रोटी-पानी छोड़ जाया करती थी और गुज्जर मजे से खा-पीकर लेटा रहता था। सुनियार अपने घरवालों से पूछता है कि गुज्जर आ पहुंचा है कि नहीं? तो उन्होंने कहा नहीं हमने तो देखा नहीं। ढूंढ़ते-ढूंढ़ते सुनियार को मालूम हो गया कि गुज्जर कहां है।

एक दिन सुनियार गुज्जर के घर आया और गुज्जरी से गुज्जर के बारे में पूछा तो वह इन्कार कर गई, कहती अभी तक नहीं पहुंचे हैं। परन्तु सुनियार ने उसकी चालाकी पकड़ ली क्योंकि उसी क्षण पशुओं के कमरे से घोड़ा हिनहिनाया। गुज्जरी कुछ डर सी गई। उसके मुंह से पसीना बहने लगा। बात को भुलाने के लिए सुनियार ने गुज्जरी से पानी का गिलास मांगा। गुज्जरी पसीने को पोंछती-पोंछती अन्दर वाले कमरे में गई। पीछे सुनियार ने कील पर लटकाया हुआ गुज्जरी का अच्छा-सा सूट उठाकर अपने थैले में डाल लिया और भोला-भाला बनकर अपने स्थान पर बैठ गया। गुज्जरी ने गड़वी को धोकर सुनियार को पानी पिलाया। सुनियार को प्यास तो थी नहीं परन्तु पीना ही पड़ा। गुज्जरी ने सुनियार से पूछा, वह तो आपके साथ गए थे।

सुनियार ने कहा, हां मेरे साथ गया हुआ था परन्तु आती बार रास्ते में बिछड़ गया, मैंने बहुत इंतजार भी किया फिर मैंने सोचा शायद घर आ गया होगा। गुज्जरी ने कहा, नहीं जी, अभी तक तो नहीं आये। मैं खुद उनका इंतजार कर रही हूं। अब तो राशन-पानी की भी तंगी है। सुनियार ने कहा, जब मित्र आएगा तो मुझे पता भेज देना। गुज्जरी ने कहा अच्छा जी मैं पता भेज दूंगी।

सुनियार दूसरे दिन जो गुज्जरी का सूट चुराया था उसको पहनकर गुज्जरी से पहले सूखी रोटी लेकर जहां पशु का कमरा था वहां गुज्जर के पास पहुंचा और बोली—लो जी रोटी। अपना बाजू उसकी ओर करते हुए रोटी दे दी। गुज्जर ने सूखी रोटी देखी और आग के समान गर्म होकर कहता है, तुम मर जाओ, सूखी रोटी क्यों लाई है। सुनियार गुज्जरी की आवाज बनाकर कहता है कि पैसे खत्म हो गए है। तो गुज्जर कड़क कर कहता है चूल्हे के पीछे जहां तुम रोटी बनाने बैठती हो वहां दबाए हुए है जितने खर्च करने हैं उतने निकाल ले। सुनियार छुपते-छुपाते गुज्जर के घर पहुंचा दूसरी तरफ गुज्जरी रोटी लेकर गुज्जर के पास पहुंची और कहने लगी लो जी, रोटी। गुज्जर कहता तुम मर जाओ अभी तो तुम रोटी देकर गई हो। गुज्जरी

कहती, आपको कहीं धोखा तो नहीं लग रहा है। गुज्जर समझ गया कि सुनियार ठग गया है। दोनों गुज्जर और गुज्जरी अपने-अपने सिर पर हाथ रख कर सोचने लगे। सोच-विचार करके गुज्जर सुनियार के घर पहुंचा। दोनों ने उसको आधा-आधा बांटने का फैसला किया। गुज्जर को पच्चीस पैसे अधिक आ गए दूसरे दिन सुनियार गुज्जर के घर पहुंचा। गुज्जर ने कहा आज चैंज नहीं है कल दे दूंगा।

आज और कल करते-करते कई दिन बीत गए। सुनियार का मुंह मांग-मांगकर थक गया परन्तु बेशर्म गुज्जर को जरा भी शर्म न आई। एक दिन सुनियार शाम के समय गुज्जर के घर आया। गुज्जर आंगन में बैठा था उसने सुनियार को आते देख लिया। वह अपनी पत्नी के कान में कुछ फुसफुसाया और खुद मुर्दा बनकर लेट गया और पत्नी सिर खोलकर लगी रोने। आप मुझे किसके सहारे छोड़ गए। अब मेरा पालन-पोषण कौन करेगा। मैं कैसे जीवित रहूंगी ऐसे-ऐसे कहने लगी। सुनियार समझ गया था के यह ड्रामा कर रही है। वह भी कम नहीं था। सुनियार भी झूठा-मूठा रोने लगा और कहने लगा कि मेरा मित्र के साथ वचन है के तुम्हें रस्सी से बांधकर सारे गांव में फेरकर जलाने ले जाऊंगा। सुनियार ने गुज्जर को रस्सी से बांध दिया और फिर उसके कान के साथ मुंह लगाकर कहता है, गुज्जरा पैसे दे दे नहीं तो मैं सच ही तुम्हें घसीट कर ले जाऊंगा परन्तु गुज्जर जरा भी न माना। गुज्जर बड़ा बेशर्म था तो सुनियार भी कम बेशर्म नहीं था। सुनियार ने गुज्जर को घसीट कर श्मशान घाट पहुंचा दिया। चिता बनाई और उसके ऊपर रख दिया परन्तु गुज्जर बहुत बेशर्म था बिल्कुल भी नहीं हिला।

गुज्जर को चिता के ऊपर रखकर सुनियार ने उसके कान में फिर कहा; "अभी समय है उठ जा नहीं तो तुम बाद में पछताओगे।"

यह कहकर सुनियार श्मशान घाट के पास ही एक मंदिर था वहां जाकर छुप गया। गुज्जर समझ गया कि सुनियार छुपा हुआ है। न सुनियार मन्दिर से बाहर निकला और न गुज्जर उठा। देखते-देखते रात हो गई पर एक भी अपने-अपने स्थान से नहीं हिला। तो उसी समय सुनियार क्या देखता है कि चार चोर अपने माथे को झुकाकर पूजा करने लगे कि हमें अच्छा-सा माल मिलेगा तो उसका चौथा हिस्सा आपके चरणों में भेंट करेंगे और साथ में चिता को भी आग देंगे। देखते-देखते बहुत रात हो गई। चोर चोरी करके माता के मन्दिर पहुंचे और अपना वचन पूरा करके धन आपस में बांट लिया और अपनी-अपनी गठड़ी बांधकर चिता को आग देने को चल दिये। चिता को अग्नि दी।

क्योंकि उसे सेक लगा था अतः वह सीधा उठ खड़ा हुआ। चारों चोर डर गए और अपनी मुट्ठी को भींचकर अपने-अपने घर भाग गए। आगे-आगे चार चोर और

पीछे-पीछे गुज्जर और वहां सुनियार ने सभी गठड़ियां उठा लीं और पीछे-पीछे वह भी चल पड़ा।

गुज्जर ने चोर बहुत दूर तक भगा दिये और वापस् मुड़ आया। वह अपने दिल में सोचने लगा कि सुनियार मुझे रात को अकेला समझकर पिटाई न करे। वह यह सोचता हुआ चल ही रहा था कि वहां से आते हुए सुनियार से टक्कर हो गई। दोनों ने आपस में गले मिलकर पिछली बातों को भुला दिया और वह चोरों का माल आपस में बांट लिया। एक दूसरे को धोखा नहीं देने का वचन किया और अपने-अपने घर को चल दिये। दोनों अब सुख के साथ रहने लगे।

●

भोन्दू

✍ चंचल कुमार

एक था सेठ और एक थी सेठानी। इनके घर कोई भी सन्तान नहीं होती थी। इन्होंने कई जग और गरीबों को धन, वस्तु भी बांटे परन्तु निराशा ही हाथ लगी। दोनों निराश रहने लगे। परन्तु किस्मत का लिखा कौन मिटा सकता है। उनकी निराशा आशा में बदल गई। सेठानी ने एक लड़के को जन्म दिया। इन दोनों पति-पत्नी की खुशी का कोई ठिकाना न रहा। सारे शहर में खुशी की लहर दौड़ गई। लड़का दिन प्रतिदिन बढ़ने लगा और समय के साथ-साथ अपनी पढ़ाई-लिखाई भी पूर्ण कर चुका। एक दिन शाम को सेठ ने अपनी पत्नी से कहा कि अब लड़का समझदार हो गया है। हम भी बुढ़ापे की छाया में बैठे हैं और फिर इस जिन्दगी का क्या भरोसा न जाने कब हम इस संसार से चले जाएंगे। इसलिए इसकी शादी अब करवा देनी चाहिए ताकि हमारे जीते-जी, अपनी नई ज़िन्दगी शुरू कर ले। सेठानी ने हां कर दी। सेठ ने दूसरे दिन अपने पण्डित को बुलाया और अच्छी-सी योग्य लड़की ढूंढ़ने भेज दिया। कुछ दिनों बाद पण्डित रिश्ता पक्का करके सेठ के घर पहुंचा, सभी खुश थे। परन्तु जब उस लड़के को मालूम हुआ तो उसने अपने माता-पिता को कहा कि मैं शादी करूंगा तो अपनी इच्छा से। चाहे वह किसी भी जाति की हो?

लेकिन सेठ ने कहा जहां हम चाहेंगे वहीं तुम्हें शादी करनी होगी? परन्तु लड़का नहीं माना और अन्त में क्रोध में सेठ ने अपने लड़के को घर से निकाल दिया। सेठानी सीने में दर्द लिए आंसुओं से भरी आंखों से उसे जाते हुए देखती रही। कुछ क्षणों के लिए सेठ क्रोध में जलता रहा और जब क्रोध ठण्डा हुआ तो अपनी भूल का एहसास करने लगा। उसको जब अपने इकलौते बेटे की याद आती तो घण्टों रो-रोकर गुजारता। उधर सेठानी की दशा भी सेठ जैसी थी। दोनों एकान्त में अपनी-अपनी जगह रोते।

लड़का चलते-चलते किसी दूसरी रियासत में पहुंचा। दोपहर का समय था। धूप भी कड़ाके की थी। वह एक स्कूल के आगे से गुजर रहा था। स्कूल के

लड़के-लड़कियां देखकर चकित रह गए कि देखने को कितना खूबसूरत है परन्तु कच्छा पहने हुए है। उन्होंने अपने अध्यापक से कहा। अध्यापक ने लड़के के पास आकर पूछा, तुम्हारा क्या नाम है और कहां के रहने वाले हो। लड़के ने कुछ क्षणों के लिए आंखें मूंदकर सोचा और फिर कहा कि मेरा नाम भोन्ठू है और यहां का ही रहने वाला हूं। अध्यापक ने उससे और भी कुछ पूछा। जिससे प्रभावित होकर उन्होंने लड़के को चार रुपये प्रति माह पर नौकरी दे दी। उसका काम था कि सुबह अध्यापक का थैला स्कूल छोड़ना और शाम को ले जाना और साथ में बर्तन साफ करना। लड़का मान गया और उनके साथ चला गया। अध्यापक ने उसके लिए नये-नये कपड़े खरीदे और अपने सामने रातों-रात सिलवाए। यहां रहते हुए भोन्ठू को कई दिन बीत गए।

एक दिन वह पानी लेने नल पर गया तो वहां वजीर की लड़की और एक सेठ का लड़का आपस में बातें कर रहे थे। भोन्ठू को भी वे अच्छी तरह से जानते थे। क्योंकि वे दोनों उस ही स्कूल में पढ़ते थे जिस स्कूल में भोन्ठू अपने मालिक (अध्यापक) का थैला लेकर आता था। भोन्ठू छुप गया। वजीर की लड़की उस लड़के को कहती है कि मेरी शादी मेरे पिता ने तय कर दी है आज के बाद सातवें दिन मेरी डोली इस शहर से चली जाएगी। लेकिन मैं तुमसे प्यार करती हूं और तुम मुझसे। हम एक दूसरे के बिना कैसे जीवित रह सकते हैं। वह लड़का कहता है, तुम ठीक तो कहती हो परन्तु क्या किया जाए जिससे हमारा प्यार जीवित रहे। तो वजीर की लड़की ने कहा कि अब एक ही उपाय है। वह यह है कि जिस दिन यानी आज के बाद सातवें दिन को मेरी शादी है तुम उस रात आठ बजे मेरे महल के पीछे घोड़ा लेकर आना। हम दोनों कुछ धन साथ लेकर यहां से भाग चलेंगे। वह राजी हो गया और अपने-अपने घर को दोनों चल दिये।

भोन्ठू भी पानी का घड़ा भरकर कन्धे पर रखकर सोचता हुआ घर पहुंचा। दिन बीतते गए और जिस दिन का भोन्ठू को इन्तजार था वह भी आ गया। उस दिन सुबह भोन्ठू ने नये कपड़े पहने और शाम के समय वह उस स्थान पर पहुंचा जहां से सेठ के लड़के को गुजरना था। वह इंतजार करता सोने लग पड़ा। तभी दूर से घोड़े की टक-टक की आवाज सुनाई दी और वह जाग उठा। उसने बैग से दो डून्ने हलवे के निकाले एक को खुद खाने लगा और दूसरा उसे दे दिया। खाते ही वह मर गया क्योंकि भोन्ठू ने उसमें जहर डाला था। उसे रास्ते से उठाकर झाड़ी की तरफ कर दिया और खुद घोड़े पर सवार होकर वजीर की लड़की के महल के पास पहुंचा। वह पहले से ही खिड़की के पास खड़ी होकर इन्तजार कर रही थी। उसे देखकर फूल की भांति खिल उठी। पहले उसने पैसों की बड़ी-सी थैली फैंकी और फिर रस्सी के सहारे अपनी दासो को उतारा और फिर खुद उतरी। तीनों ही एक

घोड़े पर सवार होकर भाग खड़े हुए।

सुबह का सूर्य उदय होते-होते वह अपनी रियासत छोड़ चुके थे। परन्तु सुबह जब वजीर की लड़की ने देखा कि यह तो भोन्ठू है वह एकदम क्रोध से तमतमा उठी और म्यान से तलवार निकालकर उसे काटने को तैयार हो गई परन्तु उसकी दासी ने उसका हाथ थाम लिया और कहा, कि अब जो कुछ हुआ उसे भूल जाओ। हम औरतें हैं और फिर प्रदेश का मामला है। पुरुष के बिना हम क्या करेंगी। वजीर की लड़की उसको कुछ न कहकर खुद चिल्ला-चिल्लाकर रोने लगी। भोन्ठू अपनी गर्दन को झुकाकर चुपचाप खड़ा रहा। दासी ने वजीर की लड़की को सान्त्वना देकर चुप करवाया। तीनों चलते-चलते एक विश्रामगृह में पहुंचे। वजीर की लड़की और दासी वहां बैठ गई। भोन्ठू ने दासी को कहा कि तुम यहीं बैठो मैं कहीं से खाना लाता हूं। भोन्ठू विश्राम-गृह के नजदीक ही एक दुकान पर पहुंचा। वहां खोजी (असली-नकली की खोज करने वाला) लालों को छांट रहा था। वह असली लाल अपने बक्से में डालता और नकली राजा के बक्से में। भोन्ठू ने देखा और वहां से जाते कुछ आदमियों से पूछा तो उन्होंने कहा—यह राजा ने रखा हुआ है? असली लाल राजा के बक्से में डालता है और नकली अपने में। भोन्ठू ने कहा तुम और तुम्हारा राजा बेवकूफ हो। साथ में एक सिपाही गुजर रहा था उसने सुना और पूछा, तुम हमारे राजा को बेवकूफ बोलते हो? भोन्ठू ने कहा है—"हां-हां तुम भी बेवकूफ हो और तुम्हारा राजा भी। यह नकली लाल राजा के बक्से में और असली अपने बक्से में डाल रहा है।" सिपाही कहता है कि यह झूठ है। भोन्ठू कहता है कि सच है। दोनों ने आपस में खूब बहस की और सिपाही उसे पकड़कर राजा के पास ले चला। भोन्ठू ने कहा—आप जाए भाड़ में मैं यह भोजन लेकर जा रहा हूं मेरी पत्नी इंतजार कर रही है। सिपाही कहता है मैंने तुम्हें गिरफ्तार कर लिया है अब तुम्हें मेरे साथ चलना होगा। परन्तु भोन्ठू न माना। देखते-देखते दस-बारह सिपाही इकट्ठे हो गए और फिर फैसला किया कि रोटी छोड़ने के उपरान्त राजा के पास ले चलेंगे। अब आगे-आगे भोन्ठू और पीछे-पीछे सिपाही चले। दूर से जब वजीर की लड़की ने उसे और उसके पीछे सिपाहियों को देखा तो अपनी दासी को कहा कि देख यह खाना चुरा कर लाया है और पुलिस की पूरी गारद पीछे चली हुई है। वजीर की लड़की उसे मारने के लिए अपनी तलवार लेकर आगे बढ़ी तो दासी ने उसे पकड़ लिया और उसकी तलवार वापस रख कर उससे कहा कि तुम गलत सोच रही हो ऐसा नहीं हो सकता कि खाना चोर कर लाया है। अगर लाया भी हो तो हमें कोई फर्क नहीं। हमें खाना तो मिल जाएगा। जेल यह ही जाएगा। अगर इसे मार डाला तो हमारा क्या होगा। वजीर की लड़की समझ गई और अपने गुस्से को पीकर अंदर ही अंदर घुटने लगी। भोन्ठू ने दोनों थालियां

दासी के हाथ दे दी और उसे एक ओर ले जाकर वजीर की लड़की से कहा कि कुछ समय के लिए मुझे नौलखा हार मांग दो और तुम दोनों खाना खाकर मेरा यहीं पर इंतजार करना। दासी ने वजीर की लड़की से कहा। उसको न चाहते हुए भी सिपाहियों को देखकर अपना नौलखा हार देना पड़ा। सिपाही उसे राजा के पास ले गये। वजीर की लड़की दासी को कहती है कि देख ले खाने की दो थाली के लिए नौलखा हार लिया है। यह तो हमें बर्बाद कर देगा।

भोन्टू को राजा के पास पेश किया। सिपाही ने राजा से कहा कि यह ऐसा-ऐसा कह रहा था। राजा ने कहा, अगर भोन्टू तुम्हारी बात गलत सिद्ध हुई तो तुम्हें फांसी दी जाएगी। भोन्टू मान गया। राजा ने उसको बुलाया जो असली नकली लाल छांटता था। उसने जब सुना तो डर से कांपने लगा। भोन्टू ने राजा को कहा कि एक मारतोड़ एक लोह की चक्की और एक जवान लड़का मुझे चाहिए। राजा ने यह सब कुछ उसे सौंप दिया। राजा और उसके मन्त्रीगण दरबार में हाजिर हो गए। राजा ने कहा, यह लो असली-नकली बक्से और सिद्ध करके बताओ। भोन्टू ने पहले राजा के बक्से से एक लाल निकाला और लोहे की चक्की पर रख दिया और उस लड़के को मारतोड़ की चोट रखने को कहा। जैसे ही उसने मारतोड़ की चोट की लाल की मिट्टी बन गई। राजा देखकर हैरान रह गया। भोन्टू ने कहा राजा आपका लाल नकली है फिर उसका लाल चक्की पर रखकर चोट की तो लाल उस चक्कर के अन्दर चला गया। भोन्टू ने कहा राजा यह असली लाल है इसे निकलवा लो। राजा ने अपने मंत्री-गणों को कहा। उन्होंने लाख प्रयत्न किया परन्तु असफल रहे। फिर भोन्टू ने अपनी जेब से नौलखा हार निकाला। उससे एक हीरे का मोती निकाल कर उस लाल के सामने किया। लाल चक्की से छूट कर हीरे से आ चिपका। राजा चकित हो गया। उसने अपने उस असली-नकली लाल छांटने वाले को फांसी की सजा दे दी और भोन्टू को उसके स्थान पर नौकर रख लिया तथा डोली में बैठाकर उसकी पत्नी और दासी को भी लाया गया। अब भोन्टू को अलग महल मिल गया परन्तु वजीर की लड़की फिर भी खुश न थी वह बात तक न करती थी।

जब भोन्टू छुट्टी करके घर लौटता तो खाने तक को भी नहीं पूछती। वह आकर सीधे अपने कमरे में चारपाई पर लेट जाता। दासी उसे भोजन देती। एक दिन राजा के नाई ने अपनी पत्नी को कहा कि जा और भोन्टू की पत्नी का सिर तेल लगाकर संवार आ। नए हैं इन्हें नहीं मालूम परन्तु तुम जाकर उसे समझा दो। नाई की पत्नी मान गई और हाथ-मुंह धोकर वजीर की लड़की के पास पहुंची और उसे कहा कि मैं पहले वाले असली-नकली लाल छांटने वाले की पत्नी के सिर को संवारती थी। आप नई हैं शायद आपको मालूम न हो? वजीर की लड़की ने अपने बालों को संवारने

की अनुमति दे दी। उसने बड़ी चतुराई और लगन से उसके बालों को तेल की मालिश करके संवारा। वजीर की लड़की बहुत प्रसन्न हुई और उसे एक सोने का सिक्का (टका) दे दिया। नाई की पत्नी अत्यन्त प्रसन्न हुई और खुशी-खुशी भगवान का धन्यवाद करती घर पहुंची। शाम को जब नाई घर पहुंचा तो उसने पूछा, क्या मिला वहां जाकर। नाई की पत्नी कहती है एक सोने का सिक्का। क्या बताऊं वह इतनी खूबसूरत है जितनी राजा की रानी भी नहीं है। अगर राजा उसे देख ले तो मोहित हो जाए। ऐसे लगता है जैसे धरती पर इन्द्र सभा की परी उतर आई हो।

दूसरे दिन नाई ने राजा को बताया। राजा नाई को कहता, यार तुम ठीक कहते हो परन्तु देखी कैसे जाये। नाई ने कुछ समय के लिए अपनी आंखें मूंद ली। नाई बहुत तेज था उसने राजा से कहा, महाराज! भोन्ठू को कहना कि हमारा पहला लाल छांटने वाला जब पहली बार आया था तो उसने अपनी पत्नी के हाथों भोजन खिलाया था परन्तु तुम्हें तो काफी दिन हो गए हैं तुमने हमें बुलाया ही नहीं। राजा ने कहा यह ठीक है। दूसरे दिन राजा ने भोन्ठू को इसके सम्बन्ध में कहा। भोन्ठू ने मन ही मन सोचा वह तो मुझसे बात तक नहीं करती है फिर भोजन कहां बनाकर खिलाएगी। परन्तु उसने अगले कल राजा को आने का न्योता दिया। शाम को जब भोन्ठू अपने महल पहुंचा तो बिना कुछ खाये-पीये अपने बिस्तर पर लेट गया। दासी ने आकर रोटी खाने को कहा उसने खाने से इन्कार कर दिया तो वह खुद रसोईघर से थाली में खाना परोस कर लाई। फिर भोन्ठू को मजबूरन खाना पड़ा। दासी ने पूछा तुम मुझे उदास लग रहे हो क्या बात है? उसने कहा—नहीं मैं उदास नहीं हूं। दासी ने कहा नहीं कुछ न कुछ तो बात जरूर है। फिर भोन्ठू ने कहा कि राजा ने कहा है कि हमारी परम्परा के अनुसार तुम्हारी पत्नी के हाथों का खाना खाना है। दासी ने कहा—मैं पूछकर आती हूं। दासी ने यह बात वजीर की लड़की को जाकर कही। पहले तो इंकार कर दिया फिर दासी के समझाने पर मान गई और कहा कि इन्हें कहना कि मुझे सात अलग-अलग रंग के सूट सिलवा दो, मैं राजा को भोजन खिलाने के लिए तैयार हूं। भोन्ठू बहुत खुश हुआ और सुबह ही उसने सारा प्रबन्ध कर लिया।

शाम हुई तो राजा नाई के साथ भोन्ठू के घर जा पहुंचा। वजीर की लड़की ने घूंघट ओढ़कर पहले चावल परोसे फिर दूसरी बार दाल लेकर गई तो सूट बदल लिया इस प्रकार उसने सात प्रकार के पकवान परोसे और प्रत्येक पकवान में सूट भी नया बदल कर गई। खाना खाने के उपरान्त राजा ने नाई को कहा, यार तुम तो कह रहे थे—एक है यह तो सात हैं। नाई कहता है नहीं महाराज एक ही है। राजा कहता सात। वजीर कहता एक है। नाई को दृढ़ विश्वास था क्योंकि जिस समय वह पहले

आई तो उसने उसकी और राजा की नजर बचाकर उसके पांव पर रंग के एक दो निशान लगा दिये थे।

परन्तु राजा नहीं माना और बहसते हुये महल को चल दिए तो नाई ने कहा एक और तरकीब है। राजा ने कहा क्या? तो नाई कहता है, कि भोन्ठू को कहो कि पहले वाले असली-नकली लाल छांटने वाले की पत्नी नाच भी दिखाती थी तुम्हारी पत्नी को भी दिखाना पड़ेगा। राजा ने कहा बहुत अच्छी योजना है। दूसरे दिन राजा ने भोन्ठू को अपने राज-दरबार में बुलाया और उसे कहा कि तुम्हें अपनी पत्नी का नाच दिखाना होगा यह हमारी पुरानी रीत है। उसने कहा ठीक है महाराज! मैं कल बता दूंगा। राजा राजी हो गया।

शाम को भोजन से निवृत्त होकर भोन्ठू अपनी चारपाई पर लेट गया परन्तु नींद आंखों से दूर हो गई। सोचता यह तो मुझसे बात तक नहीं करती है और फिर यदि मैं नाचने के लिए कहूंगा तो यह मेरा सिर जूते मार-मारकर गंजा कर देगी। यह ठीक नहीं है। छोड़ो सब कुछ, जान है तो जहान है ऐसा सोच कर उसने सुबह चार बजे के लगभग अपना कुछ सामान उठाया और दुःखी होकर भाग गया। चलते-चलते वह एक बाग से गुजर रहा था कि क्या देखता कि बाग के ठीक बीच में एक बहुत बड़ा तालाब है और उस तालाब में इन्द्र सभा की परियां स्नान कर रही है। उन्हें देखकर भोन्ठू मोहित हो गया। उसने चुपके से उनके सारे वस्त्र छिपा लिये। जब वह स्नान करके बाहर निकली तो अपने वस्त्र न पाकर घबरा गई और वापस पानी में घुसकर अपने शरीर को ढांपने लगी। उन परियों की जो मुखिया परी थी उसने आवाज दी कि हमारे कपड़े छुपाने का काम मनुष्य के अलावा कोई दूसरा नहीं कर सकता। हमारे कपड़े दे दो। मैं वचन देती हूं तुम जो मांगोगे मैं दूंगी। परन्तु पहले हमारे कपड़े वापस दो। भोन्ठू ने कपड़े दे दिये। परियां कपड़े पहनती गईं और उड़ती गईं। अन्त में वह परी जो मुखिया थी उसने आवाज देकर कहा तुम कौन हो मेरे पास आओ। भोन्ठू सामने आ गया। परी ने पूछा तुम क्या मांगना चाहते हो? जल्दी मांगो मुझे देर हो रही है हमें इन्द्रसभा में जाकर नाचना है। भोन्ठू ने कहा कि मैं इसी रियासत का रहने वाला हूं। तुम जैसे इन्द्रसभा में नाचती हो वैसे ही परसों हमारे घर आकर हमारे सामने नाचना होगा। परी ने परसों आना स्वीकार किया और उड़कर चली गई। भोन्ठू वापस महल पहुंचा। सुबह होते ही भोन्ठू ने राजा से कहा कि परसों शाम आप अपने परिवार और मन्त्रीगणों के साथ प्रजा को भी नाच देखने लायें। राजा ने इसकी सूचना सारी रियासत में दे दी। वह दिन आया तो लगे लोग तैयार होकर भोन्ठू के घर आने। शाम हुई तो पहले इन्द्रसभा से भंगी आया और उसने झाड़ू दिया और वापस चला गया। फिर चमड़े के थैले में पानी लेकर एक पुरुष आया और उसने पानी फैंका फिर

दरियां बिछाने वाला आया फिर कुर्सियां रखने वाला आया फिर तबले हारमोनियम वाला आया और बाद में एक लाख परियां पहुंची। राजा और उसकी प्रजा भी पहुंची। राजा नाच को देखकर चकित हो गया और उधर नाई के भी होश उड़ गए। राजा ने नाई को कहा देखा तुम कहते थे एक है और मैंने कहा था सात हैं और आज देख पूरी एक लाख हैं और एक से बढ़कर एक सुन्दर हैं।

राजा और प्रजा बहुत खुश हुई। झरोखे से दासी भी देख रही थी उसने वजीर की लड़की को कहा कि देख तुम अपनी सुन्दरता पर इतना घमण्ड करती हो बाहर भोन्ठू के आगे एक से बढ़कर एक सुन्दर है जो अपना नाच दिखा रही है। वजीर की लड़की ने जब झरोखे से देखा तो उसका घमण्ड टूट गया और फिर भोन्ठू को अपने गले लगाने के लिए तरसने लगी। जब नाच खत्म हुआ सभी अपने घर को वापस हुए। भोन्ठू अपने कमरे में जाने लगा। उसने सात-आठ सीढ़ियां अभी चढ़ी ही थीं कि अन्धेरा होने के कारण उसका पांव सर्प पर पड़ा सर्प ने उसे डस लिया। भोन्ठू बेहोश होकर लुढ़कता हुआ निचले कमरे में पहुंच गया। दासी ने आवाज सुनी और दौड़ी-दौड़ी जब भोन्ठू के पास पहुंची तो भोन्ठू बेहोश था। वह उसे अपने बाजुओं में उठाकर वजीर की लड़की के पास पहुंची। यह देखकर वजीर की लड़की भी रोने लगी और हाथ पांव को रगड़कर गरम करने लगी। दासी सिर रगड़ने लगी परन्तु उसे होश न आया। उसे मरा हुआ समझकर वजीर की लड़की ने एक लकड़ी का सन्दूक (बक्सा) जिसके बाहर सोने की पतली चादर चढ़ी थी उसके अन्दर भोन्ठू की लाश रख दी और दोनों ने उसे उठाकर साथ के समुद्र में छोड़ दिया। दोनों की आंखों से आंसू बह रहे थे।

वजीर की लड़की ने दासी को कहा कि अब कौन है हमारा इस दुनिया में। किसके सहारे जियेंगे। अब एक ही रास्ता है। दासी ने कहा वह क्या है तो वजीर की लड़की ने कहा कि सिर में धूल डालकर संन्यास ले लें। दासी भी राजी हो गई और सुबह होने से पहले अपने महल को छोड़कर अपने-अपने सिर में दो-दो मुट्ठी धूल डालकर चल दी। उधर भोन्ठू का बक्सा पानी में तैरता हुआ जा रहा था कि दूसरी रियासत में एक बंगालन संन्यासिन ने उसे देखा और अपनी शिष्याओं को कहा कि इसे पकड़कर लाओ। कुछ शिष्याएं चली गई और बक्से को पकड़कर अपनी गुरु (संन्यासिन) के पास दे दिया। गुरु ने कहा तुम अन्दर का माल लोगी कि बाहर का। शिष्याएं कहती है आपकी इच्छा है जैसा आप फैसला करेंगी हमें मन्जूर है। बंगालन संन्यासिन ने सोचा बाहर सोने का बक्सा है अन्दर न जाने क्या होगा। लालच में आकर उसने अन्दर का माल खुद लेने का फ़ैसला किया और बाहर का उनमें बांट दिया। जब बक्सा खोला तो देखकर हैरान रह गई। उसने अपनी शिष्याओं की

सहायता से उसे बाहर निकालकर जमीन पर लिटा दिया और उसकी जांच की तो अभी तक उसकी सांस दिमाग में थी। जब उसका शरीर देखा तो वह समझ गई कि इसे सांप ने डंसा है। क्योंकि उसका सारा शरीर नीला-पीला था।

उसने बीन बजाई और कुछ क्षणों के बाद वहां वही सांप पहुंच गया जिसने उसे डंसा था। उसने सारा जहर चूस लिया और चला गया। भोन्ठू राम-राम करता खड़ा हो गया अपनी आंखों को मलने के पश्चात् आंखें खोली तो दंग रह गया था। उसके रूप को देखकर वह बंगालन संन्यासिन मोहित हो गई। उसने भोन्ठू को बताया कि तुम एक बक्से में बन्द थे और समुद्र में तैरता हुआ बक्सा हमने पकड़ा और जब खोला तो तुम्हें पाया। तुम अपनी पहली जिन्दगी भूल जाओ। आज से मैं तुम्हारी पत्नी और तुम मेरे पति। भोन्ठू मान गया। परन्तु बंगालन को विश्वास नहीं आया उसने सोचा कहीं भाग न जाए। इसलिए उसको दिन में तोता बनाकर पिंजरे में कैद कर देती और रात को अपना पति बना लेती मनुष्य का रूप बनाकर। इस तरह कुछ दिन बीत गए। रियासत की राजकुमारी रोज स्नान के लिए बंगालन के घर से होकर जाती थी। तोता यानी कि भोन्ठू उसे ताने मारता। ताने सुनकर राजकुमारी बहुत दुःखी हुई और एक दिन बीमारी का बहाना बनाकर लेटी रही। जब उसके पिता राजा को पता चला तो उन्होंने उसके इलाज का प्रबन्ध किया। बड़े दूर-दूर से वैद्य बुलवाए परन्तु वह वैसी की वैसी। राजा निराश होकर अपनी बेटी के पास आया। राजा के पूछने से पहले ही राजकुमारी बोल पड़ी। पिता जी! मैं ठीक तब हो सकती हूं जब पनघट के पास बंगालन संन्यासिन रह रही है के तोते को मुझे लाकर दोगे मैं खुद उसे मारूंगी तभी मैं ठीक हो सकती हूं। राजा ने कहा यह तो छोटी-सी बात है। राजा ने अपने सिपाही भेजे और कहा किसी भी कीमत पर तोते को खरीद कर लाना है। सिपाही बंगालन के घर पहुंचे। बंगालन ने उसे किसी भी कीमत पर देने से इंकार कर दिया। परन्तु राजा का हुक्म था जबरदस्ती तोते को उठाकर सिपाही ले आये और पैसों की थैली उसके आंगन में फेंककर तोते को लेकर महल पहुंचे। राजा ने तोता राजकुमारी के कमरे में भिजवा दिया। राजकुमारी ने अपने पलंग के सामने वाली दीवार पर एक कील के साथ पिंजरा लटका दिया और एक लम्बी-सी लकड़ी की छड़ी एक तरफ से तेजकर अपने पलंग पर लेटकर उसे चुभोने लगी। तोता बहुत जख्मी हो गया और खून बहने लगा। इस तरह कुछ दिन राजकुमारी उसे तंग करती रही। तोता बहुत कमजोर हो गया। वह मन ही मन लगा सोचने कि मैं अब नहीं बच सकता यह मुझे मारकर ही चैन लेगी। राजकुमारी ने देखा कि बहुत सजा हो चुकी है अब इसे खत्म करके इसे जिन्दगी से मुक्त कर देना चाहिए। यह सोचकर राजकुमारी अपने पलंग से उठी और तोते को पिंजरे से बाहर निकालकर उसे गर्दन से पकड़कर जैसे ही मरोड़ने लगी कि उसकी एक उंगली

गर्दन में पड़े धागे से जा फंसी और धागा टूट गया। ज्यों ही धागा टूटा तो तोता आदमी बन गया। यह देखकर राजकुमारी चकित रह गई। भोन्ठू को इतना सुन्दर देखकर उसे अपने हाथसे जाने देना नहीं चाहती थी। राजकुमारी ने उसे छिपाये रखा। परन्तु एक दिन राजा के सिपाही ने देख लिया और राजा को कहा कि राजकुमारी के कमरे में कोई लड़का है। राजा ने महल के चारों ओर पुलिस तैनात कर दी और हुक्म किया कि वह भागने न पाये। अगर जिस किसी के आगे से भाग जाएगा तो उसे मृत्यु दण्ड दिया जायेगा। राजकुमारी और भोन्ठू को मालूम हुआ तो राजकुमारी बहुत घबरा गई परन्तु भोन्ठू ने हौसला नहीं हारा। उसने सोचा कि मैं किसी गरीब के आगे से या सिपाही के आगे से भागा तो राजा उसे मृत्युदण्ड दे देगा। इसलिए क्यों न राजा के आगे से ही भागे। उसने हौसला किया और ऊपरी मंजिल से छलांग लगाकर सीधे राजा के आगे पड़ा और राजा की टांगों के बीचोंबीच भाग गया। आगे-आगे भोन्ठू और पीछे-पीछे सिपाही। भागता-भागता भोन्ठू एक दुकान पर पहुंचा। दुकानदार दुकान बन्द कर रहा था। भोन्ठू ने दुकानदार को कहा कि मेरी सहायता करो मुझे सिपाही पकड़ने आ रहे हैं मुझे बचाओ। दुकानदार को दया आ गई उसने कहा, "अन्दर जाकर मेरी लड़की के साथ सो जा।" उसका घर दुकान के साथ ही था। भोन्ठू आकर उसकी लड़की के साथ सो गया। इतने में सिपाहियों की टोली पहुंच गई और दुकानदार को पूछा कि यहां से कोई चोर तो भागते हुए नहीं देखा। उसने कहा, नहीं बेशक आप मेरे घर के अन्दर जाकर देख सकते हो वहां तुम मेरी पत्नी और लड़की तथा उसका पति मिलेंगे। सिपाहियों ने तलाश किया और खाली हाथ महल पहुंचे।

सुबह हुई भोन्ठू उठकर बाहर आंगन में पहुंचा तो दुकानदार की लड़की ने अन्दर से आवाज देकर कहा, आप सारी रात मेरे साथ सोकर अब मुझे छोड़कर कहां जा रहे हो? पिता ने तो तुम्हें मेरा पति कह दिया है। दुकानदार ने कहा हां! यह ठीक कहती है अब तुम यहां ही रहोगे। यह लड़की भी रूप की देवी थी। भोन्ठू के दिल में भा गई और वहीं रहने का फैसला कर लिया। अब भोन्ठू दुकान पर बैठने लगा। भोन्ठू के दुकान पर बैठने से बिक्री में चार गुणा वृद्धि हुई। भोन्ठू के आने से वह दुकानदार बहुत बड़ा सेठ बन गया।

एक दिन भोन्ठू दुकान पर बैठा था। दूर से उसने दासी को आते देखा और दासी ने भी उसे देखा। वह मन में सोचने लगी कि यह बिल्कुल भोन्ठू जैसा है। दासी के भगवां वस्त्र देखकर चकित रह गया भोन्ठू। परन्तु उसने नहीं बताया कि मैं भोन्ठू ही हूं और दासी ने अन्तर्मन में सोचा भला वह कहां जीवित होगा। उसने चार आने का गुड़ और चार आने के चावल मांगे। भोन्ठू ने बहुत से चावल और गुड़ उसे दिया और उसके द्वारा दिये गये आठ आने भी वापस कर दिये। दासी मन में लाखों विचार

लिये वजीर की लड़की के पास पहुंची। दासी का मायूस सा चेहरा देखकर वजीर की लड़की ने पूछा तो दासी ने सारी कहानी कह सुनाई।

वजीर की लड़की भोन्ठू को देखने के लिए उतावली हुई और दासी को लेकर दुकान पहुंची। भोन्ठू को देखते ही उसने पहचान लिया और बिना बात किये ही भोन्ठू को अपनी बांहों में कसकर भींच लिया और रोने लगी। भोन्ठू की आंखों में भी आंसू आ गए। इतने में भोन्ठू की पत्नी अन्दर से अचानक बाहर निकली और एक पराई लड़की को अपने पति की बांहों में भींचे देखकर सहन नहीं कर सकी। उसने अपना जूता खोलकर वजीर की लड़की के सिर पर मार दिया। यह देखकर वजीर की लड़की ने भी भोन्ठू को छोड़ा और अपना जूता उतार कर उसके सिर पर दे मारा।

दुकानदार की लड़की कहे भोन्ठू मेरा पति है तो वजीर की लड़की कहे मेरा पति है। दोनों में बहुत बहस हुई और अन्त में मुकदमा राजा के पास पहुंचा। इस बात की सारी रियासत में चर्चा हो रही थी जब बंगालन को मालूम हुआ कि यह भोन्ठू है तो वह भी राजा के पास पहुंची और कहती कि यह मेरा पति है जब राजा की लड़की को मालूम हुआ तो वह भी अपने पिता राजा को कहती है कि इस तरह फैसला मत करना यह मेरे भी पति है।

राजा मुश्किल में फंस गया और उसने सबको राजदरबार में बोलने का हुक्म दिया। पहले उसने वजीर की लड़की से पूछा तो उसने कह दिया कि महाराज हम घर से भागकर दूसरी रियासत में आकर रहते थे एक दिन अचानक इन्हें सांप ने डंस लिया और मैंने एक बक्से में इनकी लाश को बन्द करके समुद्र में छोड़ दिया। बंगालन कहती है—हां महाराज बिल्कुल ठीक है। मैंने वह बक्सा पकड़ा और खोलकर जब इन्हें देखा तो मैं समझ गई कि इन्हें सांप ने डंस लिया है मैंने बीन बजाकर सांप बुलाया और उसने इसके जहर को चूसा। मैं दिन को इसे तोता बना देती थी रात को अपना पति। राजकुमारी ने कहा—बिल्कुल ठीक है। मैंने बीमारी का नाटक बनाकर इसे मारने के लिए अपने पास मंगवाया था परन्तु जब मैं इसकी गरदन को मरोड़ने लगी तो गले में पड़ा धागा मेरी उंगली से फंसकर टूट गया और मैं यह देखकर हैरान हो गयी कि यह आदमी था। मैंने इसे अपने पास ही रखा। और जब आपको मालूम हुआ कि यहां कोई पुरुष है तो आपने इसे पकड़ना चाहा परन्तु यह भाग गया। भोन्ठू बोला, महाराज मैं आपकी टांगों के बीचोंबीच भागा था। क्योंकि आपने हुक्म किया था कि किसी के आगे से भागा तो उसे प्राणदण्ड दिया जाएगा। इसलिए मैं आपके सामने से ही भागा था और फिर इस दुकानदार के पास पहुंचा।

दुकानदार की लड़की ने कहा, हां महाराज बिल्कुल ठीक है। मैं सोई हुई थी

और यह मेरे साथ आकर के सो गये थे। फिर मैंने अपने पिता जी के कहने के अनुसार शादी कर ली।

फिर दासी बोली, महाराज जब भोन्ठू को हमने समुद्र में छोड़ दिया तो खुद हमने संन्यास ले लिया और चलते-चलते यहां पहुंचे। एक दिन अचानक मैं इसकी दुकान में सौंदा लेने आई। इसे देखकर मैंने वजीर की लड़की को कहा और उसे भोन्ठू से मिला दिया।

राजा कहानी सुनकर आश्चर्यचकित हो गया। चारों का राजा ने कन्यादान कर दिया। धूमधाम से शादी हुई। इस तरह कई दिन बीत गए। एक दिन रात को भोन्ठू सोया हुआ था। उसके सपने में मां आई।

भोन्ठू की नींद खुल गई। सारी रात देखते-देखते और सोचते-सोचते काटी। सुबह भोन्ठू ने अपनी रियासत जाने के लिये राजा से आग्रह किया। राजा ने कहा—तेरी इच्छा है। भोन्ठू अपनी चारों पत्नियों के साथ राजा के महल से विदा हुआ। राजा ने उसे बहुत सा धन और जाने के लिये घोड़े भी दिये।

भोन्ठू जब अपने घर पहुंचा तो दंग रह गया। उसके माता-पिता उसके गम में अंधे हो चुके थे। भोन्ठू ने रोते हुए कहा, मां! मैं तुम्हारा भोन्ठू हूं।

पिता जी! मैं तुम्हारा बेटा हूं। दोनों ने आंसू बरसाते हुए कहा—बेटा हम क्या समझें कि तुम हमारे बेटे हो। तुम अपना हाथ हमारी आंखों के ऊपर करो अगर रोशनी आ गई तो हम समझेंगे कि तुम हमारे ही बेटे हो। भोन्ठू ने उनकी आंखों के आगे अपना हाथ फेरा। दोनों की आंखों में रोशनी आ गई। दोनों ने उसे बहुत प्यार किया गले लगाकर। और उन पांचों को भी प्यार किया। दोनों सेठ-सेठानी अत्यन्त प्रसन्न थे और मजे से अब सब मिलकर रहने लगे। जैसे उजड़ा हुआ बाग फिर से महकने लगा।

●

सौतेली मां

✍ जगन्नाथ शर्मा

एक बार की बात है कि किसी नगर में एक कुम्हार व उसकी पत्नी रहते थे; पहले उस कुम्हार के घर कोई बच्चा न होता था। उसने और विवाह करने की ठानी फिर दूसरा विवाह किया। बाद में उन दोनों पत्नियों के घर एक-एक लड़की पैदा हुई। एक का नाम वंदन मोटन और दूसरी का नाम शकुन्तला रखा।

कुछ दिन बीत जाने पर कुम्हार जब मिट्टी के बर्तन बनाने के लिये मिट्टी लाने गया तो मिट्टी खोदते-खोदते उसके ऊपर काफी मिट्टी आ गिरी और वहां दबकर उसकी मृत्यु हो गई जब उसकी मृत्यु हो गई तो उसकी दोनों पत्नियां आपस में खूब लड़ाई-झगड़ा करने लगी।

कुछ दिन बाद वंदन मोटन की मां बीमार पड़ गई वह दूसरी पत्नी की बेटी शकुन्तला को कहने लगी कि अगर मेरी मृत्यु हो गई तो तुम मेरी बेटी का अच्छी तरह से पालन पोषण करना व इसे अच्छा भोजन और अच्छे कपड़े देना। तुम भी ऐसा करना वह अपनी माता को कहना। कुछ समय बीत जाने पर सचमुच उस वंदन मोटन की मां मर गई अब तो उसके लिये संसार ही डूब गया पहले बाप मर गया और बाद में मां मर गई।

अब क्या हुआ कि सौतेली मां उसे काफी तंग करने लगी उसे बोरी के कपड़े पहनने को और आटे से जो भूसी निकलती है उसकी रोटी बनाकर खाने को देती और हर रोज उसे पशुओं के साथ जंगल में भेजती। वह लड़की जंगल में काफी रोती और शाम को घर आ जाती थी। कुछ दिन हुये उनकी भेड़ ने एक बच्चे को जन्म दिया। भेड़ का बच्चा जब बड़ा हुआ तो वह वंदन मोटन को अच्छा-अच्छा खाना खिलाने लगा और अच्छे-अच्छे कपड़े भी देने लगा। इससे उस लड़की की सेहत दिन-प्रतिदिन अच्छी होने लगी।

एक दिन सौतेली मां ने अपनी लड़की भी उसके साथ जंगल भेज दी कि देख ऐसी-ऐसी वस्तुएं इसे कौन देता है? वापस आने पर लड़की ने अपनी मां से कहा

कि एक भेड़ का बच्चा उसे देता है। मां कहने लगी कि भेड़ का बच्चा हम काट देंगे। तब वंदन मोटन ने जाकर बच्चे को सारी बात सुना दी। तब वह कहने लगा कि अगर मुझे काट भी दिया तो मेरे शरीर के चार अंग घर के किसी कमरे के चार किनारों में दबा देना। लड़की ने वैसा ही किया जैसे उसने बताया था। लड़की उन दिनों के व्यवहार से काफी तंग आ गई थी। एक दिन उनके गांव से कुछ दूर मेला लगा तो वह दोनों मां-बेटी मेला देखने के लिये चली गई और उस बदनसीब को काफी काम बता गईं कि घर की सफाई-लिपाई करना, कपड़े धोना, पशुओं को घास लाना और अन्य जो घरेलू काम होते हैं वह सब। कुछ समय बाद वह भेड़ का बच्चा फिर जीवित हो गया और वह वंदन मोटनी से कहने लगा—तूझे भी मेला देखने जाना है तो तू चली जा।

वह कहने लगी कि मैं कहां जा सकती हूं मुझे तो बहुत काम करना है। तब वह कहने लगा कि तेरा जो काम है उसे मैं कर दूंगा। वह लड़की कहने लगी मेरे पास तो बोरी के कपड़े हैं और पांव के लिये जूते भी नहीं हैं तब उस भेड़ के बच्चे ने कहा—कि जो कमरे के चार किनारों में मेरे चार अंग दबाये हैं उसको तू जाकर खोद।

वह वहां जाकर खोदने लगी कि क्या देखती है कि एक किनारे से उसे काफी धन मिला। दूसरे किनारे से काफी जेवर, तीसरे किनारे से उसे सुन्दर कपड़े और जूते तथा चौथे किनारे से एक सफेद घोड़ा मिला।

वह लड़की कपड़े, जेवर पहनकर घोड़े पर सवार होकर मेला देखने के लिये चली गई। लड़की काफी सुन्दर थी जब वह घोड़े पर सवार होकर जा रही थी कि उसकी सौतेली बहन शकुन्तला ने अपनी मां को कहा कि देख मां वंदन मोटनी जैसे कौन आई। तो उसकी मां ने उत्तर दिया—उसने कहां से आना है उसे तो हम काफी काम करने को कह आई हैं तो लड़की ने कहा कि मुझे तो वह ही नजर आ रही है। लड़की धीरे-धीरे आई और उसके पैर के जूते खोलकर अपने पैर में डालने लगी उसके पैर शकुन्तला के पैर से कुछ बड़े थे तो उसने जूते पहन कर पता लगा लिया कि यह तो वह ही है।

मेला देखते-देखते वह लड़की वहां के राजा के लड़के को पसन्द आ गई। वह कहने लगा कि मैं इस लड़की से विवाह करूंगा। बाद में उन दोनों का आपस में विवाह हो गया। जब सौतेली मां को पता चला कि इसकी शादी राजकुमार से हो गई है तो एक दिन सौतेली मां वंदन मोटनी के ससुराल गई और कहने लगी कि दो-चार दिन के लिये वंदन मोटनी को मेरे साथ मायके भेज दो।

उसके ससुराल वाले उस सौतेली मां का विश्वास नहीं करते थे और उन्होंने

कहा कि दो-चार दिन के लिये तो हम भेजते नहीं अपितु दो-चार घंटे के बाद वापस पहुंचा जाना। उस सौतेली मां ने ऐसे ही स्वीकार कर लिया। उसके मन में काफी पाप था। घर पहुंचने पर सौतेली मां ने वंदन मोटनी को भोजन खिलाया और बाद में कहने लगी कि आ वंदन मोटनी मैं तेरा दबा दूं। जब वह लड़की सौतेली मां के पास बैठ गई तो उसने उसके सिर में एक बड़ी कील मारी और एक चिड़िया का रूप बनाकर आसमान को उड़ा दी। उसके कपड़े अपनी बेटी शकुन्तला को पहना दिये तथा उसे वंदन मोटनी की ससुराल भेज दिया।

प्रति दिन वह चिड़िया रूपी लड़की महल की छत पर बैठती और मधुर स्वर से कहती कि मेरे राजा के पलंग पर कौन सोया है।

हर रोज ऐसा ही बोलती थी। एक दिन उसका पति कहता है कि हर रोज यह चिड़िया मीठी आवाज से बोलती है आज मैं इसे पकड़ूंगा। वह जाकर उसे छत से पकड़ लाता है।

जब वह उसके शरीर पर हाथ फेरता है तो उसे सिर पर कांटा नजर आता है। वह उसे निकालता है तो वह चिड़िया वंदन मोटनी के रूप में खड़ी हो जाती है। राजा आदेश देता है कि शकुन्तला और इसकी मां को एक मिट्टी की बड़ी खाई में फैंक दो और इन दोनों को सिर तक दबाओ और ऊपर से कुत्ते छोड़ दो जो इन दोनों को खा जायें। प्रजा ने ऐसा ही किया और वे दोनों मृत्यु को प्राप्त हो गईं।

●

एक था महात्मा

✍ अब्दुल कादिर

एक गांव में एक महात्मा रहता था। वह लोगों को भक्ति करने और अच्छे काम करने के लिए कहा करता। उसके उपदेश थे कि परमात्मा एक है। यदि दुनिया में परमात्मा दो होते तो एक स्त्री के साथ दो पुरुष शादी करके उससे घर गृहस्थी में भी जुड़ सकते थे। उसके उपदेश को मानकर कुछ लोग उसके साथ मन्दिर में भक्ति करने लगे और कुछ लोग महात्मा को पागल कहने लगे और महात्मा को उपदेश देने से रोकने लगे। महात्मा ने एक दिन उन सब रोकने वाले लोगों से कहा कि यदि तुम मेरे उपदेश नहीं मानोगे तो एक दिन तुम लोगों पर परमात्मा की तरफ से राक्षस आएंगे और तुम्हारी पीठ पर शिला रखकर तुम्हें उपदेश न मानने की सजा देंगे।

लोगों ने महात्मा से कहा कि यदि तुम हमारी ऐसी दशा करके दिखाओगे तो हम उपदेश मानने के लिए तैयार हैं। महात्मा ने तपस्या का रुख किया। परमात्मा प्रकट हुआ और महात्मा ने प्रार्थना की कि ए परमात्मा! तेरी प्रजा मुझे सताती है। जब कि तूने ही मुझे संदेश देकर उपदेश देने के लिए भेजा। परमात्मा ने कहा—उनसे कह दो कि यदि तुम लोग आज्ञा का पालन नहीं करते तो फलां दिन तुम्हारी पीठ पर शिला लाद दी जाएंगी।

महात्मा ने लोगों से यह बात सुनाई तो लोग महात्मा से कहने लगे कि यदि हम लोगों की यही दशा हुई तो हम तुम्हें सच्चा उपदेशक मानकर तुम्हारे उपदेशों पर चलेंगे। यदि हमारी यह दशा न हुई तो तुम्हें जीते जी जला देंगे।

महात्मा अपने विश्वास को कायम नहीं रख सका और डर के मारे वहां से दूसरी जगह चला गया। परमात्मा के कोप से रास्ते में महात्मा की स्त्री छिन गई। महात्मा का निवास स्थल न रहा। रास्ते में एक जगह महात्मा नदी पार करने लगा तो दो बच्चे जो उसके साथ पार थे उनमें से एक को नदी के किनारे छोड़कर दूसरे को नदी पार करवाने के लिए महात्मा नदी में कूदा। परन्तु अभी महात्मा नदी के मध्य पहुंचा ही था तो दूसरे बच्चे के रोने की आवाज़ आई तो महात्मा क्या देखता

है कि बच्चे को जंगली चीता उठा रहा है। महात्मा उसको बचाने के लिए वापस पलटा। बच्चे को संभाल न सका तो दूसरा बच्चा नदी में गिर गया। महात्मा ने बहुत हाथ-पांव मारे मगर बच्चा डूब गया। नदी किनारे के बच्चे को चीता खा गया। नदी पार करके महात्मा जान बचाते हुए किसी आबादी में पहुंचा वहां एक सौदागर ने उसे अपने पास बैठा लिया। क्योंकि वह सौदागर महात्माओं से प्रेम किया करता था।

फिर जब सौदागर व्यापार के लिए चला तो महात्मा को अपने साथ ले लिया। सौदागर ने अपना बेड़ा समन्दर में ठेल दिया। कई दिन बेड़ा चलता रहा। एक दिन बेड़ा रुक गया। सौदागर ने ज्योतिषी को पूछा, तो ज्योतिषी ने कहा कि इस बेड़े में एक आदमी ऐसा है जो कि अपने मालिक से भागकर आया है और जब तक वह आदमी बेड़े से नहीं उतरेगा उस समय तक बेड़ा नहीं चलेगा।

महात्मा ने कहा मैं अपने मालिक से भाग कर आया हूं, मुझे निकालना चाहिए। सौदागर ने बहुत रोका मगर महात्मा ने बेड़े से समुद्र में छलांग लगा दी। वहां उसे मछली ने निगल लिया। परमात्मा की आज्ञा से मछली उसे हज़म न कर सकी और समुद्र के किनारे मछली ने महात्मा को निकाल कर फेंक दिया। दूसरी तरफ गांव में उन लोगों के जो उपदेश नहीं मानते थे की पीठ पर बड़ी-बड़ी शिलाएं हैं और महात्मा की तलाश में हैं। वे लोग जिन्होंने महात्मा की स्त्री छीनी थी वे कुछ तो अंधे हो गए और कुछ कुष्ठी हो गए।

उपदेश मानने वाले बाकी लोगों ने उनकी यह दशा देखी। उन्होंने उस महात्मा की स्त्री को अच्छे घर में ले जाकर रात-दिन उसकी सेवा की। वह बच्चा जो नदी में गिरा उसे पानी ने जिन्दा किनारे लगा दिया और दूसरे को चीता न खा सका। दोनों बच्चे ग्वाले को मिले और उनकी परवरिश होती रही। एक किसान के घर पलते रहे। वह महात्मा जिसे मछली ने किनारे पर जिन्दा छोड़ दिया तपस्या करने लगा।

तपस्या पूरी होने पर परमात्मा प्रकट हुआ और महात्मा से कहा कि तुम मेरे सच्चे भक्त हो लेकिन तुमने मुझ पर पूर्ण विश्वास नहीं किया इसीलिए तुम्हें इन सब संकटों का सामना करना पड़ा। अब जाओ फलां जगह तुम्हारी स्त्री फलां गांव में बच्चे हैं।

महात्मा अपनी स्त्री बच्चों को लेकर अपने गांव में आया और उपदेश न मानने वालों की पीठ से शिलाएं उतारीं और उनको सच्चा भक्त बनाया।

●

दुल्ला भट्टी

✍ अब्दुल कादिर

एक दुल्ला था। जो फरीद के घर पैदा हुआ और राजपूत कौम से सम्बन्ध रखता था। दुल्ला भट्टी दुल्ला को इसलिए कहते थे कि उनकी जन्मभूमि भट्ठल थी। दुल्ला के पिता को लोग बाबा फ़रीद भी कहते थे इसलिए कि वह एक फकीरी हाल का आदमी भी था और घर गृहस्थी में भी जुड़ा था। उसने जंगलों में रहकर फकीरी हासिल की थी। जब फरीद के घर दुल्ला ने जन्म लिया तो पड़ोस यानी मुहल्ला में शोर मच गया कि फरीद के घर एक लड़का पैदा हुआ जो देखने में सुन्दर और निरोग है।

जब दुल्ला नौ महीने का हुआ तो आठ किलोग्राम का लोटा सर पर उठाया। एक साल का हुआ तो गांव के बच्चों से खेलने लगा। दुल्ला की बात चलते-चलते बादशाह अकबर तक जा पहुंची। बादशाह ने फरीद से दुल्ला को दे देने को कहा लेकिन फरीद ने इन्कार कर दिया। फरीद के इन्कार करने पर बादशाह को गुस्सा आया तो बादशाह ने सख्ती से दुल्ला लेना चाहा। फरीद और बादशाह के मध्य झगड़ा हुआ। बादशाह ने फरीद को मारकर अपने महल के चारों ओर दीवार में फरीद की लाश को चिनवा दिया। इस अत्याचार पर दुल्ला की मां ने अदालत से न्याय चाहा मगर बादशाह ने अन्याय किया और दुल्ला को उसकी मां से छीन लिया और फिर अपने खज़ाने के खर्च से पढ़ाने लगा?

जब दुल्ला छः-सात वर्ष का हुआ तो एक दिन उसे आसपास के बच्चे कहने लगे कि तेरा पिता नहीं है। तू अवैध है। दुल्ला बहुत परेशान हुआ और अवैध कहने पर बुरा माना और गुस्सा आया लेकिन उसी शाम दुल्ले ने मां से कहा कि मां मुझे बता मेरा पिता कौन है? मुझे पड़ोस के बच्चे कहते हैं कि तेरा पिता नहीं हैं तू हराम का है। दुल्ला की मां ने कहा कि दुल्ला तेरा पिता मर चुका है और तेरे पिता फरीद हैं। इसी तरह एक दिन फिर पड़ोस के बच्चे दुल्ला को छेड़ने लगे तो दुल्ला घर पहुंचकर मां से कहने लगा कि मां यदि मेरे पिता मर गए हैं तो उनकी कब्र कहां

है। दुल्ला की मां ने दुल्ला से वादा किया बेटे जब तुम बड़े होगे यानी जवान हो जाओगे तो उस समय मैं तुझे तेरे पिता की कब्र दिखाऊंगी। दुल्ला जब बारह वर्ष का हुआ तो पढ़ बैठा। उस जमाने में पढ़ना कठिन था। वास्तव में पढ़ाई होती ही नहीं थी। यदि कोई पढ़ा भी दिया जाता तो पढ़ने के बाद घोड़े की सवारी करना, बन्दूक, गुर्ज और तीर-कमान वगैरा भी चलाना सिखाया जाता था। इसी तरह दुल्ला को भी पढ़ने के बाद सब काम सिखाया गया। एक दिन अकबर बादशाह का लड़का और दुल्ला दोनों शिकार के लिए गए। एक जगह वे दोनों तीर-कमान चलाकर निशाना लगाने लगे तो दुल्ला बादशाह के लड़के को निशाना बांधने में हराता रहा। सारा दिन गुज़र गया। शाम को घर लौटे। अकबर बादशाह का लड़का निशाना सही न लगने के कारण बहुत शर्मिन्दा हुआ। दूसरे दिन दुल्ला को साथ लेकर बादशाह का लड़का फिर उसी जगह चला गया वहां फिर बादशाह के लड़के की हार हुई। अब अकबर बादशाह के लड़के ने दुल्ला को जिस दीवार में उसके पिता की लाश को चिना हुआ था। उसमें निशाना लगाने को कहा तो दुल्ला ने बहुत से तीर मारे लेकिन निशाना न लगा सका और हार गया। घर आकर मां को सारी कहानी सुनाई कि मां मैंने बादशाह के लड़के को निशाना लगाने में हरा दिया। मगर फलां दीवार में मैं निशाना न लगा सका, मेरी हार हुई।

दुल्ला की मां ने जब यह कहानी सुनी तो फरीद के साथ जो अत्याचार किया गया था वह सब याद आया। रोने के सिवा वह दुल्ला को कुछ न बता सकी। दुल्ला मां का रोना सहन न कर सका और रोने का कारण बताने के लिए मां को मजबूर कर दिया। आखिर मां को बताना ही पड़ा कि—''दुल्ला जिस दीवार में तेरा निशाना नहीं लग सका उस दीवार में तेरे पिता को बादशाह ने मारकर चिनवा रखा है।'' दुल्ला यह सब मालूम होने पर उसी समय अपने बाप का बदला अकबर बादशाह से लेने के लिए तैयार हो जाता है। बादशाह को मारने के लिए तीन साल तक लड़ाई लड़ता रहा मगर अकेला दुल्ला बादशाह को न मार सका और आखिर में खुद मारा जाता है। आज दुल्ला भट्टी की वारें गाई जाती हैं और उसका नाम अमर है।

●

सतवन्ती

✍ प्रेम कुमार शर्मा

असली नाम तो कोई नहीं जानता, सब सतवन्ती ही कहा करते हैं। सम्भवतः इसलिए कि सतवन्ती (पवित्रता) होने के कारण उसके अनेक विचित्र चमत्कारों से लोग अत्यन्त प्रभावित थे। फिर उसके चमत्कार केवल कपोल-कल्पित या कल्पना क्षेत्र की बात न होकर आज तक जीते-जागते प्रमाणों से अनुप्रमाणित हैं। कभी दादी अम्मां से सुनता था—अमुक स्त्री धान कूटती हुई मूसल को ऊपर उठाए हुए किसी के पुकारने पर वहीं छोड़कर चली जाती और मूसल तब तक वहीं ऊपर उठा हुआ टिका रहता जव तक वह स्वयं पहुंचकर उसे थाम नहीं लेती। इस प्रकार सत के बल की बातों पर तब विश्वास होता था या नहीं किन्तु भारतीय इतिहास के कुछ पृष्ठों की जानकारी होने पर अविश्वास वाला कोई स्थान भी नहीं रह जाता क्योंकि भारत का न केवल अतीत अपितु वर्तमान भी सैंकड़ों उदाहरण प्रस्तुत करता है कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में भारतीय नारी की विचित्र और महत्वपूर्ण भूमिका हुआ करती है। ऐसी नारियां भारत के किसी एक भू-भाग में उत्पन्न होती हों ऐसा भी नहीं है। ये विभूतियां तो यत्र-तत्र-सर्वत्र अवतार लेती हैं।

ऐसी नारियों में हिमाचल के जिला चम्बा के साहो क्षेत्र में वर्तमान ग्राम ''पंडाह'' की सतवन्ती नार भी हुई है। उसकी निश्चित समय सीमा तो स्मृति पटल से उतर चुकी है, तथापि वर्तमान प्रमाण और लोक धारणा के अनुसार इतना तो कहा ही जा सकता है कि घटना राणा युग की है। चम्बा में पृथक्-पृथक/ स्थानों पर कब्जा किए हुए राणा लोग शासक बने हुए थे। इसलिए एक दूसरे का बहुत बार टकराव भी हो जाया करता था। इसी कारण उनके निवास स्थान दुर्गम एवं ऊंचे-ऊंचे टीलों पर हुआ करते, जिससे एक दूसरे की वहां तक पहुंच कठिन होती और रोकी भी जा सकती थी। इन्हीं कारणों से राणाओं की घटनाएं ऊंचे-ऊंचे टीलों, दुर्गम भागों और पृथक्-पृथक् स्थानों से ग्रंथी हुई पाई जाती हैं।

ग्राम पंडाह चम्बा नगर के उत्तर-पूर्व में लगभग ग्यारह मील की दूरी पर स्थित

है। इस छोटे से गांव के खेतों में इधर-उधर के समीपस्थ वनों में तब और अब भी एक अपनी ही प्रकार का वृक्ष अधिकता में पाया जाता है। इसे स्थानीय लोग 'ऐल्हण' कहा करते हैं। इसमें एक ऐसा दुर्गुण है कि जो पशु इसकी पत्तियां विशेषकर कोंपलों को खा लेता था उस पर कुछ ऐसा विषैला प्रभाव होता था कि वह खाना-पीना छोड़ कर मुंह से लार गिराता हुआ तड़फ-तड़फ कर मर जाया करता था। उसे बचाने की सम्भावना तब हो सकती थी जब समय पर उसे दही, छाछ, खटाई पिलाई जा सके अथवा मन्त्र द्वारा प्रभाव उतारने वाला मिल जाए। वमन, विरेचन क्रिया के साधन भी लाभकारी होते हुए पाए जाते हैं। गांव निवासी प्रतिक्षण चिन्तातुर बने रहते थे। अपने पशु धन की चिन्ता उनके लिए कम कठिन समस्या नहीं थी। बिना पशु पाले निर्वाह कठिन था। खेतों के लिए खाद, जोताई के लिए बैल, ठण्ड से बचने के लिए भेड़ों से ऊन, दूध, दही, घी सब कुछ पशुओं पर ही तो निर्भर था।

ऐल्हण वृक्ष का होना ही अकेली समस्या नहीं थी, गांव में पानी का नितान्त अभाव भी समस्या बना हुआ था। दूर नाले से पानी लाना पड़ता; जिससे जीवन का अधिक समय पानी की व्यवस्था में ही व्यतीत हो जाया करता था। न केवल अपने लिए ही किन्तु घर पर रहने वाले पशुओं के लिए भी पानी लाना पड़ता था। ये दोनों बातें पंडाह निवासियों के लिए कांटा बनी हुई थी। इस पर भी ग्रामवासियों का व्यवसाय कुम्भकारी (कुम्हार का कार्य करना) होना पानी की आवश्यकता को बढ़ावा देता था। कुम्भकारी के लिए इस स्थान की मिट्टी बहुत उपयुक्त थी। आज जहां साहो में चन्द्रशेखर (शिव) का मन्दिर विद्यमान है; यही वह स्थान है जहां शिवलिंग दुबारा भारी हो गया था। जहां बालक शिवलिंग बन गया था वहीं प्रतिवर्ष दुर्गाष्टमी के दिन श्रद्धालु नाले में नहाकर श्रद्धानुसार भेंट चढ़ाते; धूप ध्यान करते हैं। आजकल जहां नाला बह रहा है उसके साथ ही चम्बा की ओर से पुल पार करके कैलाश जैसी छोटी सी शैखरी बनी है। इसी पर स्थापित शिवलिंग को धूप-दीप दिया जाता है। तब से लेकर आज तक चन्द्रशेखर के मन्दिर में लोग पूजन करने जाते हैं।

चम्बा के पंडाह और साहो गांव के बीच 'साल' नाम का नाला बहता चला आ रहा है। गांव साहो जहां आज चन्द्रशेखर का वर्तमान प्रसिद्ध मन्दिर है वहां ग्राम के किनारे एक महात्मा (सिद्ध) रहा करते थे जो नित्य प्रति साल नाले पर ब्रह्ममुहूर्त में उठकर नहाने जाते थे। एक दिन जब वह अपने नहाने के स्थान पर पहुंचे तो उन्हें आभास हुआ कि उनसे पहले ही कोई नहाकर गया है। कौन होगा जो मुझसे पहले नहाने आया करता है? अच्छा कल देखूंगा। यह सोचकर अपने निवास स्थान पर पहुंचकर इसी विषय पर सोचते रहे। अगले दिन बहुत पहले नाले के एक बड़े पत्थर के पीछे छिपकर आने वाले की प्रतीक्षा करने लगे। थोड़ी देर बाद उन्होंने देखा

बड़े ही सुन्दर एवं जटा भूरी वाले तीन बालक आकर नाले में नहाने लग पड़े। जैसे ही नहाकर नाले से बाहर निकले। लपक कर महात्मा ने तीनों को पकड़ने का प्रयत्न किया किन्तु एक ही बालक पकड़ में आ सका तथा दो चम्बा की ओर भाग निकले। जिज्ञासु महात्मा ने जब उस बालक से परिचय पूछा तब वह अपना नाम चन्द्रशेखर बताकर वहीं प्रस्तर शिवलिंग बन गया।

चकित हुए महात्मा उसे ले जाने की इच्छा से उठाने लगे पर शिवलिंग उठाए उठ न सका। महात्मा ने विवश होकर दस बीस व्यक्ति और बुलाकर उठवाने का यत्न किया परन्तु सब व्यर्थ, शिवलिंग उठ न सका। महात्मा तरह-तरह के विचारों में डूबा हुआ लौट आया। रात को उसे स्वप्न हुआ—"तुम मुझे ले जाना चाहते हो तो ग्राम पंडाह की कुम्हारी सतवन्ती से मुझे उठवाओ। दूसरा कोई मुझे उठा नहीं सकता। जहां मैं पुनः भारी हो जाऊंगा वहीं मेरी स्थापना कर देना।

ग्राम पंडाह से सतवन्ती को बुलाने भेजा गया। व्यक्ति जब उसके घर पहुंचा तब सतवन्ती रोटी पका रही थी। पास ही बालक को सुलाया हुआ था। सन्देशवाहक के कहते ही चूल्हे में पड़ी रोटी और सोए हुए बालक को छोड़कर सतवन्ती उसके साथ चल पड़ी। आते ही सतवन्ती ने जो शिवलिंग दस-बीस व्यक्तियों से नहीं उठाया जा रहा था झट उठाकर पालकी में रख दिया।

जब उसी व्यक्ति के साथ घर पहुंची तब वह मनुष्य यह देखकर चकित रह गया कि जलते हुए चूल्हे में रोटी जलना तो दूर वैसी की वैसी कच्ची पड़ी थी तथा बालक सोया हुआ ही था।

इस चमत्कार से सतवन्ती के प्रति लोगों की श्रद्धा और अधिक दृढ़ हो गई। ठीक भी है सत के बल के सामने कुछ भी असम्भव नहीं होता। सावित्री ने मरे हुए पति को जीवित करके दिखा दिया था। इधर पालकी उठाए जय-जयकार करते लोग नाले से साहो की ओर बढ़ रहे थे। चढ़ाई चढ़कर जब लोग साहो के समतल जैसे भाग पर पहुंचे, सब सोच रहे थे न जाने वह कौन-सा स्थान होगा जहां पालकी पुनः भारी हो जाएगी और हम वहां चन्द्रशेखर की स्थापना कर सकेंगे। कितना अच्छा हो इसी समतल स्थान पर स्थापना की जा सके।

लगभग सौ गज आगे पहुंचने पर पालकी इतनी भारी हो गई कि एक पग आगे चलना कठिन हो गया। वहीं पालकी रखकर चन्द्रशेखर की स्थापना कर दी गई। नगाड़े, ढोल, नृसिंहे, करनाल, तुरही, शहनाई बैंस (बांसुरी) आदि स्थानीय वाद्य बजने लगे। जय-जयकार से वातावरण गूंज उठा। लोगों के बीच में एक व्यक्ति कांपता, किलकता सबके सामने आकर जोर से लोगों को सम्बोधित करता है।

गाजे-बाजे बंद करके लोग सुनने लगे। वह व्यक्ति फिर कांपने लगता है। कांपता हुआ बोला—"बजाओ बाजे। लोग तरह-तरह के नारों से शिवजी की जय-जय

करने लगे, बाजे बजने लगे। पुनः पहले जैसा ही वातावरण हो गया। कांपने वाला व्यक्ति फिर बोला—लोग चुप होकर सुनते हैं—

"मैंने कहा सतवन्ती को यहां बुलाओ।" एक व्यक्ति को पंडाह की ओर भगाया गया। पंडाह यहां से लगभग चार मील दूर है। समय तो लगना ही था। अतः जब तक सतवन्ती नहीं पहुंची शिवजी भगवान के भजन-कीर्तन की स्तुति होती रही। जब सतवन्ती वहां पहुंची पुनः बाजे बजने लगे। जय-जयकार गूंज उठी। कांपने वाला व्यक्ति फिर कांप उठा। हाथ जोड़ सतवन्ती उसके सामने खड़ी हो गई। कांपने वाले ने कहा—सतवन्ती मैं प्रसन्न हुआ वर मांगो! सतवन्ती बड़ी नम्रता से बोली—"आप प्रसन्न हैं तो महाराज हमारी दो कठिनाइयों को दूर करने की कृपा करें। पहली यह कि ऐल्हण का विषैला प्रभाव हमारे पशुधन का विनाश कर डालता है उससे हमारा सम्पूर्ण स्थान सुरक्षित हो जाए और पानी का अभाव समाप्त हो जाए।

चेला (कांपने वाला व्यक्ति चेला कहलाता है, लोक साधारण की धारणा है कि व्यक्ति विशेष में देव प्रवेश हो जाने पर वह कांपने लगता है और फिर जो कुछ कहता है वह देव प्रेरणा कहलाती है) कहा—

"जाओ ऐल्हण तुम्हारे यहां विषैला नहीं रहेगा साथ ही पानी की क्या बात है वह भी निकल पड़ेगा।" सतवन्ती ने लाख-लाख धन्यवाद किया और देवता के वरदान से इस क्षेत्र का ऐल्हण वृक्ष विषरहित हो गया तथा पानी के चश्में फूट पड़े। वह अपने घर की ओर जा रही थी, लोग सतवन्ती की तरह-तरह के शब्दों से प्रशंसा करने लगे। सामूहिक श्रेय और हित की कामना करने वाली नारी प्रशंसा की ही तो पात्र थी।

आज पंडाह वाले सतवन्ती द्वारा पाए प्रसाद का लाभ तो उठा रहे हैं किन्तु खेद है उसका असली नाम भूल चुके हैं। सतवन्ती आज नहीं है पर पंडाह क्षेत्र में ऐल्हण आज भी निर्विष बना हुआ है जितना चाहें पशु ऐल्हण खा लेते हैं परन्तु उसका जहरीला प्रभाव बिल्कुल नहीं होता। पनिहार एक नहीं चार स्थानों पर विद्यमान है।

धन्य है उसका जीना, जो पर हित में जीवन जीये।
व्यर्थ है उसका जीना, जो निज हित में ही जीवन जीये॥

●

कलयुगी पहरा

✍ बृज लाल ठाकुर

एक बार जब पांडवों को कौरवों द्वारा वनवास दिया गया तब पांचों पांडव युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल व सहदेव तथा उनकी माता कुंती कहीं बनवास को चले गये। चलते-चलते वे किसी दूर स्थान पर पहुंचे तो वे थक चुके थे। उन्होंने वहीं पर ही अपना ठहरने का ठिकाना बनवा लिया। तभी माता कुंती को बहुत जोर की प्यास लगी। उसने युधिष्ठिर से पानी लाने के लिए कहा। युधिष्ठिर ने अपने सबसे छोटे भाई सहदेव को पानी ले आने के लिए कहा।

सहदेव भाई की आज्ञा पाकर पानी लाने के चल दिया। जब वह घूमता-फिरता किसी पनघट पर पहुंचा तो उसने देखा कि वहां पर तीन बावड़ियां बनी थीं। पानी पहली बावड़ी से उछल कर तीसरी में और तीसरी से उछल कर पहली में जा रहा था लेकिन बीच की बावड़ी खाली थी।

जब सहदेव उसमें पानी भरने लगा तो बीच की बावड़ी बोली। पहले आप मेरे प्रश्न का उत्तर देना तब पानी भरना। यह सुनकर सहदेव ने कहा—पूछो। बावड़ी ने कहा कि मैं बीच में सूखी हूं और पानी एक से तीसरी तथा तीसरी से पहली बावड़ी में जा रहा इसका क्या कारण है। इसका कारण न जानकर सहदेव को वहीं खड़ा रहना पड़ा। बहुत देर हो गई थी जब सहेदव नहीं लौटा। युधिष्ठिर ने नकुल को पानी लाने के लिए कहा क्योंकि उनकी माता कुंती की प्यास बढ़ती जा रही थी। यह सुनकर नकुल पानी लाने के लिए चल पड़ा। जब नकुल रास्ते में से जा रहा था तो उसने देखा कि गाय अपनी ही जन्मी बछड़ी को पी रही थी। जब बछड़ी ने नकुल को जाते देखा तो उससे कहा कि जाते आदमी रुक जा पहले मेरा प्रश्न हल कर नहीं तो आगे नहीं जाना।

नकुल ने प्रश्न पूछा। बछड़ी ने कहा कि मैं इसकी जन्मी बच्ची हूं मुझे इसका दूध पीना चाहिए या इसे मेरा दूध पीना चाहिए। यह सुनकर नकुल उत्तर न दे सका और वहीं खड़ा रहा।

युधिष्ठिर बोला पानी के लिये दो भाईयों को भेज चुका हूं आया एक भी नहीं है। माता की प्यास बढ़ती जा रही है। युधिष्ठिर ने अर्जुन से कहा। यह सुनकर अर्जुन पानी लाने चल पड़ा। जब वह रास्ते से गुजर रहा था तो उसने देखा कि एक घसियारा घास काटकर गट्ठर बना रहा है।

जब उससे यह गट्ठर न उठाया गया तो उसने और घास काटा और गट्ठर में लगा लिया। इस तरह घास ने जाते आदमी को देखकर कहा। जाते आदमी कृपया मेरे प्रश्न का उत्तर देकर आगे जाना। अर्जुन ने कहा, क्या प्रश्न है, इस पर घास ने कहा कि इस घसियारे का जब गट्ठर भारी था तो इसे थोड़ा घास निकाल कर रखना चाहिए था मगर यह तो मुझे और काटकर लगा रहा है। अर्जुन इसका उत्तर न दे सका और वहीं खड़ा रहा।

जब तीनों में से कोई भी वापस नहीं आया तो युधिष्ठिर बहुत चिन्तित हुए तथा उन्होंने भीम को पानी लाने के लिए कहा। भीम जब रास्ते से पानी लाने गुजर रहा था तो उसने देखा एक बाड़ जो फसल की सुरक्षा के लिए लगाया जाता है को फसल खाते देखा।

इस पर जब खेत ने भीम को रास्ते से जाते देखा तो उसने उससे कहा कि मेरी सुरक्षा के लिए यह बाड़ लगाया गया है मगर यही बाड़ मुझे खा रहा है, कृपया आप इसका उत्तर देकर आगे जाएं। अब भीम को भी प्रश्न का उत्तर न मिला और वहीं खड़ा रहा।

जब चारों भाइयों में से कोई भी वापस नहीं आया तो युधिष्ठिर खुद पानी लाने चले। जब वह भीम के पास पहुंचे तो उन्होंने कहा कि भीम! मैंने तुम्हें यहां खड़े होने के लिए भेजा था या पानी लाने के लिए। इस पर भीम ने सारी कहानी बता दी।

तभी युधिष्ठिर ने खेत के प्रश्न क हल करते हुए कहा "यह कलयुग प्रचार हो रहा है। क्योंकि कलयुग में लोगों की भलाई के लिए जो कर्मचारी नियुक्त किए जाएंगे। वही कर्मचारी लोगों के खून-पसीने की कमाई रिश्वत के रूप में खाएंगे। इस प्रकार वहां से भीम को लेकर युधिष्ठिर आगे चले।

आगे जाकर अर्जुन ने युधिष्ठिर को आते ही अपनी सारी बात बता दी। इस पर फिर से युधिष्ठिर ने घास से कहा कि यह कलयुग का प्रचार है। कलयुग में लोग लालच करके सब से कर्ज ले लेंगे मगर चुकाएंगे कोई भी नहीं। यह उत्तर देकर युधिष्ठिर, भीम व अर्जुन नकुल की तलाश में चले।

जब वह तीनों नकुल के पास पहुंचे तो नकुल ने अपनी सारी कहानी सुना दी। इस पर युधिष्ठिर ने बछड़ी से कहा कि यह भी कलयुग का प्रचार हो रहा है।

कलयुग में मां अपनी बेटी की कमाई पर रहेगी।

यह उत्तर देकर युधिष्ठिर तथा भीम, नकुल और अर्जुन सहदेव की ओर चले। सहदेव ने आते ही अपना प्रश्न युधिष्ठिर को सुना दिया। इस पर युधिष्ठिर ने इसे कलयुग का प्रचार कहकर समझाया कि कलियुग में लोग जो आपस में खास रिश्ते-नाते वाले होंगे वे आपस में न मिलकर किसी दूसरे पराये से गठबंधन जोड़ेंगे।

इस प्रकार चारों प्रश्नों के उत्तर देकर वे पांचों पांडव पानी लेकर अपने रहस्य स्थान पर पहुंचे और अपनी माता को पानी पिलाया।

●

देख! मां तेरी कि मेरी

✍ आशा शैली

एक युवक था, बड़ा सीधा-सादा। भोला-सा, गांव का छैल-छबीला किन्तु समझदार भी कम न था। अपने ही खेती के काम में मस्त रहता। जो मिलता उसी में संतोष कर लेता।

घर में एक उसकी मां थी और एक पत्नी। तीन जनों का परिवार, प्रभु कृपा से भली प्रकार भरपेट खाते और खुश रहते किन्तु उसकी पत्नी बहुत चिड़चिड़ी थी। हर दिन सास के साथ बात-बेबात पर झगड़ा करती रहती। युवक घर की कलह से बहुत दुखी रहता। वह अपनी मां से बहुत प्रेम करता था अतः उसको दुखी नहीं देख सकता था। इधर पत्नी से भी उसे प्रेम था। उसके लिए मां और पत्नी बराबर का स्थान रखती लेकिन उन दोनों की आपस में बिल्कुल न बनती। पत्नी उसे बार-बार मां को निकाल देने को कहती लेकिन वह सोचता कि मां का भी उसके सिवा कौन है। कहां जाएगी वह? क्या खाएगी? और वह स्वयं कैसे रहेगा मां के बिना।

एक दिन उसने अपने साथी-दोस्तों से इस बारे में चर्चा की। मित्रों ने उसे सलाह दी कि मां को वह दोघरी (दूर छोटा घर जो खेतों की रखवाली के लिए बनाया जाता है) पर रख दे और उसे आवश्यक सामान देता रहे। इससे झगड़ा खत्म हो जाएगा, क्योंकि जब वे दोनों एक स्थान पर होंगी ही नहीं तो झगड़ा कैसे करेंगी? युवक को बात जंच गई और उसने मां को दोघरी में ले जाकर रख दिया। मां बूढ़ी थी इसलिए युवक उसकी सेवा टहल वहीं पर करने लगा। घर में शान्ति हो गई। युवक की पत्नी प्रसन्न रहने लगी। अब वह खूब अच्छा-अच्छा खाना बनाती और दोनों मिलकर खाते। युवक किसी न किसी बहाने वह पकवान निकालकर ले जाता और प्रेम से मां को खिलाता।

चोरी आखिर चोरी होती है। कुछ दिन तो सब चलता रहा। किन्तु धीरे-धीरे युवक की पत्नी को सब पता लगने लगा। अब पति-पत्नी का झगड़ा होने लगा। उसकी पत्नी कहती कि वह मां के पास न जाए किन्तु युवक किसी प्रकार न मानता।

झगड़े से बचने के लिए वह चोरी-छिपे मां की सेवा करने लगा। कुछ दिन फिर सुख से बीत गये। अब वह पत्नी को प्रसन्न रखने के लिए मां के पास बहुत कम जाता। बस थोड़ा देखभाल करके लौट आता।

यह बात भी कुछ दिन तक छिप न सकी। युवक की पत्नी नहीं चाहती थी कि वह एक सेर आटा भी मां को दे। इसलिए उसने बहुत सोच-विचार कर एक योजना बनाई। उसने बीमार होने का बहाना किया। युवक बेचारा पत्नी के छल को न जान सका और लगा उसकी सेवा-टहल करने। गांव के वैद्य से दवा-बूटी ले आता। देवता के मन्दिर जाता। किन्तु वह बीमार होती तब न उसे आराम होता, वह तो मक्कारी कर रही थी। सो न उसे ठीक होना था, न हुई। हर रोज नया कष्ट पति को बता देती, वह बेचारा दिन-भर खेतों में काम करता। शाम-सुबह घर का पशुओं का काम; भोजन भी बनाता उसकी पत्नी बस पड़ी-पड़ी हाय-हाय करती रहती। जैसे ही वह घर से चला जाता वह भली-चंगी हो जाती। युवक का मां के पास जाना भी छूट गया।

एक दिन शाम को जब वह युवक घर आया तो पत्नी कराहती हुई बोली, 'सुनो जी! आज दिन को यहां एक साधु आया था, कह रहा था कि तुम अच्छी हो सकती हो। मैंने पूछा कैसे तो उसने कहा कि यदि तुम्हारा पति अपनी मां के मुंह पर जलते चूल्हे की राख डालकर उसके सिर के बाल और मुंह जलाकर, मुंह काला करके हाथ-पांव बांधकर उसे यहां तुम्हारे पास ले आये तो तुम ठीक हो जाओगी।'' युवक बोला, ''यह कौन-सी बात है मैं अभी जाता हूं, बस तुम ठीक हो जाओ।''

अगले दिन शाम होते-होते युवक पीठ पर गठरी उठाये लौट आया। पत्नी को और क्या चाहिए था। तुरन्त उठ बैठी। पकवान बनाए गए। दोनों ने मिलकर भोजन किया इस बीच हाथ-मुंह-पांव बंधे बुढ़िया की गठरी एक किनारे पड़ी रही। बुढ़िया बेहोश भी थी और मुंह काला व जला हुआ भी था। सुबह उठकर पत्नी इतराती हुई बोली, ''देखा मेरा कमाल! तुम्हारे ही हाथों तुम्हारी मां का मुंह काला करवा दिया। ऐसी होती है औरत की चाल।''

युवक हंसता हुआ बोला, 'कहती तो तुम ठीक हो पर पहले इस गठरी को बाहर तो निकालो उजाले में, मैंने तो इसे तुम्हारी बीमारी की बात बताई और इलाज के बारे बताया तो यह खुशी-खुशी हर बात के लिए तैयार हो गई।' अब तक उसकी पत्नी गठरी को घसीटती-धकेलती उजाले में ले आई थी। तभी युवक फिर बोला, 'औरत की चाल की बात करने वाली रांड, ये देख मर्द की फेरी, देख तो सही मां तेरी कि मेरी।'

अब उसने धक्के देकर दोनों मां-बेटी को घर से निकाल दिया और अपनी मां को घर ले आया। फिर एक भली लड़की देखकर उससे शादी करके सुख से रहने लगा।

●

लोकड़ी अलबेली

✍ आशा शैली

एक राजा के सात बेटे थे। दूसरे राजा की सात बेटियां थीं, दोनों ने सोचा कि इन सातों भाइयों का सातों बहनों से ब्याह कर दें तो बहन भाई सब प्रेम से रहेंगे। सब से छोटे राजकुमार को बाला ग्यालू (छोटा ग्यालू) कहा जाता और छोटी राजकुमारी को लोकड़ी-लबेली (छोटी अलबेली)। बातचीत तय हो गई, विवाह निश्चित हुआ।

बारात चलने लगी तो मन्त्रणा हुई कि किसी को तो घर पर भी रहना चाहिए। वरना बारात लौटने पर स्वागत-सत्कार में कोई कमी न रह जाए। बाला-ग्यालू क्योंकि सबसे छोटा था इसलिए उसे कहा गया कि तुम्हारी पत्नी को हम ले आयेंगे। पालकी भेज दो। बेचारे ने बड़े भाइयों की बात मान ली और अपनी पत्नी के लिए पालकी उनके साथ भेज दी।

भाइयों के मन में शुरू से ही खोट था। उन्होंने छोटी राजकुमारी की सुन्दरता और तप के चर्चे सुन रखे थे इसलिए वे अपनी योजनानुसार खाली पालकी ले आये। छः भाइयों का छः बहनों के साथ विधिवत् विवाह हुआ। छोटी राजकुमारी खाली पालकी देखकर खूब रोई तो बड़े छहों राजकुमारों ने उससे कहा कि वह तो गूंगा है इसीलिए नहीं आया। तुम हममें से जिसे पसन्द करो उसके साथ चलो किन्तु राजकुमारी ने जाने से इन्कार कर दिया।

उधर बाला ग्यालू को भाइयों ने यह कहा कि वह तो आने से इन्कार करती है इसीलिए पालकी खाली आई है। इधर लोकड़ी लबेली ने अपने तप को और कठिन कर दिया। अब वह प्रातः मुंह अंधेरे उठती और चिड़िया के बोलने से भी पहले बावली से पानी भर लाती। खुद ही अपना भोजन बनाती, किसी का छुआ भी न खाती और तप करती रहती।

बाला ग्यालू सुन्दर था। सभी छः भाभियां उसे किसी न किसी बहाने उलझाए रखतीं। एक दिन वह गेंद खेल रहा था कि गेंद भाभियों की ओर उछल गई। अब तो भाभियों ने उसे तंग करने के लिए गेंद छुपा ली। मांगने पर भी नहीं दी। बाला

ग्यालू की मां ने भी कहा कि तुम लोग इसे गेंद दे दो तो भाभियों ने ताना मारा कि लोकड़ी-लबेली तो आने से रही अब तो इसे हम लोगों के साथ ही दिल बहलाना पड़ेगा। यह बात उसे चुभ गई और वह घर से निकल पड़ा।

चलते-चलते कई दिनों बाद बाला ग्यालू एक जंगल में जा पहुंचा। वहां उसे एक साधु मिला। उसने राजकुमार के भटकने का कारण पूछा तो उसने सारी कथा सुना दी। साधु को उस पर दया आ गई और लोकड़ी-लबेली से मिलने की सारी जुगत बता दी। अब तो राजकुमार खुशी-खुशी वहां जा पहुंचा जहां अलबेली राजकुमारी सुबह-सुबह पानी भरने आती थी, सारी रात जागकर उसने राजकुमारी के आने की प्रतीक्षा की। जब उसे दूर से एक नारी अपनी तरफ आती नज़र आई तो उसने झट अपनी पगड़ी खोलकर पानी में डाल दी और उसे मल-मल कर धोने लगा। राजकुमारी अलग खड़ी होकर उसके हटने की प्रतीक्षा करती रही ताकि वह अपना बर्तन भरकर जा सके। लेकिन ग्यालू तो जानबूझकर पगड़ी के बहाने पानी रोक रहा था ताकि राजकुमारी बोलने पर विवश हो। उधर विलम्ब होता देख राजकुमारी ने दूसरी ओर से बूंद-बूंद टपकते पानी के नीचे बर्तन लगा दिया।

अब तो बेचारा राजकुमार परेशान हो गया क्योंकि बर्तन भरने लगा था और राजकुमारी बोली ही नहीं। जब तक वह बोले नहीं उसका काम कैसे बने। अब राजकुमार ग्यालू ने पगड़ी को जोर-जोर से कूटना शुरू किया जिससे छींटे उड़कर राजकुमारी के भरे बर्तन में जा पड़ें। अब तो उसे बोलना ही पड़ा। उसने पूछा कि "तुम कौन हो और मुझे क्यों परेशान कर रहे हो?"

"तब बाला ग्यालू ने कहा कि मैं तुम्हारा वही पति हूं जिसकी पालकी तुमने खाली भेज दी थी।" राजकुमारी बोली कि "तुम झूठ बोलते हो वह तो गूंगा है।" तब ग्यालू ने अपने भाइयों व उसकी बहनों के कपट की सारी बात बताई और उससे आग्रह किया कि वह उसे अपने घर ले चले और माता-पिता से भेंट करा दे। बाकी बात वह खुद कर लेगा। इस पर राजकुमारी खुशी-खुशी उसे घर ले गई।

घर जाकर उसने मां से कहा, "मां मेहमान आये हैं।" मां बोली ठीक है, जौ की रोटी खिला दो और चलता करो। तब बाला ग्यालू कहने लगा कि मैं तुम्हारा दामाद हूं मेरे लिये बढ़िया चावल का भात बनाओ और अन्दर रखा खूब सारा घी डालकर भोजन कराओ।

सारी बात जानकर मां ने कहा कि उस समय अगर तुम आते तो बात और थी अब तो तुम्हें ससुर की इज्जत (जुर्माना) देनी पड़ेगी। राजकुमार ने अपने कानों से सोने के कुण्डल और हाथों से कड़े निकालकर थाल में रख दिए। इस पर राजकुमारी अलबेली ने मां से अनुरोध किया कि मेरे पति के स्वर्णाभूषण उतार देने से उसकी सुन्दरता मंद पड़ गई है अतः अब इसका शृंगार तुम करो। अंततः राजकुमारी अलबेली

ग्यालू को सौंप दी गई। साथ ही मां ने खूब सारे स्वर्णाभूषण भी दिए।

अब वे दोनों अपने घर आये तो छहों भाई अपनी पत्नियों सहित हैरान रह गये। लोकड़ी-अलबेली राजकुमारी जब घर से चली तो उसका पालतू कुत्ता भी उसके साथ चल पड़ा। वह उसके बिना रहता ही नहीं था।

रात जब नव दम्पत्ति को भोजन परोसा गया तो उनकी थालियों में विष डाल दिया गया। जब वे भोजन करने बैठे तो राजकुमारी ने पहले टुकड़ा तोड़कर अपने कुत्ते को हर रोज की भांति डाला। कुत्ते ने रोटी खा ली और कांपने लगा। राजकुमार ने अभी भोजन शुरू नहीं किया था। अलबेली ने झपट कर उसके आगे से थाली उठा ली। वह हैरान होकर पत्नी को देखने लगा कि यह क्या कर रही है किन्तु राजकुमारी ने थाली कुत्ते के आगे रख दी। कुत्ता भोजन खाकर तुरन्त ही तड़प कर ठण्डा हो गया। जब भाभियों और भाइयों ने देखा कि इन्हें तो सब पता चल गया है तो उन्होंने दूसरी चाल चली। उन्होंने बाला ग्यालू को एक ऐसी जगह भेजा जहां पशुओं की रखवाली के लिए गोली भी चलती थी। पत्नी के मना करने पर भी बाला ग्यालू वहां चला गया। राजकुमारी भी पीछे चल पड़ी। वही हुआ जिसका भय था। जंगल में ग्यालू गोली लगने से मर गया।

पीछे दौड़ती राजकुमारी ने जब उसे मृत देखा तो पति का सिर गोद में लेकर बैठ गई। इतने में बड़े छहों भाई भी आ गये और उससे भाई का शव दाह-संस्कार हेतु मांगने लगे। राजकुमारी ने शव देने से इन्कार कर दिया और उन्हें वहां से भाग जाने को कहा वे तो अपराधी थे ही। उन्होंने ही भाई को मरवाया था अतः चुपचाप चले गये। अब राजकुमारी अलबेली पति का सिर गोद में लेकर बैठी रही।

कई दिन गुजर गये। राजकुमारी के आंसू बहकर तालाब का रूप लेने लगे। एक दिन शिव पार्वती वहां से गुजरे तो अचानक उस तालाब को देख पार्वती को प्यास लग आई। वह पानी पीने लगी तो शिव जी ने उसे पकड़ लिया और कहा कि यह पानी पीने योग्य नहीं है। किन्तु पार्वती ने अपनी प्यास को न सहने योग्य बताते हुए पुनः पानी पीना चाहा। तब शिवजी उसे सारी बात बताने पर विवश हो गये। चल पड़े दोनों उसी जगह जहां राजकुमारी बैठी थी, पति का सिर उसकी जांघ पर रखा था और आंखों से बहने वाली धारा उस तालाब तक पहुंच रही थी।

शिव पार्वती ने उसे बहुत समझाया और कहा कि "यह तो मर गया है। इसे जला दो और घर जाओ।" राजकुमारी ने जवाब दिया कि "या तो यह जिएगा या मैं इसके साथ ही मरूंगी।" अब तो पार्वती ने हठ पकड़ लिया। शिव से कहने लगी कि इसे जिन्दा करो। अन्त में हार कर शिवजी ने बाला ग्यालू राजकुमार को जीवित कर दिया और कैलाश को चले गये। दोनों पति-पत्नी सुख से रहने लगे।

●

अफीमची

✍ डॉ॰ ब्रह्मदत्त

किसी नगर में एक बनिया रहता था। वह प्रायः व्यापार करने के लिए गांवों में घूमता रहता था। इसी तरह वह एक बार अपने घोड़े पर चढ़कर व्यापार करने के लिए एक ऐसे गांव में चला गया जो ठगी के क्षेत्र में बहुत प्रसिद्ध था। गांव के समीप पहुंचकर उसने देखा कि एक अफीमची धरती पर लेटा हुआ है और दर्द के मारे छटपटा रहा है। पूछने पर उसने बताया कि वह चौबीस घंटे नशा करता है और सारा दिन सोया रहता है। कुछ दिनों से अफीम नहीं मिल रही थी और उसका नशा टूट गया था और वह भांग पीकर दिन काट रहा था परन्तु आज उसके अन्य मित्र नहीं आए थे और भांग को घोटने की उसमें हिम्मत नहीं थी।

इसलिए अफीमची ने बनिये से कहा—"यदि आप भांग रगड़ दें तो मैं आपका आभार मानूंगा और मैं आपकी इस सेवा को जीवन में कभी नहीं भूलूंगा।" बनिया पहले तो ऐसा गन्दा काम करने के लिए राजी नहीं हुआ। परन्तु जब अफीमची ने यह कहा—"आज तुम मेरी सहायता करो, फिर कभी मैं तुम्हारे काम आऊंगा।" बनिये को उसके इन शब्दों को सुनकर उस पर दया आ गई। उसने भांग रगड़कर अफीमची का नशा पूरा किया और वह वहां से आगे चला गया।

जब बनिया ठगों के गांव में पहुंचा तो उसकी भेंट एक तेली से हुई, जिसने उसे रात भर अपने घर में ही विश्राम करने की अनुमति दे दी। तेली के घर के सामने एक लकड़ी का खूंटा था। बनिये ने तेली के कहने पर अपना घोड़ा उस खूंटे के साथ बांध दिया। दूसरे दिन प्रातःकाल तेली उठा और बनिये का घोड़ा खोलकर कहीं ले जाने वाला था कि बनिये की नींद खुल गई। उसने तेली की नीयत खराब देखी तो भीतर से चिल्ला कर कहा, "यह मेरा घोड़ा तुम कहां ले जा रहे हो जी?" तेली साफ मुकर गया। बोला, "अरे क्या बकते हो? यह घोड़ा तो मेरा है। सारा गांव जानता है कि मेरा खूंटा हर वर्ष एक घोड़े को जन्म देता है।"

बनिया उसके यह शब्द सुनकर बहुत घबराया और बोला, "सारा गांव जानता

है कि यह वही घोड़ा है जिस पर चढ़कर मैं कल यहां आया हूं।"

बनिया गांव में गया और कुछ व्यक्तियों को गवाही के लिये बुला लाया, जिन्होंने उसे घोड़े पर आते देखा था। परन्तु वे सब जब तेली के पास पहुंचे तो उसके सामने मुकर गए।

यह देखकर बनिया नगरपाल के पास पहुंचा और उससे सारी घटना कह सुनायी। नगरपाल ने कहा कि गवाही के बिना कुछ भी नहीं किया जा सकता। बनिया चिन्ता में डूब गया कि अब क्या किया जाए? काफी सोच-विचार करने के पश्चात् उसे अफीमची की याद आई। वह अफीमची के पास गया और उसे गवाही देने के लिए कहा।

अफीमची बनिये की गवाही देने के लिए तैयार हो गया। बनिये ने उसे गवाही के लिए नगरपाल के सम्मुख उपस्थित कर दिया। उस समय नगरपाल किसी अन्य मामले में व्यस्त था, इसलिए उन्हें कुछ देर प्रतीक्षा करनी पड़ी।

इसी बीच अफीमची को नींद आ गई और वहीं सो गया। इधर नगरपाल को फुर्सत मिली तो उन्होंने बनिये को गवाह हाजिर करने के लिए कहा और तब अफीमची के नाम की पुकार तीन बार हुई परन्तु वह मज़े से सोता रहा। यह देखकर अर्दली ने उसे ठोकर लगाते हुए कहा, "अरे मूर्ख! अदालत में आकर भी सोता है।"

अफीमची आंखें मलता हुआ उठा और जम्हाई लेकर बोला, "कल रात मैं सो नहीं सका। सारी झील में आग लगी हुई थी और मछलियां उसमें इस प्रकार तली जा रही थीं, जैसे कि तेल में मैं उनका शिकार करता रहा।"

नगरपाल ने अफीमची की यह बात सुन ली और बोले, "अरे कुम्भकर्ण! व्यर्थ की बकवास न कर। क्या जल में भी कभी आग लगती है?"

अफीमची ने तुरन्त उत्तर दिया, "यदि खूंटा घोड़े को जन्म दे सकता है, तो पानी में भी आग लग सकती है।" यह सुनकर नगरपाल को होश आया और उन्होंने मन ही मन कहा कि यह अफीमची ठीक ही तो कहता है। उन्होंने आज्ञा दी कि तेली को सौ कोड़े लगाये जाएं और बनिये को घोड़ा दिलाया जाए।

●

कर्म की गति न्यारी

✍ बी. आर. मुसाफिर

राजा विक्रमाजीत अपना भेष बदलकर जनता के कष्टों का अनुभव करने रात के समय भ्रमण करते थे। एक बार वह सदा की भांति अपने भ्रमण पर निकले ही थे कि थोड़ी दूर पर उन्हें दो साधु मिले। एक साधु कह रहा था कि जो लिखनेवाले ने लिखा है वही होता है, परन्तु दूसरा साधु कह रहा था, नहीं कर्म द्वारा वह लेख बदल भी सकता है। दोनों में इसी बात पर "तू-तू-मैं-मैं" हो रही थी। एक कह रहा था लेख प्रधान है दूसरा कह रहा था कि नहीं कर्म प्रधान है। राजा सामने आ गया। "क्यूं बाबा क्यों लड़ रहे हो? बात क्या हैं।" दोनों ने अपने पक्ष को दोहराया। राजा चकित तो रह गया पर फिर भी उसने कहा—"देखो बन्धुओं? आपको पता है कि इस नगरी का राजा कौन है? किसके राज्य में आप विचरण कर रहे हैं?"

"हां महाराज जानते हैं, यहां का राजा बड़ा ही न्यायप्रिय है, दानी हैं, भगवान को जानने वाला हैं।"

"तो फिर तुम लोग कल उसकी कचहरी में जाकर अपने विवाद का निर्णय ले लो।"

राजा इतना कहकर आगे तो बढ़ गया पर उसके दिमाग पर यह बात बोझ बनकर रह गई। लेख प्रधान या कर्म प्रधान। इसी सोच में पड़ा था कि गली के एक छोर में दीप जल रहा था और उस मकान से रोने की आवाज आ रही थी। राजा रुक गया, मकान का द्वार खटखटाया। कुछ समय बीत जाने पर द्वार खुला और एक मरियल सा मुखड़ा सामने नज़र आया।

"हां भाई क्या बात है, क्यूं रो रहे हो? क्या कष्ट हैं?"

"महाराज आप इस चक्कर में मत पड़ें हमें पता है कि आप राजा विक्रमाजीत के अतिरिक्त कोई नहीं।"

'भई! मैं पूछ रहा हूं कि आपको कष्ट क्या है। राजा विक्रमाजीत ही नहीं और भी कोई आपका सहायक हो सकता है।'

महाराज अगर आप अवश्य जानना चाहते हैं तो आइए अन्दर चलकर आपको सुनाता हूं, अपनी कहानी।

राजा गृहस्वामी के पीछे-पीछे अन्दर चला गया। राजा को आसन देकर बिठा दिया। तब गृहस्वामी ने अपनी राम कहानी शुरू की, महाराज मेरे यहां शादी के 20 वर्ष तक कोई संतान न हुई, हमने नाग देवता की आराधना शुरू की, एक रात को मुझे स्वप्न हुआ कि "देखो ब्राह्मण, तुम मांगो क्या चाहते हो"। मैंने कहा, "महाराज मैं संतानहीन हूं, कोई संतान नहीं है। मेरे यहां शास्त्रों में लिखा है कि मोक्ष-प्राप्ति के लिए संतान का पिण्ड अवश्य चाहिए।" नाग देवता बोले, देखो भगत तुम्हारी किस्मत में संतान नहीं लिखी है पर तुमने इतना कर्म किया इतनी साधना की, तो मैं तुम्हें वचन देता हूं कि तुम्हारे यहां संतान जरूर होगी (पुत्र रत्न) होगा। पर मैं भी विवश हूं कि ठीक 12 वर्ष पश्चात् आधी रात के समय नाग के काटने से उसकी मृत्यु हो जाएगी।

महाराज मैं मान गया। 12 वर्ष तो 12 वर्ष ही सही। कम से कम मैं संतान तो अपने घर में देख लूं। "तथास्तु" कहकर देवता अदृश्य हो गये। आज वह बारह (12) वर्ष पूरे हो रहे हैं। मेरे इकलौते बच्चे को नाग दंश करेगा और वह मर जाएगा, इसीलिए यह रुदन है।

राजा गृह स्वामी की सारी कहानी सुनकर असमंजस में पड़ गया, थोड़ी देर बोला, अच्छा कोई बात नहीं। तुम ऐसा करो कि दूध तथा पुष्प आदि का प्रबन्ध कर सकते हो।

"महाराज! आप जो आदेश देंगे मैं उसका पालन करने के लिए तैयार हूं, किन्तु देवता की बात अटल होती है, यह आप सोच लें।"

"चिन्ता न करो इसका परिणाम जो निकलेगा मैं उसको सहन करने के लिए तैयार हूं।"

लड़के को कमरे में सुला दिया गया, मुख्य द्वार से लेकर पुष्प बिछा दिए गए, थोड़ी-थोड़ी दूरी पर दूध के कटोरे भर दिए गए। आधी रात के समय नाग देवता ने मुख्य द्वार से प्रवेश करना आरम्भ किया, पुष्पों से सजा मार्ग, स्थान-स्थान पर दूध आहार, नाग बालक के कमरे तक आते-आते दयालु हो चुके थे। उसे अपने मालिक (नाग देवता) का आदेश भूल चुका था।

"क्या चाहते हो? मैं बहुत प्रसन्न हूं।" नाग अपने स्वामी की आज्ञा का पालन भूल चुका था।

महाराज! अपने बालक का जीवन दान इसके अतिरिक्त हमें कुछ नहीं चाहिए। साथ वाले कमरे से गृह स्वामी की जोरदार ध्वनि नाग के कानों में पड़ी।

यह आपने बहुत ही अनुचित मांग की है। इसका अर्थ यही है कि मैं अपने स्वामी की आज्ञा का पालन नहीं कर सकता, पर इसके लिए मुझे जो दण्ड भुगतना पड़े भुगत लूंगा, परन्तु मैं आपके बच्चे को जीवन दिए बिना नहीं रह सकता।

इतना कहकर नाग धीरे-धीरे मुख्य द्वार से बाहर गमन कर गए और राजा तथा गृहस्वामी ने बालक के कमरे में प्रवेश किया। राजा बोले कि महाशय आपका पुत्र स्वस्थ है। मेरा इतना ही काम था। आगे की बात आप मुझ पर छोड़ दे।

गृहस्वामी का धन्यवाद लेकर राजा जी उनके घर से निबट अपने महल में आकर सो गए।

उन्होंने सोचा कि मैंने एक तो नेकी की है कि एक जीव को नाग का आहार होने से बचाया, दूसरा, कल के मुकदमे का फैसला सुनाने के लिए मेरे पास प्रमाण मिल गए।

राजा नींद भरके सो गया। रात के समय उसे एक स्वप्न आया जिसमें नाग देवता उसे चुनौती दे गए कि राजा आपने विधि लेख को कर्म योग से बदलने की कोशिश की है, यह अच्छा नहीं किया, इसके परिणाम ठीक नहीं निकलेंगे।

राजा प्रातः उठा, अपने प्रातःकालीन कार्यों से निवृत्त होकर कचहरी में जा बैठा, उसके दिल में रात की बीती वार्ता तथा स्वप्न की वार्ता दोनों एक साथ घूम रही थीं। इससे पहले कि वह न्याय याचकों को बुलाए, उसके पेट में, कुछ गड़बड़ का भाव हुआ और उसने मंत्री को आदेश दिया कि मैं थोड़ी देर में आता हूं। वह गद्दी से उठा शौच करने, कचहरी प्रांगण से बाहर निकल गया, शौच से निवृत्त हो उसने जैसे ही गद्दी की ओर हाथ बढ़ाया, उसका हाथ गद्दी तक न पहुंच सका। एक पक्षी ने उसे घने जंगल में ले जाकर छोड़ दिया। काला जंगल जहां हर ओर सांप ही अठखेलियां ले रहे थे। कुछ क्षणों के लिए वह स्तब्ध-सा रह गया, वह एक वृक्ष पर चढ़ गया। एक दिन, दो दिन, चार दिन, भूख की आग तो वृक्षों के फलों से शांत कर लेता, पर भविष्य अधर में था। इस बीच उसे कई बार आकाशवाणी हुई कि राजा, विधि लेख प्रधान हैं, कर्म प्रधान नहीं पर न्यायप्रिय राजा ने एक गांठ सी दिल में बांध ली थी—कर्म प्रधान है।'' मैंने कर्म-योग से ही बालक की जान बचाई है।

एक दिन लक्कड़हारा आया उसने उसे देखा और कहा—'अरे बुद्धू! तू ऊपर क्या कर रहा है, नीचे उतर, कुछ कर्म कर यहां टंगे रहने से तुझे क्या मिलेगा।'' राजा वहां से उतरा और उतरकर लक्कड़हारे के पास आ गया।

कहो महाराज क्या आदेश हैं मेरे लिए? मैं हाजर हूं।

यह कुल्हाड़ा है मैं थक गया हूं, तुम भी लकड़ियां काटो और बेचकर रोटी कमाओ, मैं एक गट्ठा बेचता था, अब दो गट्ठे बेचा करेंगे, कर्म प्रधान है।

लक्कड़हारा बने राजा का अब यह धन्धा ही बन गया। मगर लक्कड़हारे की आज्ञा बिना वह दूसरी जगह भी अपना गट्ठा बेच डालता, जबकि लक्कड़हारे की एक ही बनिए के साथ सांठ-गांठ थी।

जब लक्कड़हारे ने देखा कि मेरा नौकर तो मुझसे अधिक दाम लाता है तो उसने बनिए को कहा महाराज! मुझसे तो मेरा नौकर अधिक दाम लाता है। आप तो मुझे कम दाम देते हैं। बनिया चालाक था, उसने लक्कड़हारा बने राजा के साथ सांठ-गांठ की और उसे अपने पास नौकर रख लिया।

राजा विक्रमाजीत अब लक्कड़हारे का नौकर न रहकर अब बनिए का नौकर था और उसी के पास रहकर रहने लगा।

एक दिन उस नगर के राजा का भण्डारी बनिए के साथ बातें कर रहा था कि हमारा राजा बड़ा उदास रहा है उसके पास एक मुकदमा आया है उसका निर्णय देने के लिए उसे रात-दिन परेशानी में काटने पड़ रहे हैं।

यह बात नौकर अर्थात् राजा विक्रमजीत ने भी सुन ली, वह बोले—"अरे भण्डारी जी! वह क्या मुकदमा है जिसका निर्णय राजा नहीं दे पा रहा है। थोड़ा हमें भी तो पता चले, हो सकता है नगर के राजा की हम ही सहायता कर सकें।"

बनिया इस पर गुस्से में बोला कि "तुम क्या जानो राजाओं की बातें तुम्हें अपनी सीमा के अन्दर रहना चाहिए, टके का नौकर लाखों के स्वप्न लेता है, अपनी स्थिति देख, हमारी बात में बाधा मत डाल।"

मगर भण्डारी ने यह बात राजा के मंत्री तक और मंत्री ने राजा तक पहुंचा दी, राजा के आदेश से बनिए के नौकर (राजा विक्रमाजीत) को बुलाया गया, बनिए ने सोचा मेरा तो काम ही बिगड़ गया पता नहीं राजा कहीं मुझ पर ही क्रोधित न हो जाए।

राजा विक्रमाजीत को राज भवन में लाया गया, नगर के राजा ने उसे पूछा कि क्या तुम मेरी सहायता कर सकते हो निर्णय देने में?

"पर महाराज, मुझे पता तो चले कि आपके सम्मुख क्या समस्या है। जिसने आपको परेशान कर रखा है, और मुझ जैसे तुच्छ व्यक्ति को बुलाया है।"

"देखो महाशय, तुम्हारी प्रशंसा भण्डारी से सुनी है। तभी तुम्हें बुलाया है। विधि लेख प्रधान है या कर्म प्रधान है यही निर्णय देना है क्या तुम मेरी सहायता कर सकते हो इस निर्णय में?"

"हां महाराज! यह तो एक साधारण सा निर्णय है। आप फैसला दे सकते हैं कि कर्म प्रधान है, लेख प्रधान नहीं।"

पर महाशय इसका प्रमाण भी तो होना चाहिए।

इसके प्रमाण हेतु सेवक हाजिर है।

राजा की आज्ञा से वादी को बुलाया गया, निर्णय दे दिया गया कि कर्म प्रधान है, लेख प्रधान नहीं पर इसके लिए प्रमाण की आवश्यकता थी।

प्रमाण के रूप में राजा विक्रमाजीत को बुलाया गया। उसने अपने आपको परदे में रखकर सारी कहानी सुना दी कि राजा विक्रमाजीत के सम्मुख भी यही प्रश्न आया था और उसने प्रमाण सहित यह निर्णय दिया था कि कर्म प्रधान है, लेख प्रधान नहीं।

वादी ने सारी कथा सुन, स्वीकार किया कि राजा का निर्णय सत्य है।

राजा ने बनिए के नौकर को कहा कि "तुम बनिए की नौकरी छोड़ दो और आज से तुम मेरे मंत्री रहे।"

नौकर बने राजा विक्रमाजीत ने राजा से निवेदन किया कि महाराज मुझे सहर्ष स्वीकार है परन्तु इसके लिए मुझे बनिए से तो आज्ञा लेनी ही पड़ेगी। राजाओं के लिए आज्ञा की आवश्यकता तो थी नहीं फिर भी बनिए की स्वीकृति लेकर राजा के मंत्री पद का भार सम्भाल लिया। दिन बीतते चले गए। राजा अपने मंत्री के काम से इतना प्रभावित हुआ कि राज्य का कार्यभार सारा मंत्री पर ही डाल दिया। मेलजोल इतना बढ़ गया कि दोनों प्रातः भ्रमण के लिए भी इकट्ठे ही जाने लगे।

एक दिन दोनों घूमने गए थे। जंगल में जाकर शौचादि से निवृत्त होने के लिए हाथ में गड़वी लिए इधर-उधर हो गए। राजा विक्रमजीत उसी प्रकार गड़वी के लिए हाथ बढ़ाने को ही था कि वही पक्षी आया और राजा विक्रमजीत को उठाकर उसी स्थान पर ले गया जहां से कुछ समय पूर्व उसे उठाया था। राजा के सामने वैसे ही गड़वी पड़ी थी। उसने पानी भरा और हाथ-मुंह धोकर कचहरी चला गया। मंत्री ने कहा 'आप तो बड़ी जल्दी आ गए।'

विक्रमाजीत हैरान था कि मैंने तो एक युग बिता दिया और यह लोग कह रहे हैं कि जल्दी आ गया। वह स्वयं हैरान था कि आखिर बात क्या है।

राजा ने सिंहासन सम्भाल कर सारे निर्णय सुनाए और उन दोनों का निर्णय भी प्रमाणपूर्वक बताया कि लेख से कर्म बड़ा है। कर्म से लेख को मोड़ा जा सकता है।

●

हिडिम्बा

✍ लेख राम चौहान

बाड़ीधार (अर्की) में स्थित बाड़ादेव पांडवकालीन संस्कृति का प्रतीक है। बाड़ा देव के सहायक देवों में देवी बूढ़ा देई एक प्रमुख देवी है। बाड़ा देव स्थल की परिधि में दक्षिण की ओर 100 मी. की दूरी पर इन देवों का एक लघु मन्दिर 10-12 वर्ष पहले बनाया गया है। मंदिर में बूढ़ा देई की लगभग 3 फुट ऊंची पत्थर की मूर्ति स्थापित है जो पूर्णतया नग्न है। वास्तुकला की दृष्टि से सैकड़ों साल प्राचीन यह मूर्ति नारी अंगों की सुडौलता से पूर्ण एक आकर्षक रचना है। स्तन उभरे हुए, क्षीण कटि, केश बिखरे हुए, एक हाथ ऊंचा उठा हुआ, दूसरा हाथ अपने वक्ष सहेजे हुए एक ऐसा भाव उत्पन्न करता है जैसे नारी के लाज रक्षण के लिए मदद की मुद्रा में हो। एक अजब आश्चर्य कि एक खिले फूल सा चेहरा एक तरफ को इस तरह झुका हुआ है जैसे अभी-अभी कोई इसके कोमल गालों पर तमाचा जड़ गया हो। यद्यपि परम्परा से इसका नाम बूढ़ा देई है, तथापि इसके चित्रफलक से किसी चिर यौवना नारी की कथा इतिहास के पन्नों में छुपी सी लगती है।

इस पहाड़ी अंचल में जनश्रुति है कि बूढ़ा देई पांडवों की बहिन है। इसके सौन्दर्य से वशीभूत होकर समीपवर्ती क्षेत्र के बाजि देव इसे भगाकर ले गये थे। भीमसेन ने जब खोज की तो यह रामशहर (नालागढ़) में मिली, जहां भीमसेन तथा बीजू देव का घोर संग्राम हुआ। बीजू देव पराजित हुआ। भीमसेन ने क्रोध से बूढ़ा देई के मुख पर इतनी जोर का तमाचा मारा कि उसका मुंह टेढ़ा हो गया। यही कारण है कि मूर्ति का मुंह टेढ़ा है।

पांडवों के कोई सगी बहिन नहीं थी। यह देवी बाड़ीधार के लोगों की कुलजा थी। इसकी एक और बहिन कही जाती है जिसका नाम है सरादेई। सरादेई सरयांज में कुल देवी के रूप में पूजी जाती है।

बूढ़ा देई एक आदि देवी है जो पांडवों के बाड़ी आगमन से पूर्व यहां विद्यमान थी। पांडवों के बाड़ी बनवास के पूर्व इस देवी की ही मान्यता थी।

एक अन्य कथा के अनुसार बूढ़ा देई देवी हिडिम्बा है। बाड़ा देव को चूंकि हिडिम्बा का पौत्र बरबरिक माना जाता है अतः लगता है हिडिम्बा की यह नग्न मूर्ति जिसमें यह किसी बच्चे को छाती से लगाए है, यही आभास देती है जैसे बच्चे के लिए दुआ मांग रही हो। कहते हैं बरबरिक की बलि महाभारत युद्ध से पूर्व इसी स्थान पर दी गई थी। बरबरिक की महानता के साथ देवी हिडिम्बा (हिरिमा) का सम्बन्ध भी जुड़ा है। वैसे भी हिमाचल के किन्नौर, कुल्लू तथा लाहुल में तो हिडिम्बा वाणासुर की सन्तानों को आज भी लोक देवों के रूप में पूजा जाता है।

बूढ़ा देई अभिधान से अभिप्राय भी यही है कि यह देवी यौवन के दिन बिताकर पौत्रवती हो चुकी होगी। महाभारत युद्ध में उसके पुत्र घटोत्कच की बलि भी तो हो चुकी थी।

बाड़ी मेला बाड़ा देव (बरबरिक) की स्मृति में मनाया जाता है अतः वाड़ा देव के साथ हिडिम्बा की मूर्ति का महत्व स्वयं ही प्रतिपादित होता है।

एक दिन विद्वान तथा कामदेव के अवतार लघुतम भ्राता सहदेव जलाने की लकड़ी की खोज में वीरान जंगल में भटक रहे थे कि सामने एक नवयौवना को वन में अकेली देख, रोमांच से हतप्रभ हो गए। शाम का धुंधलका था। अभी चन्द्रमा की चन्द्रिका नहीं थी, लेकिन युवक सहदेव को लगा गहन अंधेरे में खिलखिलाते चांद की किरणें उसकी आंखों में खुमार पैदा कर रही है। गोरा बदन, विशाल लम्बे केश, मदमाती नारी देह। सहदेव को लगा वह सम्मोहन से, सुन्दरी के मायाजाल में डूबता जा रहा है—पूर्ण विस्मृत। उसका विवेक जागा। मुंह से निकला—''देवी, तुम कौन हो?''

'सहदेव, तुम नहीं जानते? मैं इस इलाके की कुलजा हूं।' नारी देह ने खिलखिलाते जवाब दिया—तुमने मेरे रूप सौन्दर्य को नहीं देखा। मैं हिडिम्बा हूं। तुम मेरे यौवन का रस-पान करो। मैं बहुत दिनों से तुम्हारी खोज में थी।

'मैं असमर्थ हूं देवी' सम्मोहन में डूबते हुए सहदेव ने कहा—''मैं पाण्डव हूं। मैंने अपने ज्येष्ठ भ्राताओं के साथ ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया है।' मैं शपथ लेती हूं सहदेव, एक वर्ष तक तुम्हारे व्रत को धारण करूंगी, किन्तु उसके पश्चात्...मैं असीम ताकत रखती हूं, आकाश में उड़ सकती हूं, वायु को बांध सकती हूं, विभिन्न रूप बदल सकती हूं। मैं योगिनी हूं। 'मैं असमर्थ हूं...असमर्थ हूं...' सहदेव के शब्द गले में अटक गये। 'तुम मेरी शक्ति को देखो, कुछ ही क्षणों में तुम्हें कोसों दूर ले उड़ूंगी।'

यक्षिणी सहदेव को सांझ के उस अन्धकार में सैकड़ों कोस दूर सतलुज नदी के पार ले उड़ी। अपने यक्षिणी मंत्र से उसे भेडू (भेड़ नर) बना दिया। एक वर्ष की परीक्षा भी तो थी।

जब पांडवों ने देखा कि रात को सहदेव वापस नहीं लौटा तो उनका माथा ठनका। बहुत ढूंढ़ा किन्तु सहदेव का पता न चला। कुछ दिनों बाद सतलुज के पार बाड़ू स्थान पर एक पशुशाला में आवाज़ लगाने पर एक मेमने के मिमियाने की आवाज सुनी। भीमसेन जब आवाज लगाते तब भेड़ की वही आवाज उसका प्रत्युत्तर देती। पशुशाला की स्वामिनी से जब भीम ने इसका कारण पूछा तो रक्षिण इसका संतोषजनक उत्तर न दे सकी। भीम ने अपने इष्ट देवों का सामर्थ्य ले रक्षिण पर आक्रमण कर दिया। गदा के प्रहार से खत्म करने ही वाले थे कि रक्षिण ने अपनी गलती स्वीकार कर ली। सहदेव को भेड़ से पूर्व की स्थिति में ला दिया तथा धर्मराज युधिष्ठिर के पैरों पर पड़ गई। वह अपने प्राणों की भीख मांगने लगी। युधिष्ठिर ने इस शर्त पर कि वह (रक्षिण) पांडवों का साथ देगी और उन्हें बुरी दृष्टि से नहीं देखेगी उसे क्षमा कर दिया। पाण्डवों ने उसे बहन के रूप में स्वीकार किया। यही कारण है कि आदिकाल से बूढ़ा देई की मूर्ति देवस्थल के कोने में पश्चात्ताप करती हुई, नारी लज्जा को छुपाने के लिए हाथ उठाए मदद मांग रही है।

इस देवी की पूजा बाड़ी उत्सव के दिन बाड़ा देव के पश्चात् अवश्य की जाती है। इसके नाम पर बकरे की बलि दी जाती थी। सम्भवतः पराक्रमी पांडवों का सौहार्द तथा विनय भाव था कि बूढ़ा देई की आसुरी शक्ति को मान्यता प्रदान कर इसे अपने साथ स्थान दिया।

पांचों पांडव पांच विभिन्न गांवों में रहते थे क्योंकि वे छद्मवेश तथा ब्रह्मचर्य में रहकर एकान्तवास कर रहे थे। इनके निवास के गांव बाड़ीधार के समीपवर्ती ग्राम थे—व्यूला (सरयांज) में भीमसेन, कोयला स्नोग गांव में युधिष्ठिर, अन्दरौली (वनाधु घाट) में अर्जुन, देवथल, (कुंहर परगना) में सहदेव तथा मेल गांव में नकुल। ये पांचों राजकुमार विभिन्न स्थानों से रोज शाम बाड़ीधार पर एकत्रित होते थे। विराट नगर (सिरमौर) से होते हुए ये हिमालय के इस रमणीक क्षेत्र में आये थे।

●

बन्दर और ब्राह्मण

✍ अमर देव अंगिरस

एक था ब्राह्मण। वह कहीं दूर यात्रा पर जा रहा था। चलते-चलते वह आगे गया। उसे भूख लग रही थी। घने वन में उसे कोई आदमी नज़र नहीं आया। वह खाता भी क्या। कोई झोंपडी भी नज़र नहीं आ रही थी।

कुछ दूर उसे एक बन्दर मिला। बन्दर के पास चने थे। उसने बन्दर से कहा—"बन्दर महाराज, मैं अकेला हूं। तुम मेरे साथ चलो और मेरे मित्र बन जाओ।" बन्दर मान गया। बन्दर ने ब्राह्मण को चने खिलाये। वे आगे चले।

कुछ दूर चलने पर एक झोंपड़ी थी। उसमें एक बुढ़िया रहती थी। बन्दर ने कहा—"बुढ़ी अम्मां, हमें भूख लगी है। हमें कुछ खाने को दो।" बुढ़िया के पास एक दही का मटका था, उसने वही दे दिया। अब वे आगे चले।

आगे एक मांगता ढोल लेकर जा रहा था। बन्दर ने कहा—"मांगता भाई, हम शादी में जा रहे हैं, ढोल हमें दे दो।" मांगते ने ढोल दे दिया। कुछ दूर एक औरत सिर पर 'बगड़' (विशेष घास) लेकर जा रही थी। बन्दर ने कहा—"बोबो रानी जी, बगड़ हमें दे दो।" औरत ने बगड़ दे दिया।

कुछ दूर जाने पर एक किसान हल लेकर खेतों की तरफ जा रहा था। बन्दर ने कहा—"मालिक यह हल ब्राह्मण को दे दो, यह गरीब है।" किसान ने हल दे दिया। ब्राह्मण ने उसे उठाया और वे आगे चले।

आगे घना जंगल था। उसे "बीजू बण" कहते थे। वहां एक पुराने टूटे-फूटे मकान में एक राक्षस और एक राक्षसी रहते थे। पर अभी वहां राक्षस नहीं था। राक्षसी दयालु थी। उसने बन्दर और ब्राह्मण को देखकर कहा कि यहां से तुरन्त भाग जाओ, नहीं तो राक्षस तुम्हें खा लेगा। अभी वे बातें कर ही रहे थे कि राक्षस के कदमों की चाप सुनाई दी। राक्षसी ने उन्हें छत पर छुप जाने को कहा।

राक्षस को भूख लगी थी। उसने अभी मांस खाना शुरू ही किया था कि ऊपर से उस पर बन्दर ने दही का मटका उंडेल दिया। राक्षस को बड़ा गुस्सा आया। उसने

क्रोध से राक्षसी को डांटा—"ऊपर कौन है?" राक्षसी ने समझाया कि मैंने लीपने की मिट्टी का कटोरा ऊपर रखा था वही गिर गया होगा। राक्षस जल-भुनकर बैठ गया।

छिपे हुए ब्राह्मण का दिल जोर-जोर से धड़क रहा था। वह सांस रोके मृत्यु की घड़ियां गिन रहा था। लेकिन बन्दर शरारती था। बन्दर राक्षस से नहीं डरता था। उसने राक्षस के सिर पर मूत्र कर दिया। राक्षस उठकर बड़बड़ाने लगा—"सिंह की गुफा में कौन है?" बन्दर ने जवाब दिया—"तुझ से बड़ा सिंह।" राक्षस बड़ा हैरान हुआ। भड़का—"तुम मुझसे बड़े कैसे हो?" बन्दर ने छत से बगड़ की पुलिया लटकाकर कहा—"देख मेरे कितने बड़े-बड़े बाल हैं?"

राक्षस कुछ सहम गया बोला—"क्या तुम जानते हो मेरे दांत कितने बड़े और पैने हैं?" बंदर हंसा—"अरे, ये देखो मेरा दांत।" बन्दर ने हल उठाकर फाला नीचे की ओर कर दिया। अब तो राक्षस डरा। फिर बोला—"तुमने मेरा पेट नहीं देखा है। मैं दस-बीस आदमियों को खा सकता हूं।" बन्दर बोला—"तुम अपना पेट बजाओ। देखता हूं कितना बड़ा है।" राक्षस ने पेट बजाया। 'धम्म-धम्म' की आवाज हुयी।

बन्दर ने ढोल पीटना शुरू किया। इतनी आवाज राक्षस ने कभी नहीं सुनी थी। वह डरकर बाहर को भागा। बन्दर ढोल बजाता पीछे दौड़ा। राक्षस दौड़ता ही गया और घने जंगल में भाग गया। बन्दर और ब्राह्मण वहीं रहने लगे।

●

तोता

✍ अमर देव अंगिरस

एक था ब्राह्मण और एक थी ब्राह्मणी। उनके एक लड़का और एक लड़की थे। उनमें बड़ा प्रेम था। एक दिन ब्राह्मणी ने कहा—"मेरे मरने के बाद दूसरा ब्याह तो नहीं करोगे?" ब्राह्मण ने वचन दिया कि "वह दूसरा ब्याह नहीं करेगा।" अभी लड़की 7-8 बरस की ही थी कि ब्राह्मणी मर गई। बामण अपना वचन भूल गया। वह दूसरी औरत ब्याह लाया।

फूल-सी सुन्दर लड़की को वह तंग करने लगी। घर का सारा काम उससे ही करवाती। लड़के को सदा पीटती ही रहती। लड़की घर में चौका-चूल्हा, झाड़ू-बुहारू और पानी आदि भरकर वह पशु चराने चली जाती। जंगल में वह रोती ही रहती। छोटा भाई मार खाकर रोता-रोता सो जाता। ब्राह्मण बेचारा बाहर काम पर चला जाता।

अब सौतेली माता के भी एक लड़की पैदा हुई। वह पहली लड़की की तरह सुन्दर न थी। इससे वह जलती-भुनती रहती। एक दिन चिढ़कर उसने लड़के को पीट-पीटकर मार डाला और घर के पिछवाड़े में उसे दबा दिया। जब ब्राह्मण और लड़की शाम को घर पहुंचे तो उसने कह दिया कि लड़के को उसके ननिहाल वाले ले गये।

किन्तु एक दिन जब लड़की आंगन की सफाई कर रही थी तो उसे एक कटी उंगली मिली। वह समझ गई कि यह उसके भाई की ही उंगली है। वह सारा दिन रोती रही। उसने उस उंगली को एक मिट्टी के मटके में रख दिया और ढांप दिया।

कुछ दिन बाद उसे खोला तो उसमें से एक तोता निकला। वह उड़कर पेड़ पर गाने लगा—"मासी ने बड़ाया था, कसाई ने बाड़ा था। वही पैण अच्छी जिसने कोरियो डिवडिये पाया था।" यह कहकर तोता उड़कर एक सुनार के घर पर बैठ गया।

वहां उसने यही गीत गाया। सुनार ने जब यह गीत सुना तो उसे बड़ी दया आई। उसने कहा—"महाराज मियां मिट्टू जी, तुम अपनी बहन को जितने गहने चाहो ले जाओ पर उसका ब्याह कर दो। सुनार ने सभी सुहाग के आभूषण तोते को

दिये। तोते ने वे सब उठाकर घर की मुंडेर में छुपा दिये। तोता उड़कर एक दर्जी की दुकान पर पहुंचा उसने गाना शुरू किया—

"मासी ने बड़ाया था, कसाई ने बाड़ा था वही पैण अच्छी जिसने कोरिये डिवडिये पाया था।" दर्जी ने गीत सुनकर सब कथा जान ली। उसने तोते को बहुत सारे कपड़े, बरियां, दुपट्टा आदि दिये। तोते ने वे सब उठाकर घर की मुंडेर में छुपा दिये।

तोता फिर उड़कर लुहार के घर पर बैठ गया। उसने फिर वही गीत गाना शुरू किया। लुहार को गाना सुनकर बड़ी दया आई। उसने तोते से पूछा—"मैं तुम्हारी क्या सेवा करूं?" तोते ने उत्तर दिया—"तुम मुझे अपना हथौड़ा दे दो।"

तोता हथौड़ा लेकर घर की मुंडेर पर बैठ गया। उसने फिर गीत गाना शुरू कर दिया। उसका गाना सुनकर उसकी बहिन फूट-फूटकर रोने लगी और कहने लगी कि तू मेरी गोद में आ जा। तोते ने बहिन को कहा कि तुम चादर बिछालो, मैं तुम्हें कुछ देना चाहता हूं। बहिन ने वैसा ही किया। तोते ने कपड़े तथा गहने उसमें डाल दिये। तोता स्वयं भी उसकी गोद में बैठ गया।

सौतेली मां भी यह सुन रही थी। वह लड़की को रोते देखकर उसे पीटना चाहती थी किन्तु इतने में तोते ने उड़कर ऊपर से हथौड़ा उसके सिर पर मारकर उसे खत्म कर दिया।

इस घटना का पता सारे गांव और राजा को लग गया। जब राजा ने इतनी सुन्दर लड़की को और उसके गहने-कपड़ों को देखा तो राजकुमार के साथ उसका विवाह कर दिया।

●

कान्हबाला राजा

✍ अमर पालशर

किसी समय किसी रियासत में कान्हबाला राजा राज किया करता था। उसकी रानी झगड़ालू स्वभाव की थी। एक दिन उनकी परस्पर छिड़ गई। यहां तक कि वाक्‌युद्ध छिड़ गया और मैं-मैं तू-तू होनी आरम्भ हुई। बीच में मुक्काबाजी भी चल पड़ी। राजा ने अन्त में कहा कि मैं अब तेरी ही बहन से शादी करूंगा और तेरा बहिष्कार होगा।

इस पर रानी ने ताना मार कर कहा, "यदि तुम मेरी बहन से विवाह करोगे तो आपके पुत्र होंगे अन्यथा किसी नीच का पुत्र माना जाएगा।" यह कह कर रानी अपने मायके चली गई और उसने जिद्द पकड़ी कि मैं किसी भी हालत में अपनी बहन से शादी नहीं करने दूंगी। उसकी बहन का नाम गुजरी था।

गुजरी अपने पिता की दूसरी सन्तान थी और अभी कुंआरी थी। वह बहुत ही खूबसूरत भी थी। उसका महल कान्हबाला राजा की रियासत से काफी दूर था। बीच में एक बहुत बड़ी झील थी। जिसे खाल के जरिए पार किया जाता था। बेड़ियां भी चला करती थीं इस झील के बीच।

राजा कान्हबाला अब अपनी माता के साथ महल में नितान्त अकेला रहने लगा। उसने गुजरी राजकुमारी से विवाह करने की एक योजना बनाई। उसने अपना भेप बदलने का विचार किया। उसकी इच्छा थी कि मैं गुजरी के महल में किसी सुन्दर स्त्री के रूप में प्रवेश करूं।

समय व्यतीत हुआ और कान्हबाला राजा ने लम्बे-लम्बे बाल रखने आरम्भ किए। वह अपनी माता से संन्यास धारण करने की बात कह कर महल से बाहर निकल गया। कान्हबाला राजा एक योग्य गीतकार भी था।

कुछ समय बाद कान्हबाला राजा अब एक सुन्दर स्त्री के रूप में बदल गया। अब उसे गहनों की आवश्यकता थी। इसलिए वह सुनार के पास चला गया। वह गीत गाते हुए सुनार से कहने लगा—

सुनीयारह भाइया तेरी खोली आई दे,
कोना वे वाली, हौथा वे मुदड़ी दे।

"अरे सुनार तेरे घर की ड्योढ़ी पर मैं आ गई हूं। कृपया मुझे कुछ गहने दे जैसे कान का झुमका और उंगली के लिए अंगूठी।"

सुनार ने देखा कि यह स्त्री तो बहुत ही खूबसूरत है। इसलिए वह उसके प्रति आकर्षित हो उठा। तभी उसने भी गीत के माध्यम से ही उत्तर देना आरम्भ किया।

गहणें देनू तौवे लादिया झुरिए,
औज की रात तू प्रीताड़ी दे।

"मैं तुम्हें गहनों से लाद डालूंगा। केवल मुझे आज की रात प्रीत दे।"

वास्तव में राजा घर से निकल गया था, इसलिए उसके पास कुछ भी नहीं था। तभी उसे हर चीज मांग कर पूरी करनी पड़ी।

फिर बदले में राजा गीत गाकर ही कहता है—

आगे दे तू गहणें मुंवे,
पीछे न होली गल।

सुनार मान गया कि स्त्री केवल गहनों की भूखी है और गहनों के लिए वह सर्वस्व लुटा सकती है। उसने लालच में आकर अनेक गहनों से राजा को विभूषित किया। फिर बोला—

गहणे केरी मैं झणकदी झुरीए।
एवे मेरे आगे वे चल।

कान्हबाला राजा ने देखा कि गहने लग चुके हैं और अब भागने का सुनहरी मौका है। अतः वह तेजी से बलपूर्वक वहां से भाग गया। बेचारा सुनार अपना सर्वस्व लुटाकर अवाक् रह गया।

राजा कान्हबाला अब पूरी तैयारी में था। क्योंकि अब सुन्दर स्त्री के रूप में कान्हबाला राजा को पहचानना कठिन था। किन्तु फिर भी उसने गुजरी के महल में जाने से पूर्व अपनी एक और परीक्षा लेनी चाही। उसने विचार किया कि क्यों न मैं इसी वेशभूषा में अपने महल के आंगन में जाकर राजमाता से मिलूं। उसने वैसा ही किया। क्योंकि यदि उसकी माता उसे पहचानने में भूल कर जाए तो फिर दुनिया को ठगना आसान काम है। इसलिए वह महल में चला गया। तभी सिपाही के द्वारा सूचित किया गया कि कोई सुन्दर स्त्री माता से मिलने आई है। राजमाता बाहर चली आई। तभी राजा कान्हबाला ने गीत गाया—

बाहर एजे मेरी माईड़िए
धिऊड़ी मिलदी आई।

राजमाता ने सोचा कि यह तो सरासर फरेब है। क्योंकि मेरी तो कान्हबाला

के अतिरिक्त और कोई भी सन्तान नहीं है। इसलिए उसे भी गीत की ही लय में उत्तर देना पड़ा। बोली–

आसरी नेई कोई धीऊ बेटी,
राजा कान्ह गोई संन्यास बे जाई।

राजा कान्हबाला अब प्रसन्न था। अब वह समझा कि मैं अब पूर्ण रूप से सफल हूं। वह उसी ओर चला गया जहां उसकी ससुराल थी तथा गुजरी महल में बैठी हुई थी। वह चलता रहा और आगे उसे वह झील मिली जहां उसे बिना भाड़ा दिए ही पार पहुंचना था।

वह बेड़ी वालों से कहने लगा–

बेड़ी आले मेरे साहबों भाइयों,
नोईं न देआ मुंवे पारे तारी।

वे भी उसकी सुन्दरता पर मुग्ध हुए और कहने लगे कि–

काल दोती पारे लाई लेणी झुरिए,
औज राती झौंपड़ी न रोह म्हारी।

"कल सुबह ही तुम्हें पार पहुंचा देंगे, किन्तु आज हमारी झोंपड़ी में ही रात काट लो।" उन्हें लालच देकर राजा फिर बोला–

एभे तारी दे पारावे तुसे,
पारे जाइया शुणनूं भारी।

"अभी तो आप मुझे पार करवा दो। किनारे पर जाकर मैं तुम्हारी बात को मानने को तैयार हूं।"

नाविकों ने वैसा ही किया। उन्होंने उस सुन्दर स्त्री को बेड़ी पर बिठा दिया और पार लगा दिया।

जब बेड़ी पार लगी तो राजा कान्हबाला बेड़ी से उतरते ही हवा हो गया। बेड़ी वाले नाविक सभी परस्पर मुंह ताकते रह गए।

राजा घूमते-फिरते गुजरी के महल के बाहर आ खड़ा हुआ। महल के कर्मचारी गुजरी राजकुमारी के प्रति बड़ी निगरानी रखा करते थे। द्वारपाल हमेशा भाले-बर्छे तथा बन्दूक ताने बैठे रहते थे। वहां राजा के दूत के अतिरिक्त और कोई नहीं जा सकता था।

राजा कान्हबाला बड़ी चतुराई से काम ले रहा था। वह द्वारपाल के समीप स्त्री के भेष में जा खड़ा हुआ। उसने गुजरी से मिलने की बात कही, "मुझे गुजरी से मिलना है।"

द्वारपाल अन्दर चला गया और राजकुमारी को सूचित किया। अन्दर से उत्तर आया कि इस समय कोई भी नहीं मिल सकता।

तभी उस सुन्दर स्त्री ने कहा कि–"मैं किसी दूसरे देश की महारानी हूं। इसलिए गुजरी से मिलने आई हूं।" द्वारपाल फिर से अन्दर गया और उसने राजकुमारी से कहा राजकुमारी इस बार मान गई और वह महारानी को लेने स्वयं बाहर आ गई।

महारानी गुजरी को देखते ही आगे बढ़ी और उससे गले मिल गई।

महल के अन्दर कई दरवाजे थे। ज्यों-ज्यों वे दोनों अन्दर चलती गई तो स्त्री वेषधारी राजा दरवाजे बन्द करता गया। इस पर गुजरी को सन्देह हुआ और उसने पूछा, "दरवाजे क्यों बन्द कर रही हो?"

महारानी ने उसकी ओर इशारा करते हुए कहा, "मैं तुम्हें एक रहस्यपूर्ण बात बताना चाहती हूं और हम दोनों के अतिरिक्त किसी दूसरे को इस राज का पता नहीं चलना चाहिए। क्योंकि दीवार के भी कान होते हैं।

गुजरी मान गई। जब अन्त में तीन कमरे पार करने को शेष रहे तो तभी कान्हबाला ने नारी का वेश उतारना आरम्भ किया। ठीक जब गुंजरी अपने सिंहासन पर पहुंची तो सामने देखा कि उसी का जीजा वहां खड़ा था जो कान्हबाला राजा था। क्योंकि अब कान्हबाला राजा ने अपना पूर्व रूप धारण कर लिया था।

गुजरी अब चौंक पड़ी मगर लाचार वह क्या करती। तभी कान्हबाला राजा ने गुजरी को अपने आलिंगन में भर लिया। अब गुजरी ने सर्वस्व कान्हबाला राजा को समर्पित किया। करीब चार दिनों तक वे बाहर नहीं निकले और न ही बाहर से कोई अन्दर जा सका। तभी बाहर द्वारपाल को सन्देश मिला कि राजा कान्हबाला स्त्री रूप धारण करके इस महल में प्रवेश कर चुका है।

यह जानकर सैनिक हथियार लेकर गुजरी के महल के पास पहुंच गए। अन्दर आकर देखा तो गुजरी कान्हबाला राजा की बांहों में झूल रही थी। उसने सिपाहियों से कहा कि उसने कान्हबाला राजा से विवाह कर लिया है।

उसके बाद महल में ढोल-नगाड़े बज उठे। सारी प्रजा एकत्रित हुई और शादी की धूम मच उठी। अब कान्हबाला ने यह तय किया कि बारात मेरी रियासत में मेरे महल में जाएगी। साथ ही कान्हबाला ने गुजरी की बड़ी बहन जो उसकी पहली रानी थी, उसको भी सूचित किया कि वह भी विदाई के समय दर्शन दे।

सूचना पाते ही वह भी गुजरी और कान्हबाला राजा अर्थात् अपने पति के निकट खड़ी हुई। वह गुजरी के प्रति जल उठी। वह कान्हबाला से लिपटना चाहती थी, किन्तु राजा दो कदम पीछे हटकर अपनी भूतपूर्व महारानी से बोला, "हां-हां, दूर रहिए, मैं वह कान्हबाला राजा नहीं हूं। मैं तो नीच हूं।" बाजा बज रहा था। राजा गुजरी को पालकी में बिठाकर अपनी रियासत की ओर चल पड़ा। महारानी वहीं धरती पर पैर जमाकर खड़ी रही जैसे वह पत्थर की मूर्ति बनती जा रही हो। ●

भैरों का कमाल

✍ अमर पालशर

एक बार मण्डी के राजा ने कुश्ती प्रतियोगिता का आयोजन किया। यह बात 1880-90 के बीच की है। कुश्ती में स्थानीय और बाहर के पहलवानों का मुकाबला था।

मण्डी क्षेत्र के बहुत सारे पहलवान एकत्रित हुए और कुश्ती आरम्भ हुई। राजा का प्रण था कि जब तक उनका पहलवान विजयी नहीं होता तब तक वह भोजन नहीं करेंगे।

चार दिन व्यतीत हुए। इस बीच जितने भी पहलवान मुकाबले में आए तो सभी विजेता बाहर के ही रहे। राजा को दुख तो हुआ ही पर मण्डी क्षेत्र की सारी प्रजा पर भी इसकी गहरी ठेस पहुंची।

अन्त में थक हार कर सभी पहलवानों ने मिलकर योजना बनाई कि अब किसी भी तरह बाहर के पहलवानों को हराया जाए। फिर किसी ने बताया कि पण्डोह के इलाके में किसी व्यक्ति के पास भैरो है और भैरो में बड़ी शक्ति होती है। क्यों न उसी का उपयोग किया जाए।

वैसा ही हुआ। भैरो वाले उस व्यक्ति को बुलाया गया। जब वह अखाड़े की तैयारी करने लगा तो सब लोग आश्चर्य में पड़ गए। देखा कि उस भैरो वाले पहलवान की शक्ल तो बिल्कुल गई गुजरी है। कमजोर इतना था कि जैसे चरस की सूखी हुई डाली हो।

बाहरी पहलवान उसके स्वास्थ्य को देखते हुए हंसी ठहाके के साथ हथेली मारने लगे। कोई कहने लगा, ''यह तो एक उंगली का पहलवान है।'' कोई कहता, ''इसे क्यों मौत दिखा रहे है।'' कोई कहे, ''यही इसका अन्तिम दिन है।''

यह सुनते ही भैरो पहलवान आवेश में आया और कपड़े उतार कर अखाड़े के समीप चला आया। अखाड़े में आने से पूर्व वह राजा के पास गया और कहा, ''राजा साहिब, यदि मेरे हाथ से यह विजयी पहलवान मर जाए तो मैं जिम्मेवार नहीं हूंगा।''

राजा कुछ निर्णय करता, इससे पहले दूसरा पहलवान हंसते हुए मस्ती से बोला, "कोई बात नहीं, चाहे मैं मरूं या यह सूखी हड्डी वाला पहलवान। कोई परवाह नहीं।"

भैरो वाले पहलवान को उसके अनजान स्वभाव पर दया आई और वह उसके ही हित में सोचते हुए बोला, "अखाड़े में लड़ने से पहले मैं महल का मुख्य पोल (स्तम्भ) पकड़कर सारे महल को हिला दूंगा। फिर भी यदि मुकाबला करना चाहें तो कोई बात नहीं। क्योंकि मैं नहीं चाहता कि किसी को मौत के घाट उतार दिया जाए। कुश्ती में किसी को जान से मारना मेरा धर्म नहीं है। मैं तो एक ही झटके से इस बाहरी पहलवान को आसमान दिखा दूंगा।"

यह सुनकर सभी पहलवान जोर-जोर से हंसे और उपहास करने लगे। भैरो पहलवान उस मुख्य स्तम्भ की ओर गया जिसकी नोक बहुत गहरी थी। महल का कुछ भाग उसी स्तम्भ पर निर्भर था।

ज्यों ही भैरो पहलवान ने खम्बा हिलाया तो महल की सारी दीवारें हिल उठीं। यह देखते ही बाहरी पहलवान मूक हो गए। उनके होंठ जैसे सिल गए हों। वे एक-एक कर सभी की नज़र से बचते हुए अखाड़े से लापता होते गए। अन्त में भैरो पहलवान ने बताया कि मैं चाहता तो इस विजयी पहलवान की बांह एक ही झटके के साथ अलग कर डालता और चाहता तो उसे आसमान में पटक फेंकता।

●

गद्दी और राक्षस

✍ पूर्णसिंह ठाकुर

लौही बहुत घना जंगल था। वहां चौड़ी पत्तियां अधिक मात्रा में उपलब्ध होती थीं। एक गद्दी ने अपनी भेड़-बकरियों को वहां ले जाने की योजना बनाई। एक दिन वह अपना माल लेकर वहां पहुंच गया। उसने अपनी भेड़-बकरियों को एक स्थान पर एकत्रित किया क्योंकि रात्रि का समय हो रहा था। उसने आग जलाई और आग के चारों ओर अपनी भेड़-बकरियों को बैठा दिया। स्वयं उन्हें चारा लाने के लिए निकल पड़ा। उसने अपनी रस्सी कमर में बांध दी और उसमें दराट डाल दिया। वह थोड़ी ही दूर निकला था कि एक राक्षस का झुण्ड नाचता हुआ दिखाई दिया।

गद्दी उनका नृत्य देखता रहा। राक्षसों ने उसे अपने दायरे में घेर लिया। गद्दी टस से मस न हुआ। वह अपने धीरज को बांधे उनकी पंक्ति में हाथ से हाथ मिला कर नाचता रहा। कुछ समय पश्चात् राक्षस उससे दुगुने लम्बे होने लगे। गद्दी कमर से दराट निकाल कर नाचने का इशारा करते हुए दराट को ऊपर घुमाता रहा। उनका कद छोटा-छोटा होने लगा। रात भर यही कार्यक्रम चलता रहा। गद्दी भी भाग कर निकल न सका और न ही राक्षस उसे खत्म करने में सफल हुए।

रात्रि का समय बीत चुका था। प्रभात की किरणों ने राक्षसों को लुप्त कर दिया। गद्दी ने साथ में पकड़े हुए राक्षस को लुप्त नहीं होने दिया। वे दोनों ही आपस में काफी देर तक लड़ते रहे मगर गद्दी ने राक्षस का हाथ न छोड़ा। राक्षस प्रभात की किरणों से लज्जित व गद्दी से हार कर क्षमा-याचना करने लगा।

गद्दी ने राक्षस को छोड़ने का फैसला किया लेकिन एक शर्त पर। गद्दी बोला—'मेरी पत्नी तथा बच्चे घर में अकेले ही रहते हैं खेतों में हल चलाने वाला कोई नहीं है इसलिये आप मेरा घर का सारा काम करते रहो तो मैं आपको छोड़ने के लिए तैयार हूं।' राक्षस ने यह शर्त स्वीकार की लेकिन एक शर्त पर राक्षस बोला—'मैं खाना नहीं खाता हूं चूल्हे की राख और अनाज के छिलके ही मेरा खान-पान है। घर के बाहर पत्थर के खोल में मुझे खाना देते रहना तथा मैं काम भी रात को ही करता रहूंगा।'

दोनों को एक दूसरे की शर्तें मंजूर थी और गद्दी ने राक्षस को छोड़ दिया। राक्षस रातोंरात काम करता रहा। उसने ज़मीन में हल चलाया, मकान के लिये पत्थर इत्यादि इकट्ठे किये। मकान के आंगन में बड़े-बड़े पत्थरों के स्लेट बिछा दिये। उन्हें देखकर लगता था कि उन स्लेटों को राक्षस ही उठा सकता है आदमी नहीं।

गद्दी की पत्नी राक्षस की प्रशंसा अपनी सहेलियों से करने लगी। सहेलियों ने कहा कि तुम उसे ऐसा बुरा खाना क्यों देती हो। बेचारा इतनी मेहनत करता है उसे किसी दिन तो अच्छा खाना दे दो। गद्दी की पत्नी के मन में बात घर कर गई। उसने एक दिन राक्षस को हलवा तैयार किया और उसमें घी डालकर पत्थर के खोले में रख दिया। जब राक्षस आया तो वह खाना देखकर हमेशा के लिए भाग गया।

●

एक था राजा

✍ पूर्णसिंह ठाकुर

एक बार एक राजा था उसने एक ब्राह्मण तथा एक नाई को पाल रखा था। नाई रोज राजा की हज़ामत बनाता था और पण्डित रोज कथा सुनाता था। पण्डित के परिवार में तीन सदस्द थे राजा उन तीनों को पालता था।

एक बार नाई ने राजा से कहा कि इस ब्राह्मण से एक सवाल पूछा जाये कि कौन सा धर्म करने से मानव देह प्राप्त होती है? राजा ने यह सवाल ब्राह्मण से किया। ब्राह्मण ने कहा कि मैं छः दिन के पश्चात् इस सवाल का जवाब दे दूंगा। राजा ने छः दिन का समय दिया।

ब्राह्मण ने बाप-दादा की सारी जन्त्री देखी परन्तु इस सवाल का उत्तर न मिल सका। ब्राह्मण चिन्ता में डूब गया। ब्राह्मण के पुत्र ने इस चिन्ता का कारण पूछा तो ब्राह्मण ने बताया कि राजा ने सवाल किया है उसका उत्तर पाना असम्भव है। पुत्र ने पिता को उत्साहित किया और कहा—मैं इस सवाल का उत्तर दे सकता हूं। आप राजा से जाकर छह मास का समय मांगो और छह मास का खर्चा मांग कर कहो कि इस सवाल का जवाब काशी से लाना पड़ेगा। ब्राह्मण ने वैसा ही किया।

ब्राह्मण का पुत्र छह मास के लिये काशी की ओर निकल पड़ा। रास्ते में उसे पीछे से आता हुआ एक व्यक्ति दिखाई दिया। ब्राह्मण का पुत्र झाड़ियों में छुप गया। जब उसने उस व्यक्ति के पास कन्धे से लटकी हुई पोटली देखी तो वह समझ गया कि शायद यह भी ब्राह्मण है। तब वह उसके साथ-साथ चल पड़ा परन्तु आपस में बातचीत न हो सकी। आगे चलकर एक गांव आया वहां पर लोग गेहूं की मंडाई कर रहे थे तो ब्राह्मण के पुत्र ने सवाल किया कि 'यह गेहूं खाये हुए हैं या खाने के हैं!' जट बोला—'कुछ खाये हुए हैं तथा कुछ खाने के हैं।' जवाब सुनकर वे दोनों आगे चल पड़े। आगे रास्ते में उन्हें एक मुर्दा मिला। ब्राह्मण के पुत्र ने सवाल किया कि—'यह मरा हुआ है या जिन्दा है।' जवाब मिला कि—'मरा भी है तथा कुछ जिन्दा भी है।' जवाब सुनकर वे दोनों आगे चल पड़े।

रात होने वाली थी वह ब्राह्मण उसे अपने घर ले गया। घर पहुंच कर ब्राह्मण ने अपनी जन्त्री उठाई तो उसकी जवान बेटी की कुण्डली हाथ लगी। उसमें लिखा था कि अगली रात तक जवान बेटी की शादी न हो सकी तो ब्राह्मण के सात कुल नरक में डूब जायेंगे। ब्राह्मण चिन्ता में पड़ गया उसने यह बात अपने परिवार से कही तो जवान बेटी ने तय किया कि दूल्हा घर पहुंच चुका है क्यों न इसके साथ ही शादी की जाये। ब्राह्मण बोला—'यह तो बेवकूफ है।' फिर यह बात खुल कर हुई।

ब्राह्मण के पुत्र ने सभी सवालों का जवाब दिया कि मेरे पास कुछ पैसा था आपको देखकर मैं डर गया तथा झाड़ियों में छुप गया। जब मैंने आपकी पोटली देखी तो आपके साथ हो गया। अपने गांव के जट ने जवाब दिया था कि कुछ गेहूं खाये हुए हैं कुछ खाने को हैं तो उसने भी सोच कर ही जवाब दिया था कि जो गेहूं लोगों से मांगे हैं वे तो लोगों को देने हैं शेष जो बचेंगे वे खाने को हैं। आगे चल कर मुर्दा ले जाते हुए लोगों ने जवाब दिया था कि कुछ जिन्दा है कुछ मरा हुआ है तो वह भी ठीक ही था कि इसका नाम तो जिन्दा है बाकी शेष मर गया है। ब्राह्मण के पुत्र ने उसे सारे सवाल समझा दिये।

ब्राह्मण की बेटी ने उससे शादी कर ली। ब्राह्मण के पुत्र ने कहा कि मैं राजा के सवाल का जवाब ढूंढने आया हूं मैं काशी जाना चाहता हूं। उसकी पत्नी ने उसे काशी का पता बता दिया। जब वह काशी पहुंचा तो उसे राजा के सवाल का जवाब न मिल सका। उन्होंने बताया कि वही ब्राह्मण की बेटी उस सवाल का जवाब दे सकती है। वह वापस पहुंचा। राजा के सवाल का जवाब अपनी पत्नी से पूछने लगा। उसने कहा कि मैं इस सवाल का जवाब राज दरबार में जाकर ही दूंगी। वे दोनों घर वापस आ गये।

उन दोनों के घर में आते ही ब्राह्मण ने गुस्से में कहा कि मैंने तुझे सवाल का जवाब लेने भेजा था पत्नी लाने नहीं। लड़की ने कहा कि मैं इस सवाल का जवाब देने आई हूं।

जब छह मास पूरे हुए तो राजदरबार में दो तम्बू लगाये गये। एक तम्बू में राजा तथा दूसरे तम्बू में ब्राह्मण की बेटी बैठ गयी। राजा ने कहा—'किस धर्म के करने से मानव देह मिलती है।' लड़की ने जवाब दिया कि—'हाथ में कमण्डल लेकर बाबा का भेष बना लो और मेरे तम्बू के गिर्द तीन चक्कर काटो।' राजा ने वैसा ही किया। लड़की ने हर बार एक मुट्ठी माश उसके कमण्डल में डाल दिये और कहा कि अब आप उत्तर दिशा की ओर सीधे निकल जाओ। आगे चल कर आपको एक भिखारी मिलगा। आप कुछ न देते हुए आगे बढ़ जाना। आगे चलकर दो स्त्रियां झूले में झूलती हुई मिलेंगी तो एक स्त्री आपके पैर छूएगी तथा दूसरी स्त्री के पैर आप

छू लेना। आगे चलकर एक गांव है। वहां अकाल पड़ा हुआ है। गांव के बीच में पीपल का पेड़ है आप उसके नीचे जाकर समाधि ले लेना। जब लोग आपके पास आयेंगे तो कह देना कि पत्नी कल मिल जायेगी। रात को आप एक मुट्ठी माश सरोवर में फेंक देना दूसरे दिन को पानी ही पानी हो जायेगा। इस खबर को सुनकर वहां का राजा आपके पास आयेगा। उसकी पत्नी बारह साल से गर्भवती है लेकिन गर्भ बाहर नहीं होता तो आप उसे एक मुट्ठी माश दे देना। जब बच्चे का जन्म होगा तो मां के देखने से पहले इसे अपने पास मंगवा लेना। उसे जंगल में ले जाना। वह बच्चा बतायेगा कि 'किस धर्म के करने से मानव देह मिलती है।'

राजा ने वैसा ही किया जब बच्चे से उसने पूछा कि—'बेटा किस धर्म के करने से मानव देह मिलती है।' तो बच्चे ने जवाब दिया कि—'मैं तेरा बेटा नहीं, मैं तेरा बाप हूं जो तूने कर्म किये हैं इससे आज मुझे बारह साल के बाद मानव देह प्राप्त हुई है। तूने अपनी गेहूं की दो रोटी साधु को खुशी से दान की थी इसलिये तू आज राजा है। जो दो स्त्रियां झूले में झूल रही हैं। उसमें से जिस स्त्री ने तेरे पैर छुये हैं वह तेरी पत्नी है जिसके तूने छूये है वह तेरी मां है : रास्ते में जो भिखारी है वह तेरा भाई है।

राजा को जवाब मिल गया। उसने बच्चे को वापस किया तथा स्वयं राज महल वापस आया तीसरी माश की मुट्ठी उसने भिखारी को दे दी।

●

राजा और चींटी

✍ विद्यासागर नेगी

किसी देश में एक राजा रहता था। उसकी एक बेटी थी जिसका नाम सूर्यकांता था। एक दूसरे देश के महामंत्री ने अपने पुत्र धवलगिरि के लिए उस राजकुमारी का हाथ मांगा। राजा ने उनसे बेटी के बदले बहुत सारा धन मांगा और लड़के के पिता ने सारा धन लाकर दे दिया। इसके बाद महामंत्री ने राजा से कहा कि लड़की को दिया जाने वाला सारा सामान सोने का होना चाहिये। यह सुनकर राजा बहुत परेशान हुआ। उसने मंत्रियों और नागरिकों की सभा बुलायी तथा सबसे सोना मांगा।

सबके सोना देने पर भी सोना कम पड़ा। वजीर ने राजा को सलाह दी कि सोना तालाब के भीतर होता है परन्तु मनुष्य वहां से निकाल नहीं सकता। यह सोना केवल चीटियां निकाल सकती है। तब राजा ने चीटियों के राजा से सोना निकालने में मदद मांगी।

एक लामा की मदद से बारिश करवायी गई। बहुत बारिश होने पर सभी चीटियां इकट्ठी हो गई। राजा ने चीटियों के राजा को अपने पास बुलाकर तालाब से सोना निकालने के लिए कहा। चीटियों के राजा ने सभी चीटियों को तालाब के किनारे इकट्ठा करके उनकी कमर को रेशमी धागे से बांध दिया और चीटियों को तालाब में उतार दिया।

चीटियां एक महीने तक सोना तालाब से निकालती रहीं। अब तक काफी सोना इकट्ठा हो गया था। जिसे देखकर राजा बहुत खुश हुआ। राजा ने आटा और मक्खन गूंथकर सभी चीटियों को एक बड़ी दावत दी।

राजा ने सुनार को बुलाकर राजकुमारी के लिए सोने के बहुत सारे गहने बनवाकर उसकी शादी कर दी।

इसके बाद सभी चीटियां अपने घरों को लौट गयी परन्तु धागे से कमर कसकर बांधने से चीटियों की कमर पतली हो गई। तब से चीटियों की कमर पतली है।

●

राजा और राक्षसी

✍ रजनी बाला

किसी गांव में एक बुढ़िया और उसकी बेटी रहती थी। वे प्रतिदिन दो रोटियां बनाती थी—एक बड़ी और एक छोटी। बड़ी रोटी बुढ़िया खाती थी और छोटी रोटी उसकी बेटी। एक दिन बुढ़िया कहीं गई थी तो बड़ी रोटी उसकी बेटी ने खा ली। लौटने पर बुढ़िया ने अपने लिए छोटी रोटी रखी देख कर बड़ी रोटी के लिए शोर मचाना शुरू कर दिया। उसके शोर को सुनकर लड़की घर से भागकर जंगल में एक तालाब पर पहुंच गई। कुछ देर आराम करने के लिए वहां बैठ गई।

जंगल में शिकार के लिए राजा आया हुआ था। उसे प्यास लगी। उसने मंत्री को पानी लाने के लिए भेजा। मंत्री पानी लेने उस तालाब पर पहुंचा जहां वह लड़की बैठी हुई थी। लड़की ने मंत्री से बर्तन लेकर उसे अच्छी तरह साफ करके पानी भर कर दे दिया। राजा पानी के बर्तन को साफ देखकर पूछता है "कि यह बर्तन किसने साफ किया है?" मंत्री सारी बात बता देता है और उसको अपने साथ ले आता है। दोनों शादी करके सुखपूर्वक रहने लगते हैं।

दूसरी ओर वह बुढ़िया 'बड़ी रोटी' का शोर मचाती हुई अपनी बेटी को ढूंढ़ती हुई उस तालाब पर पहुंच जाती है। दैवयोग से राजा उस दिन फिर शिकार खेलने के लिए गया हुआ था। उसने बुढ़िया को साथ चलने के लिए कहा। बुढ़िया राजा के साथ महल आ गई और वहां पर काम करके सुखपूर्वक रहने लगी। परन्तु एक दिन रानी के सिर में तेल लगाते समय एक सुनहरा बाल देखकर उसे अपनी बेटी की याद आ जाती है। वह रोने लगती है। रानी के पूछने पर सारी बात बता देती है। रानी बताती है कि वही उसकी लड़की है। इतना सुनते ही बुढ़िया फिर 'बड़ी रोटी' की रट लगाती है। लड़की घबराकर बुढ़िया को मार देती है और उसका शव पिटारे में बन्द कर देती है।

कुछ समय उपरांत राजा के यहां एक नाई आया। उसने राजा से उस पिटारे की ओर इशारा करते हुए उसे न खोलने का कारण पूछा। राजा ने टाल-मटोल की

परन्तु नाई के बार-बार कहने पर राजा ने रानी से पूछा कि 'इस पिटारे में क्या है?'

रानी ने तुलसी की सफाई की। वहां दीप जलाए और विनती की कि हे मां तुलसी! यदि सचमुच तू सच्ची है तो पिटारे में सोने का मोर बन जाए।' रानी राजा को बताती है कि उस पिटारे में सोने का मोर है।

पिटारा खोलने पर उसमें सोने का मोर निकलता है। कुछ दिनों बाद नाई ने राजा से रानी के बारे में पूछा कि 'महाराज आप कभी अपने ससुराल नहीं गए। आपके ससुराल कहां है? रानी से पूछिए'। राजा ने रानी से उसके मायके के बारे में पूछा। रानी ने फिर तुलसी की पूजन करके प्रार्थना की कि कुछ दिनों के लिए उसके मायके बन जाएं और रानी राजा को किसी स्थान का नाम देती है। राजा और नाई बताए हुए स्थान पर जाते हैं। वहां रानी के मायके में उनका बहुत आदर किया जाता है। कुछ दिनों के बाद वे वापस लौट आते हैं। परन्तु नाई अपनी धोती वहां छोड़ आता है। धोती लेने के लिए नाई वापस जाता है परन्तु वहां उसने कौओं, गिद्धों को मांस खाते हुए पाया। लौटकर उसने राजा को सारी बात बताते हुए कहा कि 'महाराज! आपकी रानी तो कोई डायन है। आप उससे जरूर पूछिए कि वह कौन है?'

राजा ने रानी से पूछा। रानी पहले तो टालती रही लेकिन राजा के बार-बार पूछने पर बोली 'आप मुझसे मत पूछिए, आप पछताएंगे।' परन्तु राजा न माना। रानी ने पहले की भांति तुलसी का पूजन किया और वहां बैठकर शुरू से अन्त तक सारा वृत्तांत सुनाने के पश्चात् वह लोप हो गई।

●

सेठ सेठानी

✍ रजनी बाला

किसी गांव में एक सेठ-सेठानी रहते थे। उनकी कोई सन्तान न थी। उन दोनों ने बच्चा प्राप्त करने के लिए व्रत-दान, साधु-सन्तों की सेवा भी की परन्तु सब व्यर्थ। सेठ दूसरी शादी करने की बात सेठानी से कहता है। सेठानी पंडित को सिखा देती है कि जब सेठ अपना टेवा दिखाने के लिए उसको बुलाए तो वह कह दे कि उनके घर बच्चा अवश्य होगा। सेठ के बुलाने पर पंडित सेठानी की बात को दोहरा देता है। सेठ दूसरी शादी करने का विचार छोड़ देता है।

पर्याप्त समय बाद सेठ को सूचना दी जाती है कि उनके घर लड़की हुई है परन्तु सेठ उसको उम्र भर देखेंगे नहीं। सेठानी ने एक बिल्ली पाली हुई होती है वह उस बिल्ली को अन्दर ही रखती है, बाहर नहीं निकालती। सेठ एक दिन लड़की के लिए पायल लाता है। सेठानी बिल्ली के पैरों में बांध देती है। सेठ पायल की आवाज सुनकर प्रसन्न होता है कि अन्दर उसकी बेटी घूम रही है।

काफी समय बाद सेठ ने लड़की की शादी करने की सोची। उसके लिए लड़का भी ढूंढ़ लिया। सेठानी ने लड़के वालों के आगे यह शर्त रखी कि वे लड़की को आयु पर्यन्त देखेंगे नहीं। वे मान गये। धूमधाम से शादी कर दी गई। सेठानी ने बिल्ली को पिटारे में बन्द करके उसके ससुराल भेज दिया। कार्तिक मास की एकादशी को उस लड़की की सास ने पंचभीष्म का व्रत रखा जो पांच दिन चलता है। वह सोचने लगी कि मुझे तो स्नान करने जाना है, पीछे से इन दीपों को वैसे ही जलता हुआ छोड़कर चली जाती है। उसके जाने के बाद बिल्ली पिटारे से निकली उसने तुलसी के आगे से सफाई की और दीपकों में तेल डालकर फिर पिटारी में चली गई। पांच दिन लगातार वह ऐसे ही करती रही। जैसे-जैसे उसके शरीर को तेल लगता गया उसके अंग सुन्दर लड़की के बनते गए और पांचवें दिन वह एक सुन्दर लड़की बन गई। लड़की की सास ने उससे सारी बात पूछी तो लड़की ने तुलसी की महिमा का गुणगान करते हुए सारा वृत्तांत अपनी सास से कह सुनाया।

●

रूड़ी देवी

✍ ब्रह्मदत्त शर्मा

पुराने समय की बात है कि व्यास नदी और काली धर के मध्य में स्थित एक सुंदर स्थान पर झोंपड़ी बनाकर एक तपोलीन गोत्रिथ ब्राह्मण रहा करता था। वह भूख मिटाने के लिए घर-घर जाकर मांगता नहीं था, अपितु फसल की कटाई पर खेत में जाने से जो कुछ मिल जाता था, उसी से भूख मिटा लिया करता था। निर्धन होने पर भी उसका तप प्रचण्ड था और साधना गहरी। परिवार में थी केवल मात्र एक अबोध बालिका। सीमित परिवार, संतोषी जीवन और तप ही उसका साध्य था।

फसल पक गई किसान कटाई करने लगे। तपस्वी ब्राह्मण भी खेतों की यात्रा के लिए निकल पड़े। किसान तपस्वी के आगमन को शुभ मानते थे। उसके आगमन को अपना सौभाग्य मानकर गेहूं की बालियां आदरपूर्वक भेंट करते थे। जिन खेतों में तपस्वी नहीं पहुंच पाता था, उन खेतों के किसान उसके पधारने के लिए आदरपूर्वक अनुरोध करते थे। तपस्वी अपने पर्दापण से किसानों को कृतकृत्य और स्वयं को अन्नसंग्रह द्वारा निर्वाह की चिन्ता से मुक्त करता रहता था। तपस्वी भी सिद्धांत का पक्का था। गेहूं की बालियों की एक मुट्ठी भर ही स्वीकार करता था। इससे अधिक भी अगर कोई किसान श्रद्धावश देना चाहे, तो भी वह नहीं लेता था।

गेहूं की पर्याप्त बालियां जब इकट्ठी हो गई, तब ब्राह्मण ने खलिहान तैयार करके, उसमें गहराई के लिए गेहूं डाल दी। यथोचित गहराई हो जाने पर उसकी पुनाई (भूसी से अन्न को अलग करना) आरम्भ की।

योगमाया की कृपा कहो या तपोबल का प्रभाव अथवा कठिन परीक्षाकाल। संयोग से हुआ यह कि पुनाई के सामय गाहण का विस्तार होता गया, अनाज का ढेर बढ़ता गया और उड़-उड़कर भूसी पास के लम्बे चौड़े क्षेत्र में तह-दर बिछती गई। अब सामने था आसमान को छूने वाला अनाज का ढेर और दूर-दूर तक परत-दर-परत बिछी भूसी। तपस्वी संतुष्ट था। जीवन भर के लिए निर्वाह की चिन्ता से मुक्ति जो मिल गई थी। अनाज का ढेर वहीं पड़ा रहा। भला उस छोटी सी झोंपड़ी में समाता भी कहां?

प्रातःकाल दैनिक कृत्य से निवृत्त होने पर अभ्यास के अनुसार जब खेतों में जाने का समय आया, तब ब्राह्मण को कुछ बेचैनी सी अनुभव हुई। ढेर को देख मिला सन्तोष गायब हो गया। उसने अपनी अबोध बालिका को उठाकर अनाज के ढेर की चोटी पर बिठा दिया और सोचा कि वह यहां बैठी अनाज की रक्षा करती रहेगी और स्वयं पुनः गेहूं उगाहने खेतों की ओर चल दिया। जाने से पहले लड़की को भली-भांति समझाता भी गया कि बेटी, अगर तुझे कोई पूछे कि तेरे पिता जी कहां गए हैं, तो यह कभी न बताना कि वे तो गेहूं लाने खेतों में गए हैं। मन में चोर जो बस गया था। उस समय प्रचण्ड तपस्वी को लोभवश झूठ बोलने पर ग्लानि की अनुभूति भी न हुई।

संयोग यह हुआ कि उसी दिन तपस्वी के जाने के थोड़ी ही देर बाद गुरु गोरखनाथ जालन्धर पीठ की बाहिरी परिक्रमा पूरी करके भीतरी परिक्रमा के लिए चामुण्डा से ज्वालामुखी को जाते हुए उस ब्राह्मण की झोंपड़ी के पास पहुंचे। रास्ता जो यही था। पहले भी वे उसी रास्ते से आया करते थे और ब्राह्मण के पास बैठकर कुशल-क्षेम पूछते-पूछते सुस्ता लिया करते थे।

उस दिन भी गगनचुम्बी अनाज के ढेर और पास ही उड़-उड़कर बिछी भूसी को देखकर सभी कुछ समझ गए। अन्तर्यामी जो थे। ढेर पर बैठी लड़की से पूछ ही लिया "बेटी, तेरे पिता जी कहां हैं?" सत्यप्रिया लड़की पिता द्वारा मना करने पर भी झूठ न बोल पाई। उसने सच ही कह दिया "महाराज, वे गेहूं उगाहने खेतों में गए हैं।" यह सुनकर गुरु गोरखनाथ जी को तपस्वी ब्राह्मण की लोभातिशय को जानकर दुःख हुआ। उस दुःख ने प्रचण्ड क्रोध का रूप धारण कर लिया। फिर क्या था। क्रुद्ध गुरु ने लोभी ब्राह्मण को शाप दे डाला–

'हे तपस्विन्, संतोष ही ब्राह्मण का धन है। अपरिमित अन्न होने पर भी तू सन्तुष्ट नहीं हुआ, तो जा, तेरा यह सारा अन्न का ढेर मिट्टी का ढेर होगा।'

बस, गुरु जी महाराज के मुंह से इतनी बात निकलते ही वह गगनचुम्बी अन्न का ढेर मिट्टी का ढेर हो गया।

शाप का परिणाम देखते-देखते गुरु जी अपने यात्रा-पथ पर चलते बने और पीछे से गेहूं का बोझ उठाए लोभी ब्राह्मण भी आ पहुंचा। अन्न के ढेर को मिट्टी हुआ देखकर खून उसकी आंखों में उतर आया। तड़प कर लड़की से पूछा, 'सच बता, यह क्या हुआ?' लड़की बोली पिता जी, इस रास्ते से गुरु गोरखनाथ जी जा रहे थे कि मुझे ढेर पर बैठा देखकर पूछने लगे–'बेटी! तेरे पिता जी कहां हैं?' पर मैं...मैं आपके कहे अनुसार झूठ न बोल सकी सच ही कह दिया "महाराज! वे तो गेहूं उगाहने किसानों के खेतों में गए हैं" सुनकर गुरु जी ने अनाज के ढेर को मिट्टी

का ढेर होने और आपको सदा असन्तुष्ट रहने का शाप दे डाला। यह मिट्टी का ढेर उसी का परिणाम है।

लोभी ब्राह्मण क्रोध से पगला गया, विवेक को खो बैठा और बेटी से बोला– "तूने मेरी आज्ञा का पालन नहीं किया, अतः जा तेरी भी यही गति हो।" उस लोभी का तपोबल अति प्रचण्ड था। देखते-देखते वह बालिका भी पत्थर की मूर्ति बन गई।

यात्रा के प्रसंग में गुरु गोरखनाथ का उस रास्ते से एक बार फिर आना हुआ। बालिका की पथराई मूर्ति को देखकर समझ न पाए कि यह किस दुष्ट की करतूत है। उन्होंने पाषाण प्रतिमा की ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देखा कि प्रतिमा बोल उठी–"महाराज! यह मुझे आपको सच बताने की सजा मिली है।" सुनकर गुरु जी को पुनः क्रोध उतर आया और बोले–"रे हृदयहीन ब्राह्मण! लोभ के कारण तू बेटी के वात्सल्य को भी खो बैठा, अतः जब तू उसे वात्सल्य भरी नजर से देखेगा, तब तेरी भी यही गति होगी।" फिर पाषाण प्रतिमा से बोले–"बेटी! तेरे पिता का तप इतना प्रचण्ड है कि उसका दिया शाप टल नहीं सकता, तथापि मैं तुझे वरदान देता हूं तेरी सदा देवीवत् पूजा होती रहेगी।" कहकर गुरु जी भारी मन से अपने रास्ते चले गए।

कई दिनों के पश्चात् ब्राह्मण को बेटी की याद आई। वात्सल्य से हृदय भर आया। वह पाषाण प्रतिमा बेटी को गले लगाने के लिए उस ढेर पर तीव्र गति से चढ़ने लगा। पास पहुंचकर ज्योंही उसकी प्यार भरी नजर प्रतिमा पर पड़ी, त्यों ही वह भी गुरु गोरखनाथ के अभिशाप से पथरा गया।

रूड़ी (ढेर) के शिखर पर पथराई उस देवी की मूर्ति की श्रद्धालु आज भी पूजा करते हैं। नया अन्न घर लाने से पहले ही उसको भेंट करते हैं, दूध-दही भी अर्पित करते हैं। पास ही उसके बीच पथराई ब्राह्मण-मूर्ति भी याद करवाती है कि 'लालच बुरी बला है।'

●

अमृत कलश

✍ बी. आर. मुसाफिर

प्राचीन काल में एक दानी राजा विक्रमाजीत हुआ करता था। दानी होने के साथ-साथ वह न्यायप्रिय और धार्मिक विचारों का भी था। एक पंडित उसका राज पुरोहित था। राजा और राज पुरोहित के आपस में बड़े घनिष्ठ सम्बन्ध थे। राजा की एक राजकुमारी थी। जब वह जवान हो गई तो उसके लिये रिश्ते का प्रश्न पैदा हुआ। राजा लोग राजवंश में ही कन्या को देते थे। एक दिन राजा ने पुरोहित को बुलाया और राजकुमारी के लिये योग्य वर तलाशने को कहा। राजा बड़े सोच-विचार में पड़े हुए पुरोहित से पूछने लगे, पंडित जी क्या बात है? आप बड़ी समस्या में पड़ गए हैं, कारण क्या है?

महाराज! पंडिताइन मेरे बिना कभी नहीं रही है, वह प्रतिदिन मेरी पूजा करके भोजन करती है। आप का अन्न खाते हैं, आपका काम करना हमारा प्रथम कर्तव्य है। मेरे जाने के बाद उसका क्या बनेगा? इस सोच में पड़ा हूं, पुरोहित ने अपनी बात कही। राजा ने कहा कि कोई बात नहीं इस समस्या का समाधान भी हमारे पास है। राजा ने चित्रकारों को बुलाकर पंडित जी का चित्र उसके घर में लगवा दिया और पंडित को कहा कि अब आप जा सकते हैं। पंडिताइन आपके चित्र की पूजा कर लेगी। इसके लिये भंडारी को 6 मास तक का राशन डाल देने की भी आज्ञा दे दी। पंडित राजा से और फिर पंडिताइन से आज्ञा लेकर वर ढूंढ़ने के लिये निकल पड़ा।

पंडित के जाने के कुछ समय बाद एक घटना घटी। पंडिताइन चूल्हा जलाकर पूजा में लीन हो गई। चूल्हे की आग सुलगती-सुलगती जोर पकड़ गई। पंडिताइन के पूजा से उठने तक आग भयंकर रूप धारण कर चुकी थी। पंडिताइन बजाए इसके कि आग बुझाने का कोई उपाय करती, शोर मचाती, वह पंडित जी के चित्र के पास जाकर कहने लगी, 'महाराज, घर जल रहा है, आप कृपा करके बाहर निकलें। पंडित का चित्र कैसे बाहर निकलता। पंडिताइन ने निर्णय लिया कि अगर पंडित जी बाहर नहीं निकलते तो मैं भी इनको छोड़कर बाहर नहीं जाऊंगी। परिणामस्वरूप वह मकान

में ही जल मरी। जब तक राजा को खबर मिली, पंडिताइन की धूल बन चुकी थी।

राजा बड़ी दुविधा में पड़ गया। पंडित मेरे काम पर गया है, आकर जब पंडिताइन को न पाएगा तो जाने मुझे कैसा शाप दे जिससे मेरा राज्य भी नष्ट हो जाए। पंडित भी अपनी पंडिताइन के वियोग में मुझे शाप देकर आत्महत्या न कर ले। इस प्रकार मेरा कुल नष्ट हो जाएगा, राज्य चला जाएगा, फिर मेरा जीवन भी बेकार हो जाएगा। उसने दूसरे पंडित और मंत्री को बुलाकर इस बात को कैसे सुलझाएं, पूछा।

सभी ने मिलकर इसका एक ही उपाय निकाला कि पंडिताइन के अवशेष (अस्तू) आदि रख लिये जाएं और अमृत कुम्भ की खोज करके अमृत उन अवशेषों पर छिड़क कर पंडिताइन पुनर्जीवित हो सकती है। इसके अतिरिक्त और कोई भी हल नहीं है। राजा इस बात को मान गया और राज्य भार मंत्री के ऊपर छोड़कर वह स्वयं अमृत कलश की खोज में निकल पड़ा। राज्य से बाहर निकल गया। एक, दो, तीन कई राज्य पार कर गया। एक दिन वह एक नगर से निकल रहा था कि उसे किसी महिला के रोने की आवाज़ सुनाई दी। राजा के पग अनायास उस ओर बढ़ गए। अन्दर गया तो क्या देखता है कि एक प्रौढ़ स्त्री बब्बरू (खमीरे वाली रोटी) तले जा रही है और रो रही है। एक आगंतुक को देखकर वह सहम गई।

'मां, तू क्यों रो रही है? तेरा रोना सुनकर ही मैं अन्दर आया हूं। तू बिना किसी संकोच के मुझे बता कि आखिर बात क्या है? बब्बरू तो खुशी के अवसर पर तले जाते हैं, उसमें रोने की क्या बात है?'

'बेटा अगर तूने मुझे मां कहकर बोला है तो बैठ जा जरा निश्चय से सुन ले कि मैं दो बेटों के होते हुए भी मां नहीं रही, मेरा वंश नष्ट हुआ जा रहा है। जिसमें तू भी कोई सहायता नहीं कर सकता है। मेरे भाग्य में ही ऐसा होगा, इसमें किसी का क्या दोष है।' बुढ़िया ने इतनी बात अविरल अश्रुओं की बरसात के साथ खत्म की और फिर रोने लग पड़ी।

राजा ने बुढ़िया को ढाढस बंधाया कि 'मां तुम चिंता मत करो। अगर हो सका तो मैं तुम्हारी कठिनाई को दूर करूंगा। तुम पहले मुंह से बात तो बताओ कि मामला क्या है? वास्तविकता क्या है? हो सकता है उसका हल निकल आए। अपने दिल की बात साफ-साफ कह डालो।'

तब बुढ़िया बोली कि 'देखो बेटा सालों पहले इस नगर में एक राक्षस आकर उत्पात मचाता था और नगरवासी उससे तंग आ चुके थे। एक दिन नगरवासी उसके पास गए और कहा कि महाराज आपका आहार आदरपूर्वक प्रति सांध्य निश्चित स्थान पर पहुंच जाया करेगा, आप सब लोगों को तंग मत करें। राक्षस इस बात से सहमत हो गया। उसी दिन से नगरवासी प्रतिदिन बारी-बारी एक मानव को पूरे खाने-पानी के साथ निश्चित स्थान पर छोड़ आते हैं और दूसरे दिन उसके अवशेष

इकट्ठे करके जल प्रवाह कर देते हैं। मैं इससे पूर्व अपनी बारी के अनुसार अपने पति को राक्षस का आहार बना चुकी हूं। एक पुत्र किसी राजा 'कर्ण' के पास जाकर नौकर हो गया, वह राजा उसे घर नहीं भेजता है। यही पुत्र था, इसके सहारे मैं जी रही थी। आज इसकी राक्षस के लिये बलि की बारी आ गई है। अब तुम ही बताओ कि मैं क्या करूं?

राजा ने बुढ़िया की सारी कहानी बड़े निश्चय से सुनी और हंसते हुए बोला, 'मां जी! बस यही बात थी' यह तो बात ही कुछ नहीं है। पहले तो आपके पुत्र की जगह मैं राक्षस की बलि बनने जाऊंगा, और फिर अगर मैं बच गया तो अपना काम जिसके लिये मैं घर से निकला हूं, बाद में करूंगा, पहले तुम्हारे पुत्र को राजा कर्ण से मुक्त कराकर तुम्हारे पास लाऊंगा।

बुढ़िया की आंखें खुली की खुली रह गई। कान खड़े हो गए। उसे विश्वास ही नहीं आ रहा था कि क्या यह व्यक्ति सच कह रहा है या मुझे सांत्वना दे रहा है। बोली—'यह तुम क्या कह रहे हो बेटा, मैं क्या सत्य सुन रही हूं।' 'मां! यह सत्य है, राजा ने कहा, 'आप चिन्ता न करें।'

तभी नगर के प्रतिष्ठित लोगों के साथ उसके पुत्र ने घर में प्रवेश किया। नगरवासी स्वतः उसे छोड़ने जाते थे जिसकी राक्षस आहुति की बारी होती थी। एक आगंतुक की स्वयं की राक्षस आहुति देने पर सभी नगर से आए व्यक्तियों ने आपत्ति व्यक्त की, कि एक मेहमान जिसे हमें शरण देनी चाहिये, कैसे राक्षस का आहार बनने को भेज दें, किन्तु राजा की इस बात पर कि मैं बुढ़िया को वचन दे चुका हूं, वे मान गए। बड़े आदर-सम्मान के साथ वे लोग उसे राक्षस आहार के लिये उस स्थान पर छोड़ आए जहां राक्षस आकर अपनी बलि लेता था।

राजा बड़ी बेसब्री के साथ उस राक्षस की प्रतीक्षा करता रहा। स्वादिष्ट भोजन का आनन्द लेता रहा। इस बीच उसे झपकी सी आने लगी ही थी कि बड़े जोर की आंधी चली। भयंकर स्वर कानों में सुनाई देने लगे और कुछ ही क्षणों में एक दानव देह सामने खड़ी जोर-जोर से ठहाके मारती दीख पड़ी। वह पहले ही सतर्क था, ढाल तलवार उसके पास थी। राक्षस को उसने सम्भलने का अवसर ही नहीं दिया। तलवार के वार से झट उसका सर धड़ से जुदा दिखाई देने लगा। राक्षस तब भी हाथ-पैर मारने लगा लेकिन, राजा ने दूसरा वार भी कर दिया। अब राक्षस चन्द लोथड़ों में राजा के सम्मुख था। राजा अपनी कार्यवाही पूरी कर शव को सिरहाने रखकर बड़े प्रेम से निद्रा की गोद में चला गया।

रोज की भांति नगरवासियों ने राक्षस के आहार के अवशेष जल प्रवाह करने थे। वह भी प्रातः ही आ पहुंचे परन्तु वह तो वहां आकर चकित ही रह गए। आहार ग्रहण करने वाला राक्षस स्वतः आहार बन चुका था। लोगों की चहल-पहल सुन राजा

भी जाग पड़े। लोगों ने उसे हाथों पर ले लिया, वह तो उनके लिये भगवान था, जिसने सदा-सदा के लिये उन्हें राक्षस से छुटकारा दिलाया।

अगले दिन बुढ़िया से आज्ञा लेकर वह राजा कर्ण की राजधानी की ओर बढ़ चला। नगरवासी उसे छोड़ना ही नहीं चाहते थे, मगर उसने अपने ज़रूरी काम का बहाना लगाकर उनसे विदा ले ही ली।

आखिर राजा विक्रमाजीत कर्ण की राजधानी जा पहुंचा। पता करके बुढ़िया के लड़के को भी ढूंढ़ निकाला। उससे बात हुई कि 'तू अपनी मां के पास क्यों नहीं जाता?' तो उसने कहा कि 'मुझे और कोई काम नहीं है, केवल मेरा पलंग का पहरा है। दिन भर कोई काम नहीं करता। राजा कहीं जाता है तो पलंग का पहरा देता हूं। मुझे यह आदेश है कि तूने किसी को यह भेद नहीं देना है, कि मैं कहां जाता हूं, क्या करता हूं। बस इस थोड़ी-सी अवधि में मेरी नौकरी पूरी। मगर मुसीबत यह है कि राजा मुझे छुट्टी नहीं देता है।'

राजा ने एक दिन उसके कपड़े आदि स्वयं धारण करके उसे कहा कि तू तो अपने घर जा, बाकी बात मैं सम्भाल लूंगा। राजा खाना खाकर पलंग के पास आया, एक नज़र नौकर पर डाली कि यह तो यहां है ही, अपनी मंज़िल की ओर चल दिया। विक्रमाजीत भी वास्तविकता देखना चाहता था। वह पलंग छोड़ राजा के पीछे-पीछे हो लिया ताकि यह जान ले कि कहां जाता है, क्या करता है राजा कर्ण।

राजा कर्ण चलता-चलता एक बाग में पहुंच गया। राजा विक्रमाजीत ने देखा कि बाग में एक तेल का कढ़ाहा खौल रहा है, पास एक बकरी बंधी है। कुछ कदम पीछे राजा रुका, अपने वस्त्र उतारे और तेल के उबलते कढ़ाहे में छलांग लगा दी, राजा विक्रमाजीत हैरान रह गया देखकर कि वह बकरी जो खूंटी में बंधी थी वह एक विशालकाय राक्षसी का रूप धारण कर चुकी थी। कढ़ाहे से मृत राजा कर्ण को निकाल कर उसने अपना आहार बनाया, शरीर का मांस खाकर हड्डियां इकट्ठी कीं। पास एक कलश पड़ा था। वहां से एक तरल पदार्थ निकालकर हड्डियों के ऊपर छिड़का। राजा वैसे ही सामने नज़र आने लगा। राजा गांठ में कोई गठड़ी ले गया था। एक पत्थर-सा उठा (पारस पत्थर) राक्षसी ने उस गठड़ी में रखे लोहे को सोना बना दिया।

राजा कर्ण वापस लौटने ही वाला था कि राजा विक्रमाजीत यह सारा दृष्टांत देख झट राजा के कपड़े उठा, राजा के महल की ओर भागा। राजा जब कपड़े डालने आया तो कपड़े वहां थे ही नहीं। वह परेशान हो गया पर क्या कर सकता था? रात के अंधेरे में महल के पास पहुंच गया। डर था कि पलंग का पहरेदार देखकर क्या कहेगा। बाहर खड़े ही कर्ण ने आवाज़ डाली कि पलंग के पास से हट जाओ मैं आ गया हूं। राजा विक्रमाजीत पहले ही यह चाहता था। वह झट साथ के कमरे में जाकर अपने बिस्तर पर सो गया।

दूसरे दिन राजा विक्रमाजीत ने अपने शरीर को गोदकर उसमें मिर्च, मसाला, नमक आदि लगा दिया। जगह-जगह, नमक-मिर्च-मसाला लगाकर शाम ढलते ही वह राजा कर्ण के कपड़े पहनकर उसके जाने के पूर्व ही उस बाग में चला गया। राजा विक्रमाजीत ने भी यही कार्य किया जो राजा कर्ण करता था। राक्षसी आज चटपटा आहार पाकर अति प्रसन्न हो उठी। उसके ऊपर अमृत छिड़क, उसे साकार बनाकर बोली, 'राजा कर्ण! मैं आज आप पर अति प्रसन्न हूं, जो मांगना चाहो मांग लो। राजा विक्रमाजीत और चाहता ही क्या था बोला, तो सत युग के दो वचन दे दो। राक्षसी ने जब वचन दे दिये तो राजा विक्रमाजीत ने कहा कि मुझे एक वचन के बदले यह अमृत कलश और दूसरे वचन के बदले यह पारस पत्थर चाहिये। राक्षसी वचन देकर अपनी निधि खो चुकी थी। वह उसी समय कढ़ाहा उल्टा कर वहां से भाग गई।'

अब क्या था, राजा विक्रमाजीत अपनी मंजिल तक पहुंच चुका था। उसे अमृत कलश के साथ-साथ पारस भी मिल चुका था। दोनों वस्तुएं लेकर वह महल की ओर लौट पड़ा। राजा चलने के पूर्व नौकर को देखता रहा, आखिर यह निर्णय लेकर कि कल मैं उसे जान से ही खत्म कर दूंगा, बाग की ओर चल दिया। जब बाग में पहुंचा तो हैरान रह गया, ना वहां बकरी थी, न तेल का कड़ाह उबल रहा था। कर्ण उल्टे पांव वापस लौट आया।

वास्तव में राजा कर्ण जो टीहा (सवा मन) लेकर आता था, वह सवा मन सोना दान करके तब खाना खाता था। दानी चबूतरा दान लेने वालों से भरा था। राजा ने घर में आभूषण निकाल दान कर दिये आभूषण एक दिन, दो दिन, कब तक चलते। राजा हर समय सोच में रहता। वह कृशकाय हो गया। उसे बिस्तर से उठना और स्नान करना मुश्किल हो गया। अपनी प्रतिज्ञा (सवा मन सोना दान कर खाना-खाना) अंधकार में नज़र आने लगी। क्या करे? कहां जाए? कुछ दिन बाद राजा विक्रमाजीत सामने आया। राजा कर्ण उस पर आग बबूला हो गया। राजा विक्रमाजीत हंसा और बोला, राजा कर्ण, मैं समझता था कि तू अपने आपको इतना बड़ा दानी पता नहीं क्यों बताता है। मैं राजा विक्रमाजीत हूं। आज तेरी पोल खुल गई है कि तू अपने व्यक्तित्व को तेल की कड़ाही की भेंट कर दानी कहलाता था। यह ले पारस पत्थर (पत्थर को राजा कर्ण की ओर फेंक दिया) और जितने मन सोना दान करना है, करते रहो। मैं तेरा भेद कहीं नहीं खोलूंगा। राजा कर्ण हैरान रह गया। उठा और उसके पांव की ओर बढ़ा मगर इतने में राजा विक्रमाजीत आंखों से ओझल हो चुका था।

राजा विक्रमाजीत अमृत कलश लेकर राजधानी पहुंचा। अमृत को छिड़क कर पंडिताइन को जीवित किया। पुरोहित भी राजकुमारी के लिये योग्य वर ढूंढ़ कर राजधानी में आ चुका था और राजकुमारी के विवाह की तैयारियां आरम्भ हो चुकी थी।

●

कर्मफल

✍ डॉ. श्यामा वर्मा

एक बार राजा विक्रमादित्य ने अपने सभी दरबारियों और ज्योतिषियों को बुलाकर पूछा, 'मैं राजा कैसे बना?' उन्होंने कहा, 'हमें इसका पता नहीं। यहां से दस मील दूर एक देवदार के पेड़ के नीचे एक साधु बैठा होता है। वह बहुत सिद्धि प्राप्त है। सभी लौकिक-अलौकिक प्रश्नों का समाधान तत्काल करता है। वही इस प्रश्न का उत्तर दे सकता है।' राजा अपने प्रश्न का उत्तर पाने के लिये उस साधु के पास जा पहुंचा।

साधु ने कहा, 'तुम कौन हो?'

मैं राजा विक्रमादित्य।

'क्यों आए हो?' साधु ने पूछा।

राजा ने कहा, 'बताओ, मैं राजा कैसे बना?'

साधु ने रोटी बनाकर रखी हुई थी। उसने राजा को कहा, 'पहले तुम खाना खा लो। फिर उत्तर दूंगा।' राजा रोटी खाने लगा। उसने साधु से कहा, 'आप भी खाओ।' साथ ही अंगार-भस्म का ढेर पड़ा था। साधु ने गप-गप करके अंगार-भस्म खाया और कहा, 'राजा! मैं तो चला। तू दस मील और आगे जा। वहां दूसरा संत है। वह तेरे सवाल का जवाब देगा।' साधु यह कहकर वहां से कहीं निकल गया।

राजा आगे गया तो उसे दूसरा साधु मिला। वह एकदम बोला, 'ओ राजा विक्रमादित्य! आज तू कैसे आया?' राजा बड़ा हैरान हुआ कि साधु को उसके नाम का कैसे पता चला। उसने कहा, 'साधु महाराज! आप बड़े ज्ञानी लगते हो। आपने कैसे जाना, मैं राजा हूं और मेरा नाम विक्रमादित्य है। अब आप मुझे यह भी बताओ कि मैं राजा कैसे बना? पिछले जन्म में मैंने कौन से अच्छे कर्म किये हैं?'

साधु ने कहा, 'कोई बात नहीं, मैं तेरे प्रश्न का उत्तर दूंगा। तू बैठ, पहले भोजन कर।' उसने राजा को खाना दिया और राजा खाना खाने लगा। राजा ने कहा, 'आप भी भोजन करो।' उस साधु ने भी गोबर-मिट्टी गूंथा, पेड़ा बनाया, झटपट खाया और

बोला, 'राजा तू आगे जा। आगे एक गांव आएगा। उस गांव के पहले घर में तेरे पहुंचते ही एक बालक का जन्म होगा। वह तेरे प्रश्न का उत्तर देगा।'

राजा वहां से आगे निकला। जाते-जाते उसे एक गांव मिला। वह पहले घर में अंदर जाने लगा तो घर के मालिक ने रोका, 'इस समय कोई भी अंदर नहीं जा सकता।' उसने कहा, 'मैं राजा विक्रमादित्य हूं, मुझे जाने दो। मेरा जाना ज़रूरी है।' उसे अन्दर जाने दिया गया। जैसे ही राजा अन्दर गया उसी समय बालक का जन्म हुआ। उसे देखते ही बालक ने पूछा 'राजा विक्रमादित्य क्यों आए हो? जल्दी बताओ। विलम्ब किया तो बाद में पछताना पड़ेगा।' राजा ने अपना प्रश्न फिर पूछा, 'मैं किस अच्छे कर्म से राजा बना? इस बारे में मुझे बताएं।' बालक ने कहा, 'सुन राजा हमारे पिछले जन्म में एक देश में भारी अकाल पड़ा। खाने को कुछ नहीं बचा। आदमी धड़ाधड़ मरने लगे। पशु-पक्षी सब खत्म हो गए। हम चार भाई थे। हमने दूर तक एक-एक दाना ढूंढ़ते-ढूंढ़ते थोड़ा-सा अनाज इकट्ठा किया। वह पीसा। तू सबसे छोटा था। तू रोटी बनाने लगा। एक रोटी बनी। तूने वह सबसे बड़े भाई को दी। उसने खाना आरम्भ किया ही था कि एक कृशकाय बूढ़ा वहां पहुंचा और बोला, 'बेटा मैं भूख से मर रहा हूं, मुझे भी रोटी दो।' बड़े भाई ने कहा, 'अरे! अगर मैं तुझे रोटी दे दूंगा तो स्वयं क्या अंगार-भस्म खाऊंगा।' तूने देखा कि वह अभी तक अंगार भस्म खा रहा है। राजा ने कहा, 'हां, वह पहला साधु अंगार-भस्म खाता है।'

बालक ने फिर कहा, 'तूने दूसरी रोटी बनाई और दूसरे भाई को दी। वह बूढ़ा फिर पहुंचा और बोलने लगा, 'मैं भूखा हूं, मुझे रोटी दो।' भाई ने कहा, 'हे! तुझे रोटी दूंगा तो मैं क्या गोबर-मिट्टी खाऊंगा?' और वह आज भी साधु बनकर गोबर-मिट्टी खा रहा है। तूने उसे आज ही देखा। राजा ने कहा, 'हां, दूसरा साधु मिट्टी-गोबर खा रहा था।' बालक ने कहा, 'वह था तेरा दूसरा भाई। तूने तीसरी रोटी बनाई और मुझे दी। बूढ़ा फिर पहुंचा और रोटी मांगने लगा। मैंने जवाब दिया, 'तुझे रोटी दूंगा तो खुद क्या भूखा मरूंगा।' इसके परिणामस्वरूप मैं आज तक जन्म लेते ही बिना कुछ खाए-पिए मर जाता हूं। लेकिन आज मैं बात पूरी करने के पश्चात् ही मरूंगा। जब तूने चौथी रोटी बनाई और खाने लगा तो वह बूढ़ा फिर पहुंचा। तूने कहा, 'बूढ़े बाबा, तेरी भूख बड़ी, ले तू खा, मुझे चाहे मरने दे। तूने स्वयं रोटी नहीं खाई, बूढ़े को दी। उसकी भूख मिटा दी। तूने पुण्य किया, धर्म कमाया और आज तू राजा है। हमने भलाई नहीं की, अपना पेट भरा। यह हमें शाप था, जिसकी मुक्ति तेरे द्वारा होनी थी। वह आज पूरा हुआ। तू आया और हमें मुक्ति मिली।' ऐसा कहते ही बालक ने प्राण त्याग दिये।

●

दयालु राजा

✍ विद्यानन्द सरैक

राजा विक्रमाजीत एक धर्मप्रिय राजा जीअन नगरी में राज करता था। वह महान, दानी, वीर तथा न्यायप्रिय राजा था। जनता के दुःख-दर्द समझने व जानने के लिये वह भेष बदलकर आम लोगों की तरह उनमें बैठकर सूचनाएं ग्रहण कर न्याय करता था।

एक सांझ की बात है कि राजा ने एक बुढ़िया का दरवाज़ा खटखटाया। बुढ़िया ने दरवाज़ा खोला और उसे आदर से भीतर बिठा लिया। बुढ़िया को क्या मालूम कि वह आगन्तुक इस देश का महान् धर्मप्रिय राजा विक्रमाजीत हैं। बुढ़िया उसका आतिथ्य करते, कभी रोती तो कभी खिलखिला कर हंसती थी।

राजा उसकी इस स्थिति से स्तब्ध था। आखिर राजा ने विनम्रता पूर्वक बुढ़िया से पूछ लिया, 'हे मां! तू मेरी सात जन्म की मां है। मुझे अपने हंसने और रोने का रहस्य तो बताओ।' बुढ़िया बोली, 'बेटा, हंस इसलिये रही हूं कि मैं तो मर जाऊंगी मेरे न कोई पीछे है, न आगे। मर कर आराम तो करूंगी। रो इसलिये रही हूं कि अगर मैं यह बात जो तुम्हें कह रही हूं, कह दूं तो मर जाऊंगी और तुम यह बात आगे कहोगे तो तुम भी मर जाओगे। अब जिसे मैं बात कहना चाहती हूं वह है राजा विक्रमाजीत जिसकी आठ दिन बाद मृत्यु होनी है।

राजा बड़ा धर्मप्रिय है वह मर गया तो हमारा देश नष्ट हो जाएगा। लेकिन वह बच सकता है यदि वह हिगुथ राजा की कन्या से ब्याह करे। परन्तु यह ब्याह करना इतना आसान नहीं है। राजा चुपचाप सुनता रहा। बुढ़िया बोली, बेटा! जब तुमने मुझे धर्म मां माना है। मैं बेशक मर जाऊं लेकिन यह सच्ची बात तुम्हें बताती हूं। राजा हिगुथ के देश तक पहुंचने की राह में बड़े खतरनाक राक्षस रहते हैं। फिर राजा का प्रण है कि जो व्यक्ति पूरा खलियान भर अनाज खा लेगा उसी से राजकन्या हिंगा का ब्याह कराएगा। अब बोल कौन यह असम्भव कार्य करेगा? अच्छा बेटा! अब मेरा समय आ गया अब तू जान। इसलिये ही मैं रो रही थी और हंस भी रही

थी। इतना कहकर बुढ़िया स्वर्ग सिधार गई। राजा ने गांव की रस्मों के अनुसार क्रिया-कर्म किया और महल लौट आया।

राजा ने बुढ़िया की भविष्यवाणी जानने के लिये तैयारी की और प्रातः ही हिगुथ राजा के राज्य की ओर निकल पड़ा। चलते-चलते राजा एक छोटी-सी नगरी में पहुंचा। वहां अचानक एक घर से रोने की आवाजें सुनाई दीं। राजा ने जाकर जब हाल पूछा तो एक बुढ़िया और बूढ़ा रो रहे थे। राजा बोला, आप क्यों रो रहे हो। उन्होंने कहा, बेटा! क्या बताएं? हमारी नगरी में एक राक्षस धाड़ू आता है और लोगों को खा जाता है।

एक दिन नगरी के सभी लोगों ने राक्षस से गुहार की। निर्णय हुआ कि प्रति दिन एक आदमी उसका भोजन होगा। हमारा एक बेटा पहले वह राक्षस खा चुका है। अब एक बेटा रहा है। उसे अभी राक्षस के हवाले करना है। इसीलिये ये पकवान बन रहे हैं। हम रो रहे हैं। राजा बोला माता जी ये पकवान मुझे दो मैं आज राक्षस के पास जाऊंगा। मेरे न मां है न बाप, आप चिंता न करो। बुड्ढा और बुढ़िया बोले बेटा! यह महा पाप है। अपने बेटे को बचाने के लिये तुम जैसे भद्र पुरुष को मरवाना उचित नहीं।

राजा ने जिद्द की और पकवान खाकर उस जगह पहुंचा जहां राक्षस आता था। राजा पेड़ की आड़ में छुप गया और एक कुत्ता वहां बांध दिया जहां आदमी को राक्षस खा जाता था। धाड़ू राक्षस छलांगें लगाता जब पहुंचा तो वहां कुत्ता चिल्ला रहा था। वह गुर्राया, चिल्लाया, उसकी दहाड़ से गांव हिल गया। राजा ने भाला मारा और राक्षस को बोला, जा बेटा अब सदा के लिये सो जा। राक्षस उस राजा की ओर लपका। तब तक राजा ने तलवार का भरपूर वार कर उसका सिर धड़ से अलग कर दिया। राक्षस ढेर हो गया, कुत्ता उसके मुंह से निकला खून चाटता रहा।

राजा विक्रमाजीत प्रातः होते ही वहां से आगे अपने गंतव्य की ओर चल पड़ा। जब बूढ़ा-बूढ़ी और उसके बेटे का परिवार वहां पहुंचा तो वे हैरान थे कि राक्षस मरा पड़ा है, कुत्ता उसके मुंह से गिरता लहू चाट रहा है। कानोंकान गांव-गांव यह खबर फैल गई कि राक्षस को बूढ़े के बेटे ने मार डाला है। भीड़ से बूढ़े ने कहा, यह कार्य मेरे बेटे ने नहीं किया, यह तो उस महान पुरुष का कार्य है जो कल मेरे बेटे के बदले जान देने आया था। बूढ़े ने फिर कहा, भाइयो! लगता है वह महापुरुष महाराज विक्रमाजीत ही था।

राजा जंगल, नदी-नालों, पहाड़ों को लांघता दूर एक जगह पहुंचा और रात काटने के लिये पेड़ पर चढ़ गया। सामने एक चूल्हा था, उस पर लोहे का एक कड़ाह। तीसरे पहर एक व्यक्ति आया। उसने आग जलाई और कड़ाहे का तेल गर्म किया। राजा सब देख रहा था। थोड़ी देर में एक भयंकर सूरत वाली औरत आई और उस व्यक्ति ने आते ही उस कड़ाह में अपने को डाल दिया। जब वह पक गया तो

उस औरत ने खाया और हड्डियों पर जल छिड़ककर जिन्दा कर दिया और सवासेर सोना उसके हाथ में थमाकर चल पड़ी।

राजा उस पुरुष के सामने प्रकट हुआ और बोला भाई तुम ये जोखिम क्यों ले रहे हो। वह बोला हे महापुरुष! मैं रोज ग़रीबों को ये सवा सेर सोना दान करता हूं इसलिये ये पीड़ा सह रहा हूं। वह दानी बोला, अच्छा मैं चलता हूं। मेरा दान करने का समय हो गया है।

राजा ने सारा दिन अपने शरीर में तलवार के घाव किये और भांति-भांति के मसाले भरे। रात जब वह अद्भुत औरत आई तो राजा ने कढ़ाई में स्वयं को डालकर उसे अपने मांस का स्वादिष्ट भोजन बिना चिल्लाए प्रस्तुत किया। वह औरत अति प्रसन्न हुई। उसने एक अद्भुत गड़वी राजा को भेंट की और बोली इसे पूजने पर जितना सोना, चांदी, हीरे चाहो मांग लेना। पर तुम ये तो बताओ तुम कौन हो और इस धन का क्या करोगे? राजा बोला मैं राजा विक्रमाजीत हूं। यह गड़वी उस व्यक्ति को दूंगा ताकि वह सदा की पीड़ा से मुक्त होकर दान कर सके। वह और खुश हुई और सदा के लिये अन्तर्धान हो गई। थोड़ी देर में जब वह दानी आया तो वहां कुछ न देखकर चिल्लाने लगा कि अब गरीबों को मैं क्या दूंगा। राजा प्रकट हुआ और गड़वी उसे दे दी तथा उसका लाभ बताकर आगे चल पड़ा।

राजा कई राज्यों की सीमाएं लांघ कर एक बियाबान जंगल में पहुंचा। वहां उसे देखकर हैरानी हुई कि एक व्यक्ति दस-दस सेर की रोटियां घ्याने में सेंक कर खा रहा है। राजा ने पूछा भाई तुम कौन हो? उसने बताया मेरा नाम आड़ू है, आड़ा चार-पांच अनाज का 10 सेर वजन का तोल है। क्योंकि वह आड़े की एक रोटी खाता था इसलिये उसका नाम आड़ू था।

राजा बोला भाई तुम तो बड़े बहादुर हो। आड़ू बोला मैं क्या बहादुर हूं। तुम नहीं जानते बहादुर तो राजा विक्रमाजीत है जिसने धाड़ू राक्षस को मार डाला और गरीबों की रक्षा की। राजा बोला भाई वह तो मैं ही हूं। आड़ू उसके चरणों में गिरा और कहां मुझे अपनी सेवा का मौका दीजिये। राजा बोला आप मेरे काम आ सकते हैं। अगर मेरा साथ दो तो मैं आपका धन्यवाद दूंगा।

रास्ते में हिगुथ राजा की सीमा पर एक व्यक्ति लकड़ियां काट रहा था। अभी सैकड़ों पेड़ काटने पर भी उसका बोझा नहीं बना था। राजा विनम्रता से बोला, तुम इतने पेड़ काट गए। ये लकड़ियां कौन उठाएगा? लक्कड़हारा बोला ये तो बहुत कम है। राजा ने कहा, तुम तो बहादुर हो। लक्कड़हारा बोला, महापुरुष! मैं क्या बहादुर, बहादुर तो राजा विक्रमाजीत है जिसने धाड़ू राक्षस को मार डाला। आड़ू बोला अरे भाई यही है महाराजा विक्रमाजीत। लवकड़हारा राजा के पांव में गिरा और बोला मेरा अहोभाग्य कि आपके दर्शन कर पाया। वह भी राजा के संग चल पड़ा। ईश्वर की कृपा न्यारी।

राजा हिगुथ की हिवां नगरी में पहुंचे तो चारों ओर बर्फ ही बर्फ थी। रात इस ठण्ड में कैसे बिताएं। लक्कड़हारे ने राजा की चार सुनसान हवेलियां गिराई। उससे आग का भारी घ्याना लगाया। चारों ओर अफरातफरी मच गई। राजा के पास चोबदार पहुंचा और बोला महाराज! कोई तीन वीर आए हैं। उन्होंने पहरेदारों की परवाह किये बगैर ये आग जला दी।

राजा हिगुथ तुरन्त वहां पहुंचा और बोला, आप कौन हैं जिन्होंने यह दुःसाहस किया। आडू बोला हमने आपके नगर में जगह मांगी। इस ठण्ड ने हमें इनकार किया। खाना मांगा, उसके लिये भी फटकार ही लगाई, तभी यह करना पड़ा। राजा बोला आप क्यों आए हैं? लक्कड़हारा बोला हमारे राजा को आपकी कन्या से विवाह करना है। हम आपकी सभी शर्तें पूरी करेंगे। राजा हिगुथ हंसा, अरे! क्या खलियान भर अनाज आप खाओगे। आडू बोला, खलियान तो मुझे चाहिये भूख लगी है। फिर ये लक्कड़हारा जो सारे जंगल उठाता है, भी खाएगा। तब राजा न जाने क्या करे ये बाद की बात है।

आडू को मण भर की रोटी खाते देखकर हिगुथ स्तब्ध हो गया और समझ गया कि ये महान अलौकिक शक्ति का मालिक है। राजा ने विनम्रता से पूछा, अब आप साफ-साफ बताएं कि आप कौन महापुरुष हैं। तब आडू बोला, ये महाराज विक्रमाजीत हैं। आपकी कन्या का किसी गुप्त रहस्य के कारण वरण करना चाहते हैं। राजा हिगुथ ने उनका भव्य स्वागत किया और भारी धन-धान्य देकर बेटी का हाथ राजा के हाथ में थमा दिया। अब तक सात रोज़ हो गए थे।

राजा ने नई रानी को वह वृत्तान्त सुना दिया जो बुढ़िया ने कहा था। रानी बोली मुझे वरण करना आपका काम था, सुहाग सलामत रखना मेरा दायित्व है। आप आठ घड़ी में चार द्वारों वाला एक कमरा बनवा दो। राजा की आज्ञा से वही हुआ। रानी ने राजा की सेज बीच में रखी एक द्वार पर दीपक, एक पर जल की गड़वी रखी, एक पर अन्न का बर्तन स्थापित किया और चौथे द्वार पर पूरा शृंगार कर स्वयं बैठ गई।

यमदूत आए और दीपक देख वापिस चले गए। फिर पानी, अन्न को देखकर धर्मराज के पास आए और बोले, महाराज! अब आप स्वयं जाओ। हमें धर्म संकट में डाल दिया है। धर्मराज ज्यूं ही आया रानी ने प्रणाम किया और यमराज ने नयी-नवेली दुल्हन देख सदा सुहागिन कह दिया। रानी बोली आप तो मेरा सुहाग छीनने आए हैं। यमराज बोले बेटी अब क्या छीनना, तुमने ही उसे छीन लिया है। अब इसे आयु दान मिल गया, तुम सदा के लिये सुहागिन हो गई हो। अब राजा अमर हो गया है। बेटी! ये राजा धर्म प्रिय है इसलिये तुम जैसी सती नारी ने इसे जीवनदान दिलाकर लोगों की सेवा का मौका दिलाया है। इस प्रकार राजा अमर हुए और रानी सदा सुहागन बनी। ●

एक था राजा एक थी रानी

✍ देवराज संसालवी

राजा विक्रमादित्य बहुत ही न्यायप्रिय तथा प्रजा स्नेही थे। वह प्रजा के कष्टों को अपने ऊपर ले लिया करते थे। लगभग दो हज़ार वर्ष पूर्व राजा विक्रमादित्य का शासनकाल रहा है। राजा विक्रमादित्य प्रातः होते ही अन्न धन दान करते और तब भोजन पाते थे। दिन के समय अपने राज-काज में व्यस्त रहते। उनकी नगरी में कोई भी व्यक्ति गरीब नहीं था फिर भी एक ब्राह्मण गरीब ही रह गया। एक दिन राजा ने ब्राह्मण से पूछा, 'ब्राह्मण देवता मेरी नगरी में कोई भी व्यक्ति गरीब नहीं है। केवल आप ही एक हैं जो अब तक भी गरीब हैं। मैं तुम्हें प्रति-दिन ढेर सा अन्न और स्वर्णमुद्रा देता हूं। आप वह कहां डालते हैं?'

यह सुनकर ब्राह्मण ने राजा को बताया महाराज! यह मुझसे मत पूछिये, मैं गुनहगार नहीं हूं। जब आप मुझे एक स्वर्णमुद्रा और अन्न देते हैं, मैं बहुत प्रसन्नता से घर की ओर जाता हूं। मुझे रास्ते में रात पड़ जाती है और मैं सराय में ठहर जाता हूं। प्रातः होते ही मेरा धन गुम हो जाता है। मुझे कुछ भी समझ में नहीं आता है कि क्या करूं क्या न करूं। रात को जागता भी रहता हूं, फिर भी प्रातः होते ही आपका दिया धन व दक्षिणा लुप्त हो जाती है।

यह सुनकर राजा बहुत हैरान हुआ। उसने ब्राह्मण को बहुत-सी स्वर्ण-मुद्राएं व अन्न देकर विदा किया और स्वयं वेश बदलकर उसके पीछे-पीछे चलता रहा। जब रात हो गई तो ब्राह्मण उसी सराय में ठहर गया। तभी राजा उसके पास आया और उसे अन्यत्र जाने के लिये कहा। ब्राह्मण के दूसरी जगह चले जाने के पश्चात् राजा उसकी जगह लेट गया। रात्रि के प्रथम पहर में एक अज्ञात औरत प्रकट हुई जिसने ब्राह्मण के धन को उठाने के लिये हाथ बढ़ाया ही था कि राजा बिस्तर के ऊपर बैठ गया और उस औरत से पूछा 'तुम कौन हो?'

उस अज्ञात औरत ने कहा, 'राजा आप मुझे यह धन ले जाने दीजिये और स्वयं राजमहल में जाकर राजपाठ सम्भालिये।' राजा ने उससे फिर पूछा, 'तुम कौन हो, इस गरीब ब्राह्मण को क्यों सताती हो, इसका सारा धन क्यों चुरा लेती हो, मुझे यह सब

बताओ, नहीं तो मैं तुम्हारे टुकड़े-टुकड़े कर दूंगा।'

यह सुनकर उस औरत ने कहा, 'टुकड़े तो तुम्हारे मैं करूंगी। मैं 'होणी' (होनी) हूं। इस ब्राह्मण को शनि की दशा चली है और मेरा प्रकोप भी उस पर चल रहा है इसलिये मैं उसका धन उड़ा ले जाती हूं। राजा ने उसे नमन किया और कहा, 'इस ग़रीब ब्राह्मण का परिवार भूख से मर रहा है, तुम उसे छोड़ दो। मुझसे इसके बदले में जितना धन चाहिये ले जाओ।' औरत ने 'ठीक है' कहा और वह लुप्त हो गई। प्रातः होते ही राजा ने ब्राह्मण का धन उसे सौंपते हुए बिदा किया और स्वयं अपने महल में आ गया। कुछ ही दिन हुए थे, होणी ने ऐसा खेल रचा कि राजा का सारा राजपाठ नष्ट हो गया। उसे कुष्ठरोग हो गया, चोरी का लांछन लगने पर उसके हाथ-पैर काटकर उसे घने वन में फेंक दिया गया।

राजा को अपने शरीर के घावों में बहुत दर्द होता था। वह कराहता रहता था। उसी वन के रास्ते से होकर प्रतिदिन एक तेल बेचने वाली (तेलन) दूसरे शहर तेल बेचने के लिये सिर पर तेल की मटकी उठाए हुए जाती थी। एक दिन उसने राजा को कराहते हुए सुना। वह उसके समीप गई और दयाभाव से उसने राजा के घावों पर थोड़ा-सा तेल डाल दिया और चली गई। उस दिन उस तेलन को दो गुणा पैसा प्राप्त हुआ, वह बहुत प्रसन्न हुई। दूसरे दिन भी उसने राजा के घावों पर तेल डाला तो उसे चार गुणा राशि प्राप्त हुई। वह इसी तरह प्रति दिन राजा के घावों पर तेल डाल कर तेल बेचने जाती और उसे अधिक राशि मिल जाती। यह देखकर तेलन के पतिदेव को शंका हुई कि यह कहीं झूठ ही तो नहीं कह रही है, इतने पैसे इसे कहां से मिल रहे हैं। मैं भी तो तेल बेचने जाता हूं, मुझे तो इतने पैसे कोई नहीं देता।

एक दिन वह स्वयं तेलन के साथ तेल बेचने गया तो उसने राजा को पहचान लिया। राजा विक्रमादित्य के सिर के ऊपर प्रायः एक बादल का टुकड़ा मंडराया रहता था जो कि धूप में राजा की रक्षा करता था। तेली राजा के चरणों में गिर गया और राजा से वृत्तांत पूछने लगा। राजा ने तेली को सारी बात बताई, तेली राजा को उठाकर अपने घर ले आया और सेवा करने लगा। राजा ने उसे यह बात किसी से न करने के लिये कहा।

उन्हीं दिनों राजकुमारी पद्मावती का स्वयंवर भी होना निश्चित हुआ था। राजकुमारी ने एक बार राजा विक्रमादित्य को देखा था तब से ही उसने निर्णय कर लिया था कि वह इसी राजा से शादी करेगी।

राजकुमारी के पिता ने सारे देशों के राजकुमारों, राजाओं को स्वयंवर में सम्मिलित होने के लिये आमंत्रित किया था। प्रथम दिन सभा सजी हुई थी कि राजकुमारी हाथ में वरमाला लेकर बाहर आई और सारी सभा का दौरा किया लेकिन

किसी के गले में वरमाला नहीं पहनाई और जाकर अपने पिता से कहने लगी, 'पिता जी इस स्वयंवर में अभी भी कुछ राजा नहीं आए हैं। कृपया उन्हें भी बुला लीजिये। यह कहकर वह अन्दर चली गई। दूसरे दिन भी राजकुमारी ने सारे मंडप का चक्कर लगाया लेकिन राजा विक्रमादित्य को न देखकर अपने पिता से कहने लगी 'पिता जी आज भी सभा में कुछ राजा आने शेष हैं।

यह सुनकर राजा ने अपने सिपाहियों को आदेश दिये कि कोई भूला-भटका, लंगड़ा-लूला, कुष्ठी व्यक्ति कहीं भी हो तो उसे भी यहां लाया जाए। सिपाहियों ने तेली के घर जाकर उस कुष्ठी व अपंग व्यक्ति को देखा और उसे उठाकर स्वयंवर में ले आए और उसे भी एक जगह बिठा दिया। राजकुमारी ने पहले की तरह पूरे पंडाल का चक्कर लगाया। अंत में राजकुमारी ने उस कुष्ठी व्यक्ति जिसके हाथ-पैर कटे हुए थे और उसके सिर के ऊपर बादल का टुकड़ा छाया कर रहा था, के गले में वरमाला डाल दी। यह देखकर राजकुमारी के पिता और भाइयों ने विरोध किया लेकिन राजकुमारी के आग्रह के अनुसार उसकी शादी उस कुष्ठी व्यक्ति के साथ कर दी गई और उन्हें अलग से महल बना दिया। राजकुमारी ने राजा की बहुत सेवा की, उसे पता ही था कि यही राजा विक्रमादित्य हैं जो किसी शाप के कारण इस दशा को प्राप्त हुए हैं। लोगों में भी यह ख़बर फैल गई और वे राजा के पास आने-जाने लग गए। महल में धूमधाम से राजा का सत्कार होने लगा।

एक रात वह अज्ञात औरत 'होणी', कर्म, धर्म और भाग्य आपस में लड़ते-झगड़ते राजा के पास आ पहुंचे। चारों ने राजा से फैसला करने के लिये कहा, 'महाराज! हमारा फैसला कीजिये कि हम चारों में से कौन बड़ा है?' धर्म ने कहा, 'मैं बड़ा हूं', कर्म ने कहा 'मैं बड़ा हूं' भाग्य ने कहा 'मैं बड़ा हूं' और होणी ने कहा 'मैं बड़ी हूं'। यह सुनकर राजा ने उन चारों से कहा कि न तो धर्म बड़ा है और न कर्म और भाग्य बड़े हैं। बड़ी है तो केवल 'होणी' क्योंकि मैंने कर्म भी किया और धर्म भी करता रहा हूं और उसी के साथ मैं भाग्य को भी मानने वाला हूं किन्तु जब मुझे होणी ने आकर घेर लिया तो तुम में से किसी ने भी मेरी रक्षा न की।

इसलिये तुम बड़े हो नहीं सकते। मैं तो इस 'होणी' से बहुत प्रभावित हूं। इसके आगे मेरा कोई ज़ोर नहीं चला। मैं इसे धन्य और बड़ा मानता हूं। राजा ने उसे प्रणाम किया। उसी के साथ राजा को होणी ने अपने शाप से मुक्त कर दिया। राजा के कटे हुए हाथ-पैर जुड़ गए तथा कुष्ठ भी हट गया। यह देखकर राजा और रानी दोनों बहुत प्रसन्न हुए। उनका राजपाठ भी पुनः उसी प्रकार हो गया जैसे पहले था। रानी के साथ राजा अपने महल में चला गया और प्रजा ने उनका हार्दिक सत्कार किया।

राजा दिन के समय राजपाठ सम्भालता और रात में वेश बदलकर अपनी

नगरी का भ्रमण करता था। कोई भी दुःखी, बीमार, लाचार हो तो उसकी सेवा करता तथा कई रहस्यमय प्रकरणों की छानबीन भी करता ताकि वह प्रजा को सच्चा न्याय दे सके।

राजा के महल में 32 सिंहासन थे जो कि हीरे, मोती, सोना, चांदी से जड़े हुए थे। एक दिन राजा वेश बदलकर जंगल की ओर जा रहा था तो रास्ते में कुछ ग्वालों को पशु चराते देखा और वहीं पर बैठकर उनका खेल देखने लग गया। कुछ ग्वाले इधर-उधर दौड़ रहे थे और कुछ अपना खेल खेल रहे थे।

एक ग्वाला राजा बना हुआ था दूसरा मंत्री बना हुआ था। तीसरा सिपाही बना हुआ था और चौथा चोर बना हुआ था। सिपाही चोर को पकड़कर ग्वाला राजा के पास ले आया और राजा से कहा कि राजा यह चोर है इसने बहुत माल चोरी किया है। इसको क्या सजा मिलनी चाहिये? तब ग्वाला राजा ने कहा कि इसके हाथ-पैर काटकर जंगल में फेंक दो।

ग्वालों का यह खेल राजा को बहुत पसन्द आया। उसने ग्वालों को अपने पास बुलाया और उनसे कहा कि वह पुनः वह खेल खेले लेकिन ग्वाले बिल्कुल अनजान बन गए जैसे उन्हें उन बातों को ज़रा भी ख्याल न हो। राजा ने पुनः ग्वालों को वही खेल उसी स्थान पर करने के लिये कहा जहां वह पहले खेल रहे थे तो ग्वालों की बुद्धि पुनः उसी प्रकार काम करने लगी। वह ग्वाल राजा बहुत बड़ी-बड़ी बातें और फैसले करने लगा। जिसे सुनकर राजा बहुत हैरान हुआ और उसने जिस पत्थर पर बैठकर ग्वाल राजा फैसला सुना रहा था, के नीचे वाली जगह को उखाड़ कर देखना चाहा।

राजा ने उस स्थान की खुदाई करवानी प्रारम्भ कर दी। कुछ नीचे उतरने पर एक सोने की पौड़ी दिखाई दी जिस पर राजा पैर रखने ही वाला था कि एक आकाशवाणी हुई, 'राजा ठहरो पहले मेरे प्रश्न का उत्तर दो तभी आप आगे बढ़ सकते हें। राजा ने प्रश्न का उत्तर दे दिया। तभी दूसरी पौड़ी निकल आई राजा ने उस पर भी पैर रखना चाहा लेकिन फिर आकाशवाणी ने उसे रोक लिया 'राजा ठहरो, पहले मेरे दूसरे प्रश्न का उत्तर दो तभी आप आगे बढ़ सकते हैं।'

राजा ने दूसरे प्रश्न का उत्तर भी दे दिया। इसी प्रकार धरती के अन्दर 32 पौड़ियां निकलीं और सभी ने प्रश्न पूछे राजा ने पूछे गए प्रश्नों के सही उत्तर दे दिये। जिन्हें 32 पौड़ियां और 36 कलियां नाम से पुकारा जाता है जिसका वर्णन 'सिंहासन बत्तीसी' नामक ग्रंथ में भी मिलता है। इसी प्रकार राजा प्रश्नों का उत्तर देते-देते पाताल लोक पहुंच गया और धरती में समा गया। राजा विक्रमादित्य की बहुत-सी कहानियां हैं। जिनमें सिंहासन बत्तीसी और 'वेताल पच्चीसी' आदि कथाएं प्रसिद्ध हैं। ●

विधिमाता का लेख

✍ प्रेमला ठाकुर

महाराजा विक्रमाजीत एक धर्मात्मा राजा था। उसके राज्य में अन्न-धन की कोई कमी नहीं थी। राजा हर रोज प्रातः दान देता था। जो एक बार दान लेता था उसे दूसरी बार दान लेने की ज़रूरत नहीं रहती थी, क्योंकि राजा एक बार में ही इतना दे देता था कि वह समृद्ध हो जाता।

एक बार की बात है कि राजा के दरबार में एक अति गरीब ब्राह्मण आया। उसे देखते ही विक्रमाजीत चौंक पड़े। क्या इतना दीन गरीब व्यक्ति भी मेरे राज्य में रहता है? मेरे राजा होने का क्या अर्थ! मुझे तो डूब मरना चाहिये। रानी ने समझाया शायद यह पहले किसी दूसरे राज्य में रहता हो। जब इसकी इतनी दीन दशा हुई तो आपकी ख्याति सुनकर आया होगा कि यहां उसकी विपत्ति का अंत हो जाएगा। राजा ने उसे खूब धन दिया और कहा अब तू मजे से ज़िन्दगी गुज़ार। कुछ महीने बीत गए। एक दिन वह ब्राह्मण फिर उसी दशा में दरबार में पहुंचा।

राजा ने उससे पूछा इतना धन पाने के बाद आज तुम फिर उसी दशा में क्यों हो। ब्राह्मण हाथ जोड़कर बोला हजूर उस दिन जब मैं महल से खुशी-खुशी घर जा रहा था, रास्ते में मुझे एक पेड़ के नीचे छाया देखकर आराम करने की इच्छा हुई। मैंने पानी पिया और छाया में बैठ गया। मेरी चिन्ता खत्म हो चुकी थी, इसलिये वहां एकदम से मुझे नींद आ गई।

जब थोड़ी देर बाद उठा तो देखा कि मेरी धन की गठरी कोई ले गया है। मैं रोता-चिल्लाता रहा। कुछ दिन उसी हाल में रहने के पश्चात् अब फिर आप के दरबार में पहुंचा हूं। राजा ने पुनः उसे खूब धन दिया। इस बार भी उसके साथ वही बीता। ब्राह्मण ने इस बार भी अपनी दशा राजा को सुनाई।

राजा की समझ में नहीं आता कि बात क्या है? एक दिन राजा सैर करते-करते उस वृक्ष तक पहुंचा और बोला, हे वृक्ष देवता! तू बता ब्राह्मण हर बार यहीं लूटा जा रहा है, क्या कारण है? वृक्ष ने कहा, उसे होणी (होनहार) पड़ी है। होनहार को तो

विधि माता भी नहीं टाल सकती। राजा ने पूछा होणी कैसी होती है? आज मैं उसे मार दूंगा। ज्यों ही राजा ने तीर कमान उठाए उतने में होणी सामने प्रकट हो गई। महाराज यह कैसा न्याय? कर्म, धर्म, होणी, करतूत यह चार तो विधि माता हर प्राणी के साथ भेजती है और हम अपना-अपना काम करते हैं।

इस समय ब्राह्मण पर मेरा अधिकार है। मुझे अपना काम करने दो। राजा ने कहा तुम ब्राह्मण को छोड़ सकती हो? होणी ने कहा, प्रजा का बोझ यदि राजा वहन करे तो मुझे क्या एतराज? और होणी राजा को व्याप गई। ब्राह्मण अब समृद्ध हो गया।

राजा बड़ा चिंतित रहने लगा कि दान, धर्म मर्यादा के अनुसार जीवनयापन करने के बाद भी होणी कैसी लगेगी? पर वह डरपोक भी नहीं था। जब अपना रंग दिखाएगी, देख लेंगे। कैसे वह रंग दिखाती है, इसकी उत्सुकता भी मन में थी।

एक दिन प्रातः वेष बदलकर राजा घोड़े पर सवार होकर घूमने निकला। उसे रास्ते में एक बूढ़े बीमार आदमी का हाथ पकड़े एक लड़की मिली। लड़की ने राजा से कहा हे राहगीर! मेरे पिता बहुत बीमार हैं। बीमारी के कारण चल भी नहीं सकते। यदि आप घोड़ा कुछ देर के लिये देते तो हम वैद्य से दवा ले आते। राजा ने घोड़ा उन्हें दे दिया। दोनों घोड़े पर बैठ गए। लड़की ने रस्सी थामी और बीमार बूढ़ा डंडा लेकर राजा को मारने लगा। उसने राजा को बेहोश करके एक नाले में फेंक दिया। स्वयं घोड़े पर चढ़कर भाग गया।

महाराज लाचार नाले में गिरा पड़ा था। उसका शरीर जख्म और सर्दी के कारण अकड़ गया था। अब उसे जीवन की आशा खत्म हो गई। दो-तीन दिन बाद उसे ऊपर रास्ते से गुज़रती एक महिला दिखी। राजा ने उसे आवाज़ दी पर ज़ख्मी होने के कारण केवल कराह ही निकली। वह औरत तेलिन थी जो तेल बेचने जा रही थी। उसने कराह सुनी और नीचे उतरकर उसे देखा। राजा को वह पहचानती नहीं थी, लेकिन मानव-धर्म निभाते हुए राजा के जख्मों पर तेल डाला और घास आदि का बिछौना बनाकर सर्दी से कुछ राहत पहुंचाई। राजा ने उसे दुगने भाव तेल बिकने का आशीर्वाद दिया। उस दिन तेलिन का तेल दुगने भाव बिका और वह खुशी-खुशी घर लौटी।

रात को जब दोनों पति-पत्नी खा-पीकर बैठे तो तेलिन ने सुबह की घटना और आशीर्वाद की बात अपने पति को सुनाई।. तेली ने कहा ज़रूर विपदा का मारा कोई सिद्ध पुरुष होगा। उसने कहा कि राजा विक्रमाजीत के राज में ऐसा अभागा कौन होगा? वह तो वहां पड़ा-पड़ा मर जाएगा। हम सुबह उसे अपने घर ले आएंगे, और दो से तीन हो जाएंगे। तेली-तेलिन दोनों वहां गए और उसे अपने घर ले आए।

उसकी खूब सेवा चिकित्सा की जिससे वह कुछ दिनों में बिल्कुल स्वस्थ हो गया। तेली ने जब राजा से उसका नाम पूछा तो उसने अपना नाम विक्रू बतलाया। उसने अपनी व्यथा बतलाते हुए कहा कि वह धन कमाने घोड़े पर जा रहा था। रास्ते में डाकुओं ने उसका घोड़ा छीन लिया और उसे मार-पीटकर अधमरा करके नाले में फेंक दिया। आपकी कृपा से मैं यहां आकर स्वस्थ हुआ, नहीं तो वहीं दम तोड़ने की हालत में पंहुच गया था।

राजा विक्रमाजीत के सत्य धर्म के प्रताप से तेली को अपने तेल के कारोबार में लगातार मुनाफा होता रहा और वह सेठ बन गया।

उधर कई दिनों से राजा के लापता होने पर राजकाज चलाने के लिये नया राजा बनाने की योजना बनने लगी। मंत्रियों ने मंत्रणा करके निर्णय लिया कि प्रातः उषा काल में जो अनजाना व्यक्ति नगर में सबसे पहले प्रवेश करेगा, उसे अपना नया राजा बना देंगे।

उस दिन संयोग से तेल कुछ ज़्यादा होने के कारण राजा विक्रमाजीत भी तेल उठाकर तेली के साथ नगर की ओर चल पड़ा। उषा काल में वे नगर के प्रवेश द्वार पर पहुंचे। पहरेदार उनको पकड़कर मंत्री के पास ले गए। तेली ने हाथ जोड़कर कहा कि हमने कोई अपराध नहीं किया है। हमें क्यों कैद कर रहे हो? मंत्री ने कहा सच बताओ तुम दोनों में से पहले किसने नगर में प्रवेश किया।

राजा विक्रमाजीत ने तेली को बचाने के उद्देश्य से अपने को अपराधी सिद्ध करने के लिये कहा कि नगर में पहले मैंने प्रवेश किया है। उसी समय मंत्री और सभी राज कर्मचारी एकत्र हुए। राजा की शक्ल-सूरत बदल चुकी थी। कोई उसे पहचान नहीं सका। वह उनके लिये नगर में प्रविष्ट होने वाला उस दिन का पहला अजनबी था। उन्होंने राजपुरोहित को बुलाया और उसका राजतिलक करवाया।

तब उस समय वहां होणी प्रकट हुई। राजा यह सब होणी का खेल है, लेकिन तुम धन्य हो! प्रजा के दुख निवारण के लिये उनका दुख तुमने अपने ऊपर ले लिया। तुम सच्चे प्रजावत्सल हो। यह कहकर होणी ओझल हो गई। प्रजा के सामने राजा विक्रमाजीत का रहस्य खुल गया। प्रजा खुशी से झूमने लगी। नौबत पर मंगल धुन बजने लगी। सब ओर राजा विक्रमाजीत की जय-जयकार होने लगी। मैं भी वहां सबके साथ खुशियां मनाकर वापिस घर लौटी और अब वह वहां और मैं यहां।

●

कर्ण और विक्रमादित्य

✍ रमेश जसरोटिया

एक देश में एक राजा राज करते थे जिनका नाम विक्रमादित्य था। वह बहुत बड़े दानी होने के साथ-साथ न्यायप्रिय भी थे। हवन, यज्ञ करना, दान-दक्षिणा देना और गरीबों को भोजन कराना उनका प्रतिदिन के कर्म में सर्वोपरि था। एक रोज राजा विक्रमादित्य अपने दरबार में बैठे दरबारियों से विचार-विमर्श कर रहे थे कि हंसों का एक जोड़ा उड़ता हुआ आया और राजा के पैरों में गिरकर रोने लगा। हंसों को इस प्रकार रोते देखकर राजा को आश्चर्य हुआ। उन्होंने हंसों की पीठ पर प्रेमपूर्वक हाथ फेरा, उन्हें सांत्वना दी और इस प्रकार रोने का कारण पूछा।

हंसों ने कहना शुरू किया—राजा विक्रमादित्य! हम दूर हिमालय के वासी हैं। हमारे देश में ऊंची-ऊंची पर्वतशृंखला और मध्य में एक विशाल झील है जिसे मानसरोवर कहते हैं। इसी झील में हम सुखपूर्वक रहते और इसके मोती चुनकर अपना पेट भरते थे।

यह सिलसिला सदियों तक ऐसा ही चलता रहा। परन्तु हे राजन्! पिछले दो-तीन वर्षों से काल हम पर मेहरबान नहीं है। वहां भयंकर सूखा पड़ रहा है, झील सूखती जा रही है और मोती न के बराबर मिल रहे हैं। हंसों की आबादी ज्यादा और मोती की पैदावार कम होने के कारण भुखमरी का आलम है। कई हंस तो मर चुके हैं और कुछ मौत की कगार पर हैं। ऐसी स्थिति को देखते हुए हम युवा हंसों ने एक गुप्त बैठक की और फैसला किया कि झील के बचे-खुचे मोती बूढ़े और बच्चों के लिये रहने दिये जाएं और सभी जवान हंस तब तक किसी दूसरे स्थान जाकर जीवनयापन करें जब तक हालात सामान्य नहीं हो जाते। इतना कहकर वह हंस छटपटाने लगा और बेहोश होकर एक ओर लुढ़क गया।

हां जब राजा ने हंस को बेहोश होते देखा तो झट से नौकरों से पानी मंगवाया और हंस को छींटे मारे। पानी के छींटे पड़ते ही हंस को होश आ गया। राजा ने फिर

मोतियों से भरा थाल मंगवाया और हंसों से कहा—पहले तुम इन मोतियों को चुग लो फिर अपना दुःख सुनाना। हंस भूखे तो थे ही, झट से मोती खाने लगे। जब उनका पेट भर गया तो राजा को आशीष देते कहने लगे—हे राजन! तुम बहुत ही दयालु हो। तुम सैकड़ों वर्ष तक जीओ और लाखों सालों तक तुम्हारा नाम रहे।

राजा विक्रमादित्य ने कहा—प्रिय हंस! तुम्हारी तबीयत यदि अब ठीक हो तो आगे का हाल सुनाओ।

उस हंस ने कहना आरम्भ किया—राजन! इस प्रकार हम मानसरोवर से उड़ चले। रास्ते में हमने आपकी जय-जयकार सुनी तो आपके दरबार में आ पहुंचे। यही हमारी कथा है। इस व्यथा को सुनकर राजा विक्रमादित्य ने उनके ठहरने का उत्तम प्रबंध किया और हुक्म दिया कि उन्हें भोजन में सुच्चे मोती ही दिये जाएं।

हंस-हंसनी महल में आराम से रहने लगे। इस प्रकार रहते जब उन्हें महीना होने को आया तो हंसनी ने कहा—

हे हंस! हमें यहां ठहरे हुए एक महीना हो रहा है। हम तो खूब मौज-मस्ती मना रहे हैं और वहां न जाने हमारे बच्चे और बुजुर्ग कैसे होंगे। हंस ने कहा—तुम ठीक कहती हो। अब हमें अपने देस वापस चलना चाहिये। हंसनी ने कहा—तो चलो महाराज विक्रमादित्य से आज्ञा लेते हैं।

दोनों दरबार में उपस्थित हुए और वापस जाने की आज्ञा मांगने लगे। महाराज विक्रमादित्य ने उनकी बात सुनी और कुछ देर सोचकर दरबारियों को आदेश दिया कि इन दोनों को खूब सारे मोती दिये जाएं जो इतने हों कि ये रास्ते में भोजन कर सकें और यदि इनके देस में अभी भी अकाल पड़ा हो तो वहां जरूरतमंदों की मदद भी कर सकें। हंस-हंसनी को तत्काल दो थैले भरकर सुच्चे मोती दे दिये गए। दोनों बहुत प्रसन्न हुए और राजा विक्रमादित्य की जय-जयकार करते हुए कहने लगे—हे राजाओं के राजा! तुम सचमुच सबसे बड़े दानी और महापुरुष हो। तुम लाखों वर्षों तक इसी प्रकार राज करते रहो, यही हमारी प्रार्थना है।

राजा विक्रमादित्य ने हंसों को शुभकामनाएं देते हुए सलाह दी कि सारे रास्ते चुपचाप उड़ान भरना और चाहकर भी राजा विक्रमादित्य की जय-जयकार मत करना, नहीं तो हो सकता है किसी मुसीबत में पड़ जाओ।

हंस, हंसनी अपने गले में मोतियों से भरे थैले लटकाए, उड़ चले। दोनों को यह बात समझ नहीं आ रही थी कि महाराजा विक्रमादित्य की जयकार करने पर कैसे मुसीबत आ सकती है। दोनों ने सोचा कि बड़ा आदमी कभी अपना बड़प्पन प्रदर्शित नहीं करता है, शायद इसीलिये महाराजा ने रास्ते में अपनी जयकार करने से मना कर दिया है। परन्तु राजा का बड़प्पन तो दोनों के दिलों में घर कर चुका

था। राजा द्वारा की गई भलाई को वे कैसे भूल सकते थे! दोनों जोर-जोर से 'महाराजा विक्रमादित्य की जय' करते अपने देश की ओर उड़ चले।

बहुत दूर रास्ते में कर्ण नामक राजा का राज्य पड़ता था। राजा कर्ण को भी दानी माना जाता था। वह रोज सवा मन सोना गरीबों को दान करके भोजन करता था। उड़ते-उड़ते हंस थक कर एक पेड़ पर विश्राम करने बैठे और राजा विक्रमादित्य की जयकार करने लगे।

हंसों को 'महाराजा विक्रमादित्य की जय' बोलते सुनकर राजा कर्ण के सैनिकों को अचम्भा हुआ। वे सोचने लगे यह कौन राजा विक्रमादित्य है जिसकी पक्षी भी जय कर रहे हैं? सबसे बड़ा दानवीर तो हमारा राजा कर्ण है, उसकी जय होनी चाहिये। ये हंस कहीं शत्रु देश के तो नहीं जो हमारे राजा को नीचा दिखाने के लिये किसी विक्रमादित्य की जय-जयकार कर रहे हैं। सैनिकों को गुस्सा आ गया। झट से उन्होंने एक जाल मंगवाया और हंसों पर फेंककर उन्हें बंदी बनाकर राजा कर्ण के पास ले गए।

राजा कर्ण ने सारी बात सुनी और हंसों को तत्काल कैद करने की आज्ञा दी। हंसों को पिंजड़े में बंद करके एक कोठरी में डाल दिया गया। कोठरी काफी अंधेरी थी। उसमें बस एक दरवाजा और एक झरोखा था। उन्हें खाने के लिये घासपात डाला जाता और एक छोटे कटोरे में पानी भरकर रख दिया जाता। हंस घास तो खाते नहीं। उन्होंने राजा विक्रमादित्य द्वारा दिये मोती घास में छुपाकर रख दिये और रोज थोड़े-थोड़े मोती चुपचाप खाने लगे। इस प्रकार कई दिन बीत गए। मोती खत्म होने को आए और हंसों की चिंता बढ़ने लगी।

एक दिन हंसनी ने कहा—हे हंस! हम इसी प्रकार चुपचाप पड़े रहे तो हमारा मरना निश्चित है। हमें यहां से निकलने की कोई तरकीब करनी चाहिये। हंस ने उत्तर दिया—एक तो यहां से निकलना मुश्किल है फिर मान लो कि हम यहां से भाग भी जाएं तो ज्यादा दूर नहीं जा पाएंगे। राजा कर्ण के सैनिक रास्ते में ही पकड़ लेंगे और शायद इससे भी अंधेरी कोठरी में हमें डाल दिया जाए। घास हम खा नहीं सकते और मोती खत्म हो रहे हैं। फिर क्या किया जाए? दोनों सोचते रहे।

हंसनी ने कहा—हम इस पिंजरे को तोड़ने की कोशिश करते हैं, यदि हममें से एक किसी प्रकार यहां से निकलकर राजा विक्रमादित्य के पास पहुंच पाए तो इस मुसीबत से छुटकारा मिल सकता है। दोनों पिंजरे को तोड़ने लगे। काफी प्रयत्न के पश्चात् आखिरकार एक सलाख अपने स्थान से हिल ही गई।

तब हंस ने कहा—हे हंसनी! मैं यहां से उड़कर महाराजा विक्रमादित्य के पास जाता हूं, तुम इस प्रकार बैठना कि लगे हम दोनों आराम कर रहे हैं। हंसनी ने

कहा—लेकिन हे हंस! तुम रातभर में ही यह काम खत्म करके सुबह यहां पहुंच जाना। नहीं तो हो सकता है हम फिर किसी बड़ी मुसीबत में फंस जाएं।

हंस पिंजरे से निकलकर उस झरोखे से होता हुआ उड़ चला। आधी रात को वह विक्रमादित्य के पास पहुंचा और अपनी व्यथा बयान की। विक्रमादित्य ने कहा—मैंने तुम्हें पहले ही मेरी जयकार करने से मना किया था। खैर जो हुआ सो हुआ। तुम वापिस जाओ मैं भी दो-एक दिनों में वहां पहुंचता हूं। हंस उड़ता हुआ वापस पिंजरे में आया और महाराजा विक्रमादित्य की प्रतीक्षा करने लगा।

उधर विक्रमादित्य वेश बदलकर कर्ण के दरबार में पहुंचा और उससे नौकरी मांगी। कर्ण ने विक्रमादित्य के डीलडौल और चेहरे के तेज से प्रभावित होकर उसे अपना अंगरक्षक बना दिया। अब विक्रमादित्य का काम कर्ण के शयनकक्ष के बाहर खड़ा होकर पहरेदारी करना था। विक्रमादित्य रोज देखता कि रात्रि के तीसरे प्रहर कर्ण चुपचाप महल से निकलकर कहीं जाता है और चौथे प्रहर एक गठरी उठाए वापस आ जाता है।

विक्रमादित्य ने इस भेद को जानने का निश्चय किया। एक रात जब कर्ण महल से निकला तो विक्रमादित्य भी उसके पीछे हो लिया। चलते-चलते कर्ण एक वीराने स्थान पर नदी के पास पहुंचकर वस्त्र उतारने लगा। पेड़ों के झुरमुट के पीछे छिपा राजा विक्रमादित्य सब देख रहा था। उसने देखा पास ही नदी के किनारे बैठा एक साधु जप कर रहा है, सामने खूब आग जल रही है और उस पर रखे एक बहुत बड़े कड़ाहे में तेल खौल रहा है। उधर कर्ण ने अपने सारे वस्त्र उतारे और कड़ाहे में छलांग लगा दी। खौलते हुए तेल में गिरने के कुछ देर पश्चात् कर्ण का भुना हुआ शरीर कड़ाहे में तैरने लगा। साधु ने हिला-डुलाकर उस शरीर को देखा फिर एक बहुत बड़े चिमटे से उसे निकालकर अपने सामने सजाया और भुना हुआ मांस नोच-नोचकर खाने लगा।

मांस खाते वह हड्डियों का ढेर एक ओर लगा रहा था। जब उसने सारा मांस खा लिया तो पेट पर हाथ फेरकर एक लम्बी डकार ली और पास ही पात्र में रखी 'मरतसिंज्जी' को उन हड्डियों के ढेर पर छिड़का तो राजा कर्ण राम-राम करके उठ खड़ा हुआ। फिर उस साधु ने अपने थैले से पारस पत्थर निकालकर लोहे में रगड़ा और वह लोहा सोना बन गया। राजा कर्ण ने उस सोने को गठरी में बांधा और उठकर महल की ओर चल पड़ा। राजा विक्रमादित्य यह सारा नज़ारा देख रहा था। अब उसे रोज सवा मन सोना दान करने के भेद का पता चल चुका था। वह झट से वहां से भागकर महल पहुंचा और पहरेदारी करने लगा।

थोड़ी देर बाद कर्ण भी गठरी उठाए महल में दाखिल हुआ और दान देने की

तैयारी में जुट गया। अगले रोज रात को विक्रमादित्य ने कर्ण के भोजन में बेहोशी लाने वाली बूटी मिला दी। कर्ण ने भोजन किया और गहरी नींद सो गया। उधर विक्रमादित्य ने नमक और भांति-भांति के गरम मसाले इकट्ठे किये और उन्हें एक पोटली में रखकर रा.ि को ठीक उसी प्रकार महल से निकला जैसे कर्ण जाया करता था।

चलते-चलते वह उसी स्थान पर पहुंचा जहां साधु धूनी रमाए बैठा था। विक्रमादित्य ने अपने सारे वस्त्र उतारे, नदी में खूब रगड़कर स्नान किया। फिर उस्तरे से अपने शरीर में कई चीरे लगाए पोटली से मसाले नमक निकालकर उन्हें चीरों से भरा और तेल के कड़ाहे में छलांग लगा दी। कुछ देर बाद जब उसका शरीर पककर तेल में तैरने लगा तो साधु ने चिमटे से उठाकर उसे खाना आरम्भ किया। साधु को आज मांस बहुत ही स्वादिष्ट लग रहा था।

उसे ऐसा स्वाद पहले कभी नहीं आया था। उसने हड्डियों पर मरतसिंज्जी छिड़की। राजा विक्रमादित्य राम-राम करके जीवित हो उठा। साधु ने राजा से कहा—मैं कई सालों से तुम्हारा मांस खा रहा हूं पर जैसा स्वाद आज आया पहले कभी नहीं आया।

आज मैं बहुत प्रसन्न हूं। तुम सोने के साथ-साथ जो भी वर मांगोगे, मैं दूंगा। राजा ने कहा—हे साधु! यदि सचमुच तुम प्रसन्न हो तो अपने गुरु की कसम खाओ कि मैं जो कुछ मांगूंगा, तुम दोगे। साधु ने कसम खाई। तब राजा ने कहा—एक तो मुझे वह पारस पत्थर दो जिससे तुम सोना बनाते हो और दूसरे तुम सदा के लिये यह अघोर विद्या छोड़कर, इस स्थान से चले जाओ। साधु ने तथास्तु कहा और पारस पत्थर देकर वहां से चला गया।

वहां महल में राजा कर्ण भोजन में बेहोशी की बूटी खाने के कारण काफी देर तक सोता रहा। जब उसकी नींद टूटी तो दिन काफी चढ़ आया था। वह झट से उठा और जंगल की ओर भागा। वहां जाकर क्या देखा कि वहां कोई नहीं है, धूना बुझा है और कड़ाह उल्टा पड़ा है। यह देखकर कर्ण हैरान-परेशान हो गया और भारी मन से महल वापस चल पड़ा।

साधु का इस प्रकार आलोप हो जाना कर्ण के लिये गहरा सदमा था। रोज दान के लिये सोना कहां से मिलेगा—यही चिंता उसे खाए जा रही थी। कर्ण ने अपने खजाने से प्रतिदिन सवा मन सोना दान देना आरम्भ किया। जैसे-जैसे सोना समाप्त होता, कर्ण की चिंता बढ़ती जाती।

उसने सोचा—यदि ऐसे ही सोना जाता रहा तो एक दिन यह बिलकुल खत्म हो जाएगा। तब कहां से दान करूंगा। और बिना दान भोजन कैसे करूंगा? इसी

उधेड़बुन में वह एक दिन अपने कक्ष के चक्कर काट रहा था तो महाराजा विक्रमादित्य ने उसकी चिंता का कारण पूछा। कर्ण ने उसे समस्या से अवगत कराया। विक्रमादित्य ने कहा—हे राजन! मैं आपको इससे मुक्त कर सकता हूं यदि मुझे वचन दो कि जो मैं मांगूंगा, आप मुझे देंगे।

कर्ण सोच में पड़ गया। उसे डर सताया कि यह कहीं उसका राज्य न मांग ले या कुछ और जिसे दे पाना सम्भव ही न हो। फिर उसे सवा मन सोना दान देने का संकल्प याद आया। उसने सोचा यदि दान न दे पाया तो उसकी प्रजा क्या कहेगी! आज जो उसे महादानी कह रहे हैं, कल धिक्कारेंगे। ऐसा अपमान वह कैसे सह पाएगा। इससे तो बिना राजपाठ के रहना ही अच्छा।

काफी सोच-विचार के पश्चात् कर्ण ने विक्रमादित्य को वचन दे ही दिया। तब महाराजा विक्रमादित्य ने पोटली से पारस पत्थर निकाला और कर्ण को दे दिया। पारस पाकर कर्ण बहुत प्रसन्न हुआ। उसने विक्रमादित्य से कहा—मांगो जो तुम्हें चाहिये। विक्रमादित्य ने कहा—राजन! आपने दो हंसों को कैद कर रखा है। पारस पत्थर आप रख लें और बदले में उन हंसों को छोड़ दें।

कर्ण ने आश्चर्य से विक्रमादित्य को देखा और पूछा—यह पारस पत्थर जो तुम्हें जितना चाहो सोना दे सकता है, तुम्हें संसार का सबसे धनी व्यक्ति बना सकता है। यह पत्थर जिसका कोई मोल नहीं है, इसके बदले तुम उन हंसों को क्यों छुड़वाना चाहते हो?

विक्रमादित्य ने उत्तर दिया—हे दानवीर श्रेष्ठ राजा कर्ण! पहली बात तो यह कि एक ओर तो तुम प्रतिदिन सवा मन सोना दान करके पुण्य कमा रहे हो और दूसरी ओर उन निरीह पक्षियों को कष्ट देकर पाप के भागीदारी बन रहे हो। मैं नहीं चाहता कि तुम्हारे जैसा संसार का सबसे बड़ा दानी व्यक्ति पाप-कर्म कमाए। और दूसरी बात यह कि ये दोनों हंस कुछ दिनों तक मेरे अतिथि रह चुके हैं, मैं इन्हें मुसीबत में नहीं देख सकता। फिर मैंने इन्हें कैद से छुड़ाने की प्रतिज्ञा भी ली है। अतः हे दानवीर कर्ण! संसार में कोई भी वस्तु हंसों की रिहाई से बढ़कर मूल्यवान नहीं है।

राजा कर्ण आश्चर्यचकित विक्रमादित्य को देख रहा था। कुछ देर विचार करने के पश्चात् उसने कहा—अब मैं पहचान गया हूं तुम ही महाराजा विक्रमादित्य हो, तुम महान हो, संसार में तुमसे बड़ा कोई नहीं है। मुझे क्षमा करो मैंने तुमसे चाकरी करवाई।

इस प्रकार राजा कर्ण बार-बार क्षमा-याचना करने लगा। कर्ण को ऐसा करते देख विक्रमादित्य ने उसे उठाकर अपने सीने से लगाते हुए कहा—हे दानवीर कर्ण!

संसार में व्यक्ति अपने कर्मों से ही श्रेष्ठ और निकृष्ट बनता है। हमें अपनी परम्पराओं का निर्वाह करते हुए सदा अच्छे कर्म करते रहना चाहिये। हे राजन! आपका कर्म आपके और मेरा कर्म मेरे व्यक्तित्व का आईना है।

कर्ण ने तत्काल उन दोनों हंसों को कैद से छोड़ने का हुक्म दिया और ढेर सारे मोती देकर उन्हें विदा किया। हंस प्रसन्नतापूर्वक अपने घर की ओर महाराजा विक्रमादित्य की जय बोलते उड़ चले। विक्रमादित्य भी दो दिन कर्ण के अतिथि रहने के बाद अपने राज्य की ओर निकल पड़े।

☆ ☆ ☆